ओ३म्

नमः सर्वात्मने श्रीजगदीश्वराय

श्रीमत्

दयानन्ददिग्विजयार्क

द्वितीय खण्ड

यह सद् ग्रन्थ ज़िला फ़र्रुखाबाद के ... पाठशालाधीश और

आर्य समाज मीमांसक सभा के संस्थापक व सभासद पंडित

गोपाल शास्त्री शर्म्मा

ने

सकलार्य्यावर्तनिवासियों के प्रमोद और शंकितों

 के

शंकानिवारणार्थ

बनाया

श्रीमत्फ़तेगढ़

लनैयालिने यंत्रालय में मुन्शी बिशुनस्वरूप के प्रबन्ध

से मुद्रित कराया

संवत् १९४४ विक्र०

द्वितीयबार २००० जिल्द	सन् १८८७ ईस्वी नं० ५ लिखनं तुलसीराम कांपीनवीस	मौल्यप्रति पुस्तक ।।।) महसूल ॥)

सूचना

विदित हो कि इस दिग्विजयार्कीय द्वितीयांक में भी छः ही मयूख (अध्याय) नीचे लिखे नामानुसार यथा नाम तथा गुण हैं और प्रत्येक मयूख में दो२ तीन३ प्रकरण हैं॥

१	वेदोत्पत्ति वर्णनम्	४	श्रीमद्भाष्य प्रदर्शनम्
२	वेदानां नित्यत्व वर्णनम्	५	सामाजिक चरित्र वर्णनम्
३	वेद संज्ञा विचार वर्णनम्	६	सामाजिक प्रबन्ध विवर्णनम्

विज्ञापन

समस्त आर्य समाज और यावत् सत्पुरुषों की सेवा में प्रार्थना है कि इस ग्रन्थ के तीनों खंडों के प्रचार करने में हो सके तहां तक पुरुषार्थ करें जिससे मनुष्यों का अनुराग श्रीमान् स्वामीजी महाराज के चरणों में बढ़े सिवाय इसके जिनके पास यह ग्रन्थ पहुंचे वे तुरन्त कृपा करके एक कार्ड के द्वारा पुस्तक प्राप्ति की सूचना ग्रन्थ कार को कर देवें और जिनके यहां जो कुछ ग्रन्थ कार का हिसाब अब तक का हो वह डाक व्यय सहित जोड़ कर प्राप्ति पत्र में लिख दिया करें पश्चात् जिनके यहां हिसाब रुपये से कम का हो वे ।) का टिकट और विशेष हो तो मनी आर्डर द्वारा वा जिस प्रकार हो सके शीघ्र भेजें जिससे इतर उपकारक कामों की सिद्धि हो, द्वितीय बात यह है कि यदि कोई धन रहित धर्मात्मा वा उत्साही विद्वान् इस ग्रन्थ के किसी खंड के देखने दिखाने की अपने शुद्धान्तःकरण से न लालसा रखता हो तो वह अपना प्रार्थना पत्र व अपेक्षित पुस्तक का डाक महसूल किसी आर्य समाज के मंत्री की सम्मति से मेरे पास भिजवावे जिससे कि विना मौल्य वह खंड उसके समीप भेजने में आवे इति॥

ॐ

ततसत्यम्

वसुरामाङ्कभूवर्षे श्रावणास्यसितेदले॥
नवम्यांगुरुवारेच ग्रन्थारम्भः कृतोमया।

अथ

श्रीमत् दयानन्द दिग्विजयार्कद्वितीय

खण्डारम्भः

मंत्र

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमा क्षभिर्यजत्राः॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥१॥

शंनो वातः पवतां शंनस्तपतु सूर्यः॥ शंनः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो ऽभिवर्षतु॥२॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति॥ शंनो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥३॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

प्रार्थना

सर्वात्मा सच्चिदानन्दो विश्वाद्यो विश्वकृद्विभुः॥
भूयात्तमां सहायोनः सर्वशोन्यायकृच्छुचिः १॥

प्रियं विश्वद्वर्णैः सुपदवृतवृत्तैर्विरचयन्
भ्रमध्वान्तध्वंसानबुधविधुबोधं विधुरयन्
मनुध्यन् गोपाला दनुग प्रदरत्नाञ्चरञ्जित
स्तव ज्ञानोदेदिग्विजयकनिमार्को विजयताम्

प्रियभ्रातृगण

श्रीजगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना के पश्चात् विदित हो कि प्रथमाङ्क द्वारा पूर्ण प्रतापी श्रीमान स्वामीजी महाराज की दिनचर्य्या और सर्वत्र पुराणी जैनी कुरानी किरानी आदि मत वादियों पर विजयी होना आदि बहुतसा वृत्तान्त संक्षेप रीति से वर्णन हो चुका है अब इस द्वितीयाङ्क द्वारा ग्रन्थ रचना आदि उनके बहुत से अद्भुत चरित्र वर्णन किये जाते हैं निश्चय है कि इस ग्रन्थ को देख सत्पुरुषों को बड़ा ही हर्ष और लाभ होगा जिनका पूर्वार्जित अच्छा होगा उन को बहुत कुछ कर्तव्य भी सूझेगा॥

आर्यगण।

अब हम उन सद्ग्रंथों का नाम संक्षेप व्याख्या सहित लिख सूचित करते हैं जिन को श्रीमान् दिग्विजयी ने सनातन रीत्यानुसार महत्परिश्रम और व्यय से सर्वोप का गर्थ रचकर मुद्रित कराया वा करा रहे हैं ये सब ग्रन्थ वैदिक यंत्रालय प्रयाग और सब आर्य समाजों में मिलेंगे॥

अथ ग्रन्थ सूचना

१ समस्त वेद भाष्य भूमिका ५)

श्रीयुत स्वामीजी महाराज ने वेद भाष्य के आरम्भ से पूर्व यह ग्रन्थ चारो वेदों की १६ जिल्दों में रचा है मौल्य प्रति जिल्द ।/) आना इस में ऋग यजु साम अथर्व इन चारो वेदों का नित्यत्व और उनकी उत्पत्ति और उनमें से सब शास्त्रों का प्रादुर्भाव और बहुत से विषयों का आशय बहु प्रबल प्रमाणों सहित यथावत् सूचित किया है सिवाय इसके सृष्टिक्रम की व्यवस्था आदि भी लिखी है इस का कुछ निमूना अगाड़ी देख मिलेगा — मलिनांतःकरण वालों के व्यतिरिक्त कौन ऐसा होगा जो उसको देख सुन श्रीमान् के अपूर्व परिश्रम की सराहना न करेगा वा उसको वेदों पर श्रद्धा न उपजेगी॥

२ ऋग्वेद भाष्य चार वर्ष का १६ जिल्दों में ८)

इस वेद की संहिता के आठ अष्टक और प्रत्येक अष्टक में आठ२ अध्याय हैं उन सब के मंत्रों का अर्थ प्रथम पांच प्रकार से स्फुरण करके संस्कृत में फिर दो प्रकार भाषा में बाल बोध लिखा है

३ यजुर्वेद भाष्य चार वर्ष का २९ जिल्दों में ८)

इस वेद की संहिता में ४० अध्याय हैं उनके मन्त्रों का अर्थ ऊपर लिखे अनुसार संस्कृत और भाषा में लिखा है यह दोनों ग्रन्थ मास वार थोड़ा२ करके तैयार होकर ग्राहकों के पास पहुंचते हैं और प्रत्येक वेद भाष्य का वार्षिक मोल्य ४) रु० है

---

४ संध्योपासन संस्कृत और भाषा ।)

इस पुस्तक में ब्राह्मण आदि को जो नित्य कर्म अर्थात् दोनों काल संध्योपासन और होम हवन तथैव भोजन काल में बलिवैश्वदेव करना अवश्य कहा है उसका विधान और उनमें के गायत्री आदि मंत्रों का अर्थ लिखा है ॥

---

५ संध्योपासन संस्कृत =)

इसमें ऊपर लिखे सब काम केवल संस्कृत भाषा में लिखे हैं ॥

---

६ सत्यार्थ प्रकाश २॥)

इस ग्रन्थ में कुल बारह समुल्लास (अध्याय) हैं उनके द्वारा परमेश्वर के गुण, जगत् की उत्पत्ति, प्रलय और जो मनुष्यों को कर्तव्य सत्यासत्य विचार कहा है वह और मिथ्या मतों का खण्डन आदि बहुत से विषय सविस्तर वर्णन किये हैं

---

७ आर्योद्देश्य रत्न माला -)॥

यह एक छोटी सी पुस्तक है इस में आर्यों के लिये बहुत से मुख्य २ कामों का विचार करना लिखा है

८ आर्य्याभिविनय ॥)

इसमें दो वेदों के बहुत से ऐसे मंत्र लिखे हैं जिनके द्वारा परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना अर्थ समझ कर करने से मनुष्यों का परम कल्याण होता है

९ संस्कार विधिः १॥=)

जोकि ब्राह्मण आदि मुख्य वर्णों को गर्भाधान से लेकर मरण पर्यंत वेदों में लिखे १६ संस्कारों का अपने २ समय पर अवश्य मेव करना कहा है इस लिये उन सबों का विधान प्रत्येक वेद और उस्के सूत्र के अनुसार इस पुस्तक में सबके उपकारार्थ लिखा है

१० भ्रांति निवारण ।)

पंडित महेशचंद्र न्याय रत्ननाम के एक प्रसिद्ध विद्वान कलकत्ते के संस्कृत कालिज में बड़े अध्यक्ष हैं उनको श्रीयुत की बनाई हुई वेदों की भूमिका और भाष्य पर आधुनिक विद्या के अनुसार भ्रम उत्पन्न हुआ था उसका निवारण इस पुस्तक द्वारा स्वामी जी महाराज ने किया है

११ सत्यासत्य विवेक उर्दू =)

इसमें मेला चांदापुर ज़िला शाहजहांपुर की व्यवस्था (जिसका कुछ आशय अथमांक के छठे मयूख में हम प्रकाशित कर चुके हैं) विस्तार पूर्वक लिखी है

१२ सत्यधर्मविचार हिन्दी ≡)

ऊपर लिखे अनुसार इस को भी जानो

१३ गौतम अहिल्या की सत्य कथा —)

इसमें ठीक २ वृत्तान्त गौतम अहिल्या और इन्द्र वृत्रासुर का लिखा है जिन की मिथ्या कथा पुराणों में ऐसी लिखी हैं कि जिससे आर्यों को लज्जित होना पड़ता है

१४ शास्त्रार्थ काशी संस्कृत व भाषा ≡)

यह वह पुस्तक है जिसका कुछ विस्तार प्रथमांक के तीसरे २ मयूख में लिख चुके हैं

१५ शास्त्रार्थ काशी भाषा व उर्दू ≡)

इसको ऊपर लिखे अनुसार जानो अंतर यह है कि इसमें संस्कृत को छोड़ उर्दू लिखी है

१६ भ्रमोच्छेदन —)

राजा शिव प्रसाद । ३। सितारे हिन्द ने भ्रम जाल में पड़कर काशी के विद्वानों की कुछ कुमक से जब प्रथम निवेदन नाम की पुस्तक बना कर छपवाई और उसमें बहुत कुछ प्रलाप विप्रलाप लिख श्रीस्वामी विशुद्धानन्दजी के हस्ताक्षर कराय समस्त वेद भाष्य के ग्राहकों के पास भेज श्रीयुत से उत्तर चाहा तब श्री जी महाराज ने उसका इस पुस्तक के द्वारा यथावत् उत्तर लि·

खा और उनके लिये जैसा कि उचित था वैसा बहु कृपा पूर्वक उपदेश भी किया है। परन्तु शोक कि विषयासक्त राजा साहबको न उत्तर सूझा न शांति हुई हालां कि उनने इस पुस्तक को २२ बार पढ़ा तथापि स्मृति विभ्रम ही रहा सो यह बुद्धि नाशका और यह सर्व नाशका परम हेतु है अत एव घर २ फिरना पड़ा, वृथाधनव्यय और अपकीर्ति भी हुई, रात्रि को अच्छे प्रकार नींद भी नहीं आती होगी न वह सुन्दर कंपिनी बाग की बहार बहार दिखाती होगी जो सदैव उनके सन्मुख खड़ी रह ती है ॥ सत्य तो यह है कि "किं करोमि क्व गच्छामि" इस अष्टाक्षरी मंत्र का अहर्निशि जाप जनाब करते होंगे आर्यगण जभी तो कहा है " अविवेकः परमा पदां पदम् "

१७ वर्णोच्चारण शिक्षा =)

संस्कृत पढ़ने की आधुनिक प्रणाली श्रीयुत ने बहुत खराब देखकर उसकी सुधार के अर्थ यह प्रथम सुगम पुस्तक रची है

(१) १८ संस्कृत वाक्य प्रबोधः ।=)

वैसी ही यह दूसरी पुस्तक है भाषा पढ़े लोग भी इसके द्वारा शीघ्र संस्कृत में अभ्यास कर लेने सकते है

नोट (१) इस पुस्तक पर राजा साहब के सहचर बाबूराम कृष्णजी ने कुछ सशंकित हो लेख लिखा है उसकी अति कृपया कर बहुत से सम्पादकों के पास भेज कृतकृत्य भी हुए हैं कई सम्पादकों ने उनको पुस्तक प्राप्ति

१९ व्यवहार भानुः ‌)

उसी प्रकार की यह तीसरी पुस्तक परम उपयोगी है

२० गोकरुणा निधिः ‌)॥

इन दिनों इस देश में गाय बैल आदि पशु और बहुत से पक्षियों की हिंसा होने से भरत खंड वासियों की परम हानि देख करुणा सागर ने यह करुणा निधि रची है इसको सब राजे महाराजे और हमारी गवर्नमेन्ट अवश्य दर्पण बनावे जिस से राजा और प्रजा दोनों कल्याण पावें

लिख संतुष्ट कर दिया है उनमें से एक लेख की नक़ल आगे लिखते हैं

नक़ल

हमारे पास अबोधनिवारण नामक एक छोटी सी पुस्तक बनारस से आई है इसमें दयानन्द के खण्डन का पुराना राग रसरा बहुत कुछ गाया है पर वही निरी पंडिताई के ढंग पर दयानन्द के आशय पर कुछ भी दृष्टि नहीं है इनदिनों के शुष्क वैयाकरणियों की लड़ाई के ढंग पर उनके लेख में अशुद्धियां निकाल २ कर लिख दी गई हैं यद्यपि हम दयानन्द के किसी तरह पक्षपाती नहीं हैं—पर निरे संस्कृतज्ञ पंडितों की भी सराहना नहीं कर सकते दयानन्द चाहो बहुत बुरे ही हों पर देश के फ़ायदे और शोधन की ओर तो बहुत प्रवणचित्त हैं पंडितों की मोटी तोंद किस क की सिवाय आंखों में धूर झोंक प्रजा को लूटने के, और फिर इस पुस्तक के अग्रसर तो चतुर्भुज हैं जिनके अगुआ भये भिखारी तिनकी बाट गुसैयां मारी॥

प्रयागस्थ सम्पादक हिन्दीप्रदीप॥

३१ अनुभ्रमोच्छेदन ≡)

यह पुस्तक श्री स्वामी जी महाराज के एक विज्ञ विद्यार्थी ने राजा साहब के द्वितीय निवेदन नाम की पुस्तक के उत्तर में उनके संतोषार्थ लिखी है बहुत ही अच्छी है

नीचे लिखी ११ पुस्तकें अष्टाध्यायी के एक २ विषय पर भाषा में व्यवस्था सहित श्रीयुत ने लिखी हैं जिनके साथ मोल्य लिखा है वे छप चुकीं र- हीं वे भी शीघ्र छपेंगी इनके पढ़ने से विद्यार्थी लोग ऐसे अच्छे वैय्या करणी तैयार हो जावेंगे कि जिनको देख पोप लोग दुम दबावेंगे ॥

१ संधि विषयः ।) २ नामिक ।।) ३ तद्धितः ४ सामासिकः ।)
५ अव्ययार्थः ६ आख्यातिकः ७ कारकीयः ।=) ८ सौवरः
९ पारिभाषिकः १० उणादिगणः ११ गणपाठः यहां तक कुल १२ हुई

३२

(अष्टाध्यायी) यह पुस्तक अलग भी संस्कृत वृत्ति सहित छपेंगी- जब विद्यार्थी लोग ऊपर लिखी पुस्तकों को पढ़ लेवेंगे तब उनको- इस उपकारी पुस्तक की बहुत आवश्यकता होगी

३३

(निघंटु) अर्थात् यास्क मुनि कृत वैदिक कोशः ॥ ऊपर लिखी हुई सब पुस्तकों के पढ़े हुए विद्यार्थियों को यह पुस्तक हाथ आते- ही वेद मंत्रों का अर्थ करना अति सुगम हो जायगा परन्तु उच्च पदाभिलाषी को इतर शास्त्र दर्शी अवश्य होना होगा ॥

निश्चय है कि उन शास्त्रों की भी ऐसी ही सुगम पुस्तकें श्रीयुत शीघ्र बनावेंगे

प्रियसुहृद्गण

ये ऊपर लिखे सब ग्रंथ अति सरल और सुगम होकर भी बड़े अद्भुत और विचित्र हैं विशेष कर वेद भाष्य भूमिका में तो व जिन्स वे गुण जानो जो कभी महाराज युधिष्ठिर की मय रचित सभाके सुने हों अर्थात् उसको देख सुन श्री जी महाराज के अनुरागी जन तो निःशंक हो अनुपम सुख लहते हैं परन्तु विरोधियों की यह कैफ़ियत होजाती है कि वे उसको देखते ही निश्चय होने के पलटे अधिक भ्रमजाल और महाविकट विस्मयावर्त में पड़कर बेढब पुकार करते हैं अर्थात् कहते हैं कि भाई भाष्य भूमिका के देखने वालो ख़बरदार हूजियो हम उस्को हाथ में थामते ही अथाह नरक कुंड में गिरे तुम तो भी अपनी बुद्धि को काम में लाना अथवा उन पंडितों की सम्मति लेना जिनको हम अपनी तिमिर नाशक तृतीय खण्ड आदि कई पुस्तकों के द्वारा अब तक बहुत कुछ धूल उड़ा चुके हैं-(२) सारांश यह कि भूमिका बड़ी ही चमत्कारी वस्तु है इस लिये अब हम उसका कुछ आशय आगे प्रकाशित करते हैं। विशेष कर उतना प्रकाशित होगा जितना कि वेदों के विषय में आर्यों को अच्छी तरह जान लेना चाहिये क्योंकि बहुत से विरोधी लोग उन विषयों पर शंका कर बैठते हैं

(२) यहां तक जो मज़मून ऊपर से आया है वह राजा साहब की भ्रमनिवेदन नामी किताब को पढ़ कर समझ लेना चाहिये नहीं तो जैसा कि चाहिये समझ में नहीं आवेगा

विदित होकि श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने प्रत्येक विषय प्रथम संस्कृत में फिर उसी को भाषा में लिखा है परंतु हम केवल भाषार्थ यहां लिखते हैं अंत में संस्कृत सहित भी कुछ लिखदिखावेंगे ॥

इतिग्रन्थसूचना

अथ वेदोत्पत्तिविषयः

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥१॥ यजु० अ० ३१ मं० ७।

यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम् । स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥२॥ अथर्व० कां० १० प्रपा० २३ अनु० ४ मं० २०

एवं वा अरेस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इत्यादि । श० कां० १४ अ० ५ ॥ अस्यायमभिप्रायः ।

भाषार्थ

प्रथम ईश्वर को नमस्कार और प्रार्थना करके पश्चात् वेदों की उत्पत्ति का विषय लिखा जाता है कि वेद किसने उत्पन्न किये हैं (तस्माद्यज्ञात्स०) सत् जिसका कभी नाश नहीं होता चित् जो सदा ज्ञान स्वरूप है जिसको अज्ञान का लेश भी कभी नहीं होता आनंद जो सदा सुखस्वरूप और सबको सुख देने वाला है इत्यादि लक्षणों से युक्त पुरुष जो सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है जो सब मनुष्यों को उपासना के योग्य इष्टदेव और सब सामर्थ्य से युक्त है उसी परब्रह्म से (ऋचः) ऋग्वेद (यजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद और (छन्दांसि) इस शब्द से अथर्व भी ये चारो वेद उत्पन्न हुए हैं इस लिये सब मनुष्यों को उचित है कि वेदों को ग्रहण करें और वेदोक्त रीति से ही

चलें (यज्ञिरे) और (अजायत) इन दोनों क्रियाओं के अधिक होने से वेद अनेक विद्याओं से युक्त हैं ऐसा जाना जाता है वैसेही (तस्मात्) इनदोनों पदों के अधिक होने से यह निश्चय जानना चाहिये कि ईश्वर सेही वेद उत्पन्न हुए हैं किसी मनुष्य से नहीं वेदों में सब मंत्र गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं फिर (छन्दांसि) इस पदके कहने से चौथा जो अथर्व वेद है उसकी उत्पत्ति का प्रकाश होता है शत पथ आदि ब्राह्मण और वेद मंत्रों के प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि यज्ञ शब्द से विष्णु का और विष्णुशब्द से सर्व व्यापक जो परमेश्वर है उसी का ग्रहण होता है क्योंकि सब जगत् की उत्पत्ति करनी परमेश्वर में ही घटती है अन्यत्र नहीं ॥१॥ (यस्मादृचो अपा०) जो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर है उसी से (ऋचः) ऋग्वेद (यजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद (आंगिरसः) अथर्ववेद ये चारों उत्पन्न हुए हैं इसी प्रकार रूपकालंकार से वेदों की उत्पत्ति का प्रकाश ईश्वर कर्त्ता है कि अथर्व वेद मेरे मुख के समतुल्य सामवेद लोमों के समान यजुर्वेद हृदय के समान और ऋग्वेद प्राण की नाईं है (ब्रूहिकतमःस्विदेवसः) अर्थ चारोवेद जिस्से उत्पन्न हुए हैं सो कौनसा देव है उसको तुम मुझ से कहो इस प्रश्नका यह उत्तर है कि (स्कंभंत०) जो सब जगत् का धारण करता परमेश्वर है उसका नाम स्कंभ है उसी को तुम वेदों का कर्त्ता जानो और यह भी जानो कि उसको छोड़ के मनुष्यों को उपासना करने के योग्य दूसरा कोई इष्ट देवनहीं है क्योंकि ऐसा अभागी कौन मनुष्य है जो वेदों के कर्त्ता सर्वशक्तिमान् परमेश्वर को छोड़ के दूसरे को परमेश्वर मान के उपासना

को ॥ २ ॥ (एवं वा अरस्य॰) याज्ञवल्क्य महा विद्वान् जो महर्षि हुए हैं वह अपनी पंडिता मैत्रेयी स्त्री को उपदेश करते हैं कि हे मैत्रेयि जो आकाशादि से भी बड़ा सर्व व्यापक परमेश्वर है उस से ही ऋक् यजुः साम और अथर्व ये चारो वेद उत्पन्न हुए हैं जैसे मनुष्य के शरीर से श्वासा बाहर को आके फिर भीतर को जाती है इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाश करता है और प्रलय में संसार में वेद नहीं रहते परंतु उसके ज्ञान के भीतर वे सदा बने रहते हैं बीजांकुर वत् जैसे बीज में अंकुर [illegible] रहता है वही वृक्ष रूप होके फिर भी बीज के भीतर र[illegible] इसी प्रकार से वेद भी ईश्वर के ज्ञान में सब दिन बने [illegible] हैं उनका नाश कभी नहीं होता क्योंकि वह ईश्वर की वि[illegible] है इससे इनको नित्य ही जानना ॥

इस विषय में जितने ही पुरुष ऐसा प्रश्न करते हैं कि ईश्वर निराकार है उससे [illegible] वेद कैसे उत्पन्न हो सके हैं इसका यह उत्तर है कि परमे[illegible] शक्तिमान् है उसमें ऐसी शंका करनी सर्वथा व्यर्थ है क्योंकि मुख और प्राणादि साधनों के विना भी परमेश्वर में मुख और प्राणादि के काम करने का अनंत सामर्थ्य है कि मुख के बिना मुख का काम और प्राण के बिना प्राणादि का काम वह अपने सामर्थ्य से यथावत् कर सक्ता है यह दोष तो हम जीव लोगों में आ सक्ता है कि मुखादि के बिना मुखादि का कार्य नहीं कर सक्ते हैं क्योंकि हम लोग अल्प सामर्थ्य वाले हैं और इसमें यह दृष्टान्त भी है कि मन में मुखादि अवयव नहीं हैं तथापि जैसे उसके भीतर प्रश्नोत्तर आदि शब्दों का उच्चारण मानस व्यापार में होता है वैसे ही परमेश्वर में भी

जानना चाहिये और जो संपूर्ण सामर्थ्य वाला है सो किसी कार्य के करने में किसी का सहाय ग्रहण नहीं करता क्योंकि वह अपने सामर्थ्य में ही सब कार्यों को कर सक्ता है जैसे हम लोग बिना सहाय के कोई काम नहीं कर सक्ते वैसा ईश्वर नहीं है जैसे देखो कि जब जगत् उत्पन्न नहीं हुआ था उस समय निराकार ईश्वर ने संपूर्ण जगत् को बनाया तब वेदों के रचने में क्या शंका रही जैसे वेदों में अत्यंत सूक्ष्म विद्या का रचन ईश्वर ने किया है वैसे ही जगत् में भी नेत्र आदि पदार्थों का अत्यंत आश्चर्य रूप रचन किया है तो क्या वेदों की रचना निराकार ईश्वर नहीं कर सक्ता॥

प्रश्न जगत् के रचने में तो ईश्वर के बिना किसी जीव का सामर्थ्य नहीं है परंतु जैसे व्याकरणादि शास्त्र रचने में मनुष्यों का सामर्थ्य होता है वैसे वेदों के रचने में भी जीव का सामर्थ्य हो सक्ता है उत्तर नहीं किन्तु जब ईश्वर ने प्रथम वेद रचे हैं उनको पढ़ने के पश्चात् ग्रन्थ रचने का सामर्थ्य किसी मनुष्य को हो सक्ता है उसके पढ़ने और ज्ञान से बिना कोई भी मनुष्य विद्वान् नहीं हो सक्ता जैसे इस समय में किसी शास्त्र को पढ़ के किसी का उपदेश सुन के और मनुष्यों के परस्पर व्यवहारों को देखके ही मनुष्यों को ज्ञान होता है अन्यथा कभी नहीं होता जैसे किसी मनुष्य के बालक को जन्म से एकांत में रख के उसको अन्न और जल युक्ति से देवे उसके साथ भाषणादि व्यवहार लेश मात्र भी कोई मनुष्य न करे — जब तक उसका मरण न होय तब तक उसको इसी प्रकार से रक्खे तो मनुष्य पने का भी ज्ञान नहीं हो सक्ता तथा जैसे बड़े बन में मनुष्य को बिना उपदेश के यथार्थ ज्ञान नहीं होता किन्तु पशुओं की नाईं उनकी

प्रवृत्ति देखने में आती है वैसेही वेदों के उपदेश के बिना भी सब मनुष्यों की प्रवृत्ति हो जाती फिर ग्रन्थ रचने के सामर्थ्य की तो कथा क्या ही कहनी है इससे वेदों को ईश्वर के रचित मानने से ही कल्याण है अन्यथा नहीं ॥

प्र॰ ईश्वर ने मनुष्यों को स्वाभाविक ज्ञान दिया है सो सब ग्रन्थों से उत्तम है क्योंकि उसके बिना वेदों के शब्द अर्थ और संबन्ध का ज्ञान कभी नहीं हो सक्ता और जब उस ज्ञान की क्रम से वृद्धि होगी तब मनुष्य लोग विद्या पुस्तकों को भी रच लेवेंगे पुनः वेदों की उत्पत्ति ईश्वर से क्यों माननी उ॰ जो प्रथम दृष्टांत बालक का एकांत में रखने का और दूसरा बन वासियों का भी कहा था क्या उनको स्वाभाविक ज्ञान ईश्वर ने नहीं दिया है वे स्वाभाविक ज्ञान से विद्वान् क्यों नहीं होते इससे यह बात निश्चित है कि ईश्वर का किया उपदेश जो वेद है उसके बिना किसी मनुष्य को यथार्थ ज्ञान नहीं हो सक्ता जैसे हम लोग वेदों के पढ़ने विद्वानों की शिक्षा और उनके किये ग्रन्थों को पढ़े बिना पंडित नहीं होते वैसेही सृष्टि की आदि में भी परमात्मा जो वेदों का उपदेश नहीं कर्त्ता तो आज पर्यंत किसी मनुष्य को धर्मादि पदार्थों की यथार्थ विद्या नहीं होती इससे क्या जानाजाता है कि विद्वानों की शिक्षा और वेद पढ़ने के विना केवल स्वाभाविक ज्ञान से किसी मनुष्य का निर्वाह नहीं हो सक्ता जैसे हम लोग अन्य विद्वानों से वेदादि शास्त्रों का अनेक प्रकार के विज्ञान को ग्रहण करके ही पीछे ग्रन्थों को भी रच सक्ते हैं वैसेही ईश्वर के ज्ञान की भी अपेक्षा सब मनुष्यों को अवश्य है क्योंकि सृष्टि के प्रारंभ में पढ़ने की कुछ भी व्यवस्था नहीं थी तथा विद्या का कोई ग्र-

न्थ भी नहीं था उस समय ईश्वर के किये वेदोपदेश के बिना विद्या के नहीं होने से कोई मनुष्य ग्रंथ की रचना कैसे कर सक्ता क्योंकि सब मनुष्यों को सहाय कारी ज्ञान में स्वतंत्रता नहीं है और स्वाभाविक ज्ञान मात्र से विद्या की प्राप्ति किसी को नहीं होसक्ती इसी लिये ईश्वर ने सब मनुष्यों के हित के लिये वेदों की उत्पत्ति की है और जो यह कहा था कि अपना ज्ञान सब वेदादि ग्रंथों से श्रेष्ठ है सो भी अन्यथा है क्योंकि वह स्वाभाविक जो ज्ञान है सो साधनकोटि में है जैसे मन के संयोग के बिना आंख से कुछ भी नहीं देख पड़ता तथा आत्मा के संयोग के बिना मन से भी कुछ नहीं होता वैसे ही जो स्वाभाविक ज्ञान है सो वेद और विद्वानों की शिक्षा के ग्रहण करने में साधन मात्र ही है तथा पशुओं के समान व्यवहार का भी साधन है परंतु वह स्वाभाविक ज्ञान धर्म अर्थ काम और मोक्ष विद्या का साधन स्वतंत्रता से कभी नहीं हो सक्ता॥

प्र० वेदों के उत्पन्न करने में ईश्वर का क्या प्रयोजन था॥

उ० मैं तुम से पूछता हूं कि वेदों के उत्पन्न नहीं करने में उसका क्या प्रयोजन था जो तुम यह कहो कि इसका उत्तर हम नहीं जान सक्ते तो ठीक है क्योंकि वेद तो ईश्वर की नित्य विद्या है उसकी उत्पत्ति वा अनुत्पत्ति होही नहीं सक्ती परंतु हम जीव लोगों के लिये ईश्वर ने जो वेदों का प्रकाश किया है सो उसकी हमपर परम कृपा है जो वेदोत्पत्ति का प्रयोजन है सो आप लोग सुनें प्र० ईश्वर में अनंत विद्या हैं वा नहीं उ० हैं

प्र० सो उसकी विद्या किस प्रयोजन के लिये हैं उ० अपने ही लिये जिस से सब पदार्थों की रचना और जानना होता है॥

प्र० अच्छा तो मैं आपसे पूछता हूं कि ईश्वर परोपकार को करता है वा नहीं उ० ईश्वर परोपकारी है पर इससे क्या आया।
प्र० इससे यह बात आती है कि विद्या जो है सो स्वार्थ और परार्थ के लिये होती है क्योंकि विद्या का यही गुण है कि स्वार्थ और परार्थ इन दोनों को सिद्ध करना जो परमेश्वर अपनी विद्या को हम लोगों के लिये उपदेश न करै तो विद्या से जो परोपकार करना गुण है सो उस का नहीं रहे इससे परमेश्वर ने अपनी वेद विद्या को हम लोगों के लिये उपदेश करके सफलता सिद्ध करी है क्योंकि परमेश्वर हम लोगों का माता पिता के समान है हम सब लोग जो उसकी प्रजा हैं उन पर नित्य कृपा दृष्टि रखता है जैसे अपने सन्तानों के ऊपर पिता और माता सदैव करुणा को धारण करते हैं कि सब प्रकार से हमारे पुत्र सुख पावें वैसेही ईश्वर भी सब मनुष्यादि सृष्टि पर कृपा दृष्टि सदैव रखता है इससे ही वेदों का उपदेश हम लोगों के लिये किया है। जो परमेश्वर अपनी वेद विद्या का उपदेश मनुष्यों के लिये न करता तो धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि किसी को यथावत् प्राप्त न होती उसके बिना परम आनन्द भी किसी को नहीं होता जैसे परम कृपालु ईश्वर ने प्रजा के सुख के लिये कंदमूल फल और घास आदि छोटे २ भी पदार्थ रचे हैं सोही ईश्वर सब सुखों के प्रकाश करने वाली सब सत्य विद्याओं से युक्त वेद विद्या का उपदेश भी प्रजा के सुख के लिये क्यों न करता क्योंकि जितने ब्रह्मांड में उत्तम पदार्थ हैं उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है सो सुख विद्या प्राप्ति होने के सुख के हजार वें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सक्ता ऐसा सर्वोत्तम विद्या पदार्थ जो वेद है उसका उपदेश परमेश्वर क्यों

न करता इस्से निश्चय करके यह जानना कि वेद ईश्वर के ही बनाये हैं ॥

प्र॰ वेदों के रचने और वेद पुस्तक लिखने के लिये ईश्वर ने लेखनी स्याही और दवात आदि साधन कहां से लिये थे ? क्योंकि उस समय में कागज़ आदि पदार्थ तो बने ही न थे ॥

उ॰ वाह वाह वाह आपने बड़ी शंका करी आपकी बुद्धि की क्या स्तुति करैं अच्छा आपसे मैं पूछता हूं कि हाथ पग आदि अंगो के बिना तथा काष्ठ लोह आदि सामग्री साधनों बिना ईश्वर ने जगत् को क्यों कर रचा है जैसे हाथ आदि अवयवों के बिना उसने सब जगत् को रचा है वैसेही वेदों को भी सब साधनों के बिना रचा है क्योंकि ईश्वर सर्व शक्तिमान् है इस्से ऐसी शंका उसमें आपको करना योग्य नहीं परंतु इसके उत्तर में इस बात को जानो कि वेदों को पुस्तकों में लिखके सृष्टि की आदि में ईश्वर ने प्रकाशित नहीं किये थे प्र॰ तो किस प्रकार से किये थे उ॰ ज्ञान के बीच में प्र॰ किन के ज्ञान में उ॰ अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा के प्र॰ वे तो जड़ पदार्थ हैं उ॰ ऐसा मत कहो वे सृष्टि की आदि में मनुष्य देहधारी हुए थे क्योंकि जड़ में ज्ञान के कार्य का असंभव है और जहां २ असंभव होता है वहां २ लक्षणा होती है जैसे किसी सत्यवादी विद्वान् पुरुष ने किसी से कहा कि खेतों में मंचान पुकारते हैं इस वाक्य में लक्षणा से यह अर्थ होता है कि मंचान के ऊपर मनुष्य पुकार रहे हैं इसी प्रकार से यहां भी जानना कि विद्या के प्रकाश होने का संभव मनुष्यों में ही हो सक्ता है अन्यत्र नहीं इसमें (तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्य-

जुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः (श॰ ब्रा॰ का॰ ११ अ॰ ५) इत्यादि शत पथ ब्रा॰ ह्मण का प्रमाण लिखा है उन चार मनुष्यों के (ज्ञान के) बीच में वेदों का प्रकाश करके उनसे ब्रह्मादि के बीच में वेदों का प्रकाश कराया था प्र॰ सत्य बात है कि ईश्वर ने उनको ज्ञान दिया होगा और उनने अपने ज्ञान से वेदों का रचन किआ होगा उ॰ ऐसा तुमको कहना उचित नहीं क्योंकि तुमभी जानते होकि ईश्वर ने उनको ज्ञान किस प्रकार का दिया था उ॰ उनको वेद रूप ज्ञान दिया था प्र॰ अच्छा तो मैं आपसे पूछता हूं कि वह ज्ञान ईश्वर का है वा उनका उ॰ वह ज्ञान ईश्वर काही है प्र॰ फिर आप से मैं पूछता हूं कि वेद ईश्वर [illegible] ज्ञान [illegible] वेदों को बनाया प्र॰ [illegible] शंका आपने क्यों की थी उ॰ निश्चय [illegible] ये॥

प्र॰ ईश्वर न्याय कारी है वा पक्षपाती उ॰ न्यायकारी

प्र॰ जब परमेश्वर न्यायकारी है तो सब के हृदयों में वेदों का प्रकाश क्यों नहीं किया क्योंकि चारों के हृदयों में प्रकाश करने से ईश्वर में पक्षपात आता है उ॰ इससे ईश्वर में पक्षपात का लेश कदापि नहीं आता किन्तु उस न्यायकारी परमात्मा का साक्षात् न्यायही प्रकाशित होता है क्योंकि [illegible] कहते हैं कि जो जैसा कर्म करै उसको वैसाही फल दिया [illegible] जानना चाहिये कि उन्हीं चार पुरुषों का ऐसा पूर्व पुण्य था कि उनके हृदय में वेदों का प्रकाश किया गया [illegible] सृष्टि की आदि में उत्पन्न हुए थे उनका पूर्व पुण्य कहां से आया उ॰ जीव,जी

वों के कर्म, और स्थूल कार्य्य जगत् ये तीनों अनादि हैं जीव, और कारण जगत्, स्वरूप से अनादि हैं कर्म और स्थूल कार्यजगत् प्रवाह से अनादि हैं ॥

प्र० क्या गायत्र्यादि छन्दों का भी रचन ईश्वर ने नहीं किया है उ० यह शंका आप को कहां से हुई प्र० मैं तुमसे पूछता हूं क्या गायत्र्यादि छन्दों के रचने का ज्ञान ईश्वर को नहीं है

उ० ईश्वर को सब ज्ञान हैं अच्छा तो ईश्वर के समस्त विद्यायुक्त होने से आपकी यह शंका भी निर्मूल है प्र० चार मुख के ब्र० [illegible] को ब्रह्मा ऐसे इतिहास को हम लोग सुनते हैं उ० ऐ० [illegible] शब्द प्रमाण के भीतर गिना है [illegible] अ० १ सू० ७ इति गौतमाचार्येणो० [illegible] अन्य आप्त विद्वानों का जो उपदेश है उस को शब्द प्रमाण में मानते हैं ऐसा न्याय दर्शन में गौतमाचार्य ने लिखा है तथा शब्द प्रमाण से जो युक्त है वही इतिहास मानने के योग्य है अन्य नहीं इस सूत्र के भाष्य में वात्स्यायन मुनि ने आप्त का लक्षण कहा है जो कि साक्षात् सब पदार्थ विद्याओं का जानने वाला कपट आदि दोषों से रहित धर्मात्मा है जो कि सदा सत्य वादी सत्य मानी और सत्यकारी है जिस को पूर्ण विद्या से आत्मा में जिस प्रकार का ज्ञान है उसके कहने की इच्छा की प्रेरणा से सब मनुष्यों पर कृपा दृष्टि से सब सुख होने के लिये सत्य उपदेश का करने वाला है और जो पृथ्वी से लेके परमेश्वर पर्यंत सब पदार्थों को यथावत् साक्षात् करना और उसी के अनुसार वर्त्तना इसी का नाम

आप्ति है इस आप्ति से जो युक्त होय उसको आप्त कहते हैं उसी
के उपदेश का प्रमाण होता है इससे विपरीत मनुष्य का नहीं
क्योंकि सत्य वृत्तान्त का ही नाम इतिहास है अनृत का नहीं स-
त्य प्रमाण युक्त जो इतिहास है वही सब मनुष्यों को ग्रहण कर
ने के योग्य है इस्से विपरीत इतिहास का ग्रहण करना किसी को यो-
ग्य नहीं क्योंकि प्रमादी पुरुष के मिथ्या कहने का इतिहास में ग्रहण
ही नहीं होता इसी प्रकार व्यासजी ने चारों वेदों की संहिताओं
का संग्रह किया है इत्यादि इतिहासों को भी मिथ्या ही जानना
चाहिये जो आज काल के बने ब्रह्म वैवर्तादि पुराण और ब्रह्म-
यामल आदि तन्त्र ग्रंथ हैं इनमें कहे इतिहासों का प्रमाण करना
किसी मनुष्य को योग्य नहीं क्योंकि इनमे असंभव और अप्र-
माण कपोल कल्पित मिथ्या इतिहास बहुत लिख रक्खे हैं औ-
र जो सत्य ग्रंथ शतपथ ब्राह्मणादि हैं उनके इतिहासों का
कभी त्याग नहीं करना चाहिये ॥

प्र० जो सूक्त और मन्त्रों के ऋषि लिखे जाते हैं उन्होंने ही
वेद रचे होंय ऐसा क्यों नहीं माना जाय उ० ऐसा मत कहो क्योंकि ब्र-
ह्मादि ने भी वेदों को पढ़ा है सो श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों में य-
ह वचन है (यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणो
ति तस्मै०) कि जिसने ब्रह्मा को उत्पन्न किया और ब्रह्मादि को सृ-
ष्टि की आदि में अग्नि आदि के द्वारा वेदों का भी उपदेश किया है
उसी परमेश्वर के शरण को हम लोग प्राप्त होते हैं इसी प्रकार
ऋषियों ने भी वेदों को पढ़ा है क्योंकि जब मरीच्यादि ऋषि और
व्यासादि मुनियों का जन्म भी नहीं हुआ था उस समय में भी—

ब्रह्मादि के समीप वेदों का वर्तमान था इसमें मनुके श्लोकों की भी साक्षी है कि पूर्वोक्त अग्नि वायु रवि और अंगिरा से ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ा था जब ब्रह्माजी ने वेदों को पढ़ा था तो व्यासादि और हम लोगों की तो कथा क्या ही कहनी है ॥

प्र० वेद और श्रुति ये दो नाम ऋग्वेदादि संहिताओं के क्यों हुए हैं उ० अर्थ भेद से क्योंकि एक (विद) धातु ज्ञानार्थ है दूसरा (विद) सत्तार्थ है तीसरे (विद्लृ) का लाभ अर्थ है चौथे -(विद) का अर्थ विचार है इन चार धातुओं से करण और अधिकरण कारक में घञ् प्रत्यय करने से वेद शब्द सिद्ध होता है तथा (श्रु) धातु श्रवण अर्थ में है इससे करण कारक में क्तिन् प्रत्यय के होने से श्रुति शब्द सिद्ध होता है। जिनके पढ़ने से यथार्थ विद्या का विज्ञान होता है जिनको पढ़ कर विद्वान् होते हैं जिनसे सब सुखों का लाभ होता है और जिनसे ठीक२ सत्यासत्य का विचार मनुष्यों को होता है इससे ऋक संहितादि का वेद नाम है वैसेही सृष्टि के आरंभसे आज पर्यंत और ब्रह्मादि से लेके हम लोग पर्यन्त जिससे सब सत्य विद्याओं को सुनते आते हैं इससे वेदों का श्रुति नाम पड़ा है क्योंकि किसी देहधारी ने वेदों के बनाने वाले को साक्षात् कभी नहीं देखा इस कारण से जाना गया है कि वेद निराकार ईश्वर सेही उत्पन्न हुए हैं और उनको सुनते सुनतेही आज पर्यंत सब लोग चले आते हैं तथा अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा इन चारों मनुष्यों को जैसे वादित्र को कोई बजावे वा काठ की पुतली को चेष्टा करावे इसी प्रकार ईश्वर ने उन को निमित्त मात्र किया था क्योंकि उनके ज्ञान से वेदों की

उत्पत्ति नहीं हुई किंतु इस से यह जानना कि वेदों में जितने शब्द अर्थ और संबंध हैं वे सब ईश्वर ने अपने ही ज्ञान से उनके द्वारा प्रकट किये हैं ॥

प्र० वेदों की उत्पत्ति में कितने वर्ष होगये हैं उ० एक वृन्द छान्नवे करोड़ आठ लाख बावन हज़ार नव सौ छहत्तर अर्थात् (१९६०८५२९७६) वर्ष वेदों की और जगत की उत्पत्ति में हो गये हैं और यह संवत् (१९३३) ७७ सतहत्तर वां वर्ष वर्त रहा है प्र० यह कैसे निश्चय होय कि इतने ही वर्ष वेद और जगत् की उत्पत्ति में बीत गये हैं उ० यह जो वर्त्तमान सृष्टि है इस में सातवें (७) वैवस्वत मनु का वर्त्तमान है इस से पूर्व छः मन्वन्तर हो चुके हैं स्वायंभुव १ स्वारोचिष २ औत्तमि ३ तामस ४ रैवत ५ चाक्षुष ६ ये छः तो बीत गये हैं और ७ सातवां वैवस्वत वर्त रहा है और सावर्णि आदि ७ सात मन्वंतर आगे आवेंगे ये सब मिलके १४ मन्वन्तर होते हैं और इकहत्तर चतुर्युगियों का नाम मन्वन्तर धरागया है ॥ और ४३२०००० वर्ष की एक चतुर्युगी होती है इस संख्या को क्रम ७२ से फिर ६ से गुणा करने से जो होय उसमें २७ चौकड़ी और १ सत्ययुग १ त्रेता १ द्वापर और चलते हुए कलियुग की गई वर्षों को जोड़ देने से वेद और सृष्टि की उत्पत्ति का ठीक काल निकल आवेगा और ४३२००० वर्ष का कलि इस से दूना द्वापर तिगुना त्रेता चौगुना सत्युग होता है और विक्रमी सम्वत् १९३७ के समाप्ति पर ४९८२ वर्ष हाल के अर्थात् २८ वें कलि की भुगत चुकी क्योंकि यह दिग्विजय संवत् ३८ में बना है इस से जो अध्यापक विलसन साहब

और अध्यापक मोक्षमूलर साहेब आदि यूरोपखण्ड वासी विद्वानों ने बात कही है कि वेद मनुष्य के रचे हैं किंतु श्रुति नहीं हैं उनकी यह बात ठीक नहीं है और दूसरी यह की कोई कहता है (२४००) चौबीस सौ वर्ष वेदों की उत्पत्ति को हुए कोई (२९००) उनतीस सौ वर्ष कोई (३०००) तीन हज़ार वर्ष और कोई कहता है (३१००) इकतीस सौ वर्ष वेदों को उत्पन्न हुए बीते हैं उनकी यह भी बात झूठी है क्योंकि उन लोगों ने हम आर्य्य लोगों की नित्य प्रति की दिन चर्या का लेख और संकल्प पठन विद्या को भी यथावत न सुना और न विचारा है नहीं तो इतने ही विचार से यह भ्रम उनको नहीं होता इस्से यह जानना अवश्य चाहिये कि वेदों की उत्पत्ति परमेश्वर से ही हुई है और जितने वर्ष अभी ऊपर गिन आये हैं उतने ही वर्ष वेदों और जगत् की उत्पत्ति में भी हो चुके हैं इस्से क्या सिद्ध हुआ कि जिन २ ने अपनी २ देश भाषाओं में अन्यथा व्याख्यान वेदों के विषय में किया है उन २ का भी व्याख्यान मिथ्या है क्योंकि जैसा प्रथम लिख आये हैं जब पर्यंत उतना काल व्यतीत न हो चुकेगा तब पर्य्यंत ईश्वरोक्त वेद का पुस्तक यह जगत् और हम सब मनुष्य लोग भी ईश्वर के अनुग्रह से सदा वर्तमान रहेंगे ॥

इति वेदोत्पत्ति विचारः ॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेदोत्पत्ति नाम प्रथमो मयूखः ॥१॥

अथ वेदानित्यत्वविचारः॥

भाषार्थ

अब वेदों के नित्यत्व का बिचार किया जाता है सो वेद ईश्वर से उत्पन्न हुए हैं इस्से वे स्वतः नित्य स्वरूप ही हैं क्योंकि ईश्वर का सब सामर्थ्य नित्य ही है॥

प्र० इस विषय में कितने ही पुरुष ऐसी शंका करते हैं कि वेदों में शब्द छन्द पद और वाक्यों के योग होने से नित्य(१) नहीं हो सके जैसे बिना बनाने से घड़ा नहीं बनता इसी प्रकार से वेदों को भी किसी ने बनाया होगा क्योंकि बनाने के पहिले नहीं थे और प्रलय के अन्त में भी न रहेंगे इस्से वेदों को नित्य मानना ठीक नहीं है उ० ऐसा आपको कहना उचित नहीं क्योंकि शब्द दो प्रकार का होता है एक नित्य और दूसरा कार्य्य इनमें से जो शब्द अर्थ और संबंध परमेश्वर के ज्ञान में हैं वे सब नित्य ही होते हैं और जो हम लोगों की कल्पना से उत्पन्न होते हैं वे सब कार्य्य होते हैं क्योंकि जिस का ज्ञान और क्रिया स्वभाव से सिद्ध और अनादि हैं उसका सब सामर्थ्य भी नित्य ही होता है इस्से वेद भी उसकी विद्या स्वरूप होने से नित्य ही हैं क्योंकि ईश्वर की विद्या अनित्य कभी नहीं हो सकती॥

---

(१) नित्य उसको कहते हैं जिस की कभी उत्पत्ति और नाश न हो और नित्यपन का नाम नित्यत्व है

प्र० जब सब जगत् के परमाणु अलग २ होके कारण रूप हो जाते हैं तब जो कार्य रूप सब स्थूल जगत् है उसका अभाव हो जाता है उस समय वेदों के पुस्तकों का भी अभाव हो जाता है फिर वेदों को नित्य क्यों मानते हो उ० यह बात पुस्तक, पत्र, मसी और अक्षरों की बनावट आदि पक्ष में घटती है तथा हम लोगों के क्रिया पक्ष में भी बन सक्ती है वेद पक्ष में नहीं घटती क्यों कि वेद तो शब्द अर्थ और संबन्ध स्वरूप ही हैं मसी कागज पत्र पुस्तक और अक्षरों की बनावट रूप नहीं है यह जो मसी लेख आदि क्रिया है सो मनुष्यों की बनाई है इससे यह अनित्य है और ईश्वर के ज्ञान में सदा बने रहने से वेदों को हम लोग नित्य मानते हैं इससे क्या सिद्ध हुआ कि पढ़ना पढ़ाना और पुस्तक के अनित्य होने से वेद अनित्य नहीं हो सक्ते क्योंकि वे बीजांकुर न्यायसे ईश्वर के ज्ञान में नित्य वर्तमान रहते हैं सृष्टि की आदि में ईश्वर से वेदों की प्रसिद्धि होती है और प्रलय में जगत् के नहीं रहने से उनकी अप्रसिद्धि होती है इस कारण से वेद नित्य स्वरूप ही बने रहते हैं जैसे इस कल्प की सृष्टि में शब्द अक्षर अर्थ और संबन्ध वेदों में हैं इसी प्रकार से पूर्व कल्प में थे और आगे भी होंगे क्योंकि जो ईश्वर की विद्या है सो नित्य एकही रसवनी रहती है उनके एक अक्षर का भी विपरीत भाव कभी नहीं होता सो ऋग्वेद से लेके चारों वेदों की संहिता अब जिस प्रकार की हैं कि इनमें शब्द अर्थ संबंध पद और अक्षरों का जिस क्रम से वर्त्तमान है इसी प्रकार का क्रम सब दिन बना रहता है क्योंकि ईश्वर का ज्ञान नित्य है उसकी वृद्धि क्षय और विपरीतता कभी नहीं होती इस कारण से सब वेदों को

नित्य स्वरूप ही मानना चाहिये॥
यह जो वेदों के नित्य होने का विषय है इस में व्याकरणादि शास्त्रों का प्रमाण साक्षी के लिये लिखते हैं इनमें से जो व्याकरण शास्त्र है सो संस्कृत और भाषाओं के सब शब्द विद्या का मुख्य मूल प्रमाण है उसके बनाने वाले महा मुनि पाणिनि और पतंजलि हैं उनका ऐसा मत है कि सब शब्द नित्य हैं क्योंकि इन शब्दों में जितने अक्षरादि अवयव हैं वे सब कूटस्थ अर्थात् विनाश रहित हैं और वे पूर्वा पर विचलते भी नहीं उनका अभाव वा आगम कभी नहीं होता　　　तथा कान से सुनके जिनका ग्रहण होता है बुद्धि से जो जाने जाते हैं जो वाक् इंद्रिय से उच्चारण करने से प्रकाशित होते हैं और जिनका निवास का स्थान आकाश है उनको शब्द कहते हैं इससे वैदिक अर्थात् जो वेद के शब्द और वेदों से जो शब्द लोक में आये हैं वे लौकिक कहाते हैं वे भी सब नित्य ही होते हैं क्योंकि उन शब्दों के मध्य में सब वर्ण अविनाशी और अचल हैं तथा इनमें लोप आगम और विकार नहीं बन सके इस कारण से पूर्वोक्त शब्द नित्य हैं॥

प्र॰ गणपाठ अष्टाध्यायी और महाभाष्य में अक्षरों के लोप आगम और विकार आदि कहे हैं फिर शब्दों का नित्यत्व कैसे हो सकता है इस प्रश्न का उत्तर महा भाष्यकार पतंजलि मुनि देते हैं कि शब्दों के समुदायों के स्थानों में अन्य शब्दों के समुदायों का प्रयोग मात्र होता है जैसे वेद पारगम् ङ, सु, भ, शप, तिप, इस पद समुदाय वाक्य के स्थान में वेदपारगोऽभवत् इस समुदायांतर का प्रयोग किया जाता है इसमें किसी पुरुष की ऐसी बुद्धि

होती है कि ऋम् इ उं, प्राप् इप् इनकी निवृत्ति हो जाती है सो उसकी बुद्धि में भ्रम मात्र है क्योंकि शब्दों के समुदायके स्थानों में दूसरे शब्दों के समुदायों के प्रयोग किये जाते हैं सो यह मत दासी के पुत्र पाणिनि मुनिजी का है जितने अष्टाध्यायी आदि व्याकरण के ग्रन्थ किये हैं सो मत इस प्रकार से है कि शब्द नित्य ही होते हैं क्योंकि जो उच्चारण और श्रवणादि हम लोगों की क्रिया है उसके क्षण भंग होने से अनित्य गिनी जाती है इससे शब्द अनित्य नहीं होते क्योंकि यह जो हम लोगों की वाणी है वही वर्ण२ की अर्थात् अन्य२ होती जाती है परंतु शब्द तो सदा अखंड एक रसही बने रहते हैं॥

प्र० शब्द भी उच्चारण किये के पश्चात् नष्ट हो जाता है और उच्चारण के पूर्व सुना नहीं जाता है जैसे उच्चारण क्रिया अनित्य है वैसे ही शब्द भी अनित्य हो सक्ता है फिर शब्दों को नित्य क्यों मानते हो

उ० शब्द तो आकाश की नाईं सर्वत्र एक रस भर रहे हैं परंतु जब उच्चारण क्रिया नहीं होती तब प्रसिद्ध सुनने में नहीं आते जब प्राण और वाणी की क्रिया से उच्चारण किये जाते हैं तब शब्द प्रसिद्ध होते हैं जैसे गौः इसके उच्चारण में जब पर्यंत उच्चारण क्रिया गकार में रहती है तब पर्य्यंत औकार में नहीं जब औकार में है तब गकार और विसर्जनीय में नहीं रहती इसी प्रकार वाणी की क्रिया की उत्पत्ति और नाश होता है शब्दों का नहीं किंतु आकाश में शब्द की प्राप्ति होने से शब्द तो अखंड एक रस सर्वत्र भर रहे हैं परन्तु जब पर्य्यंत वायु और वाक् इंद्रिय की क्रिया नहीं होती तब पर्यंत शब्दों का उच्चारण और श्रवण भी नहीं होता इससे यह

सिद्ध हुआ कि शब्द आकाश की नाई नित्यही हैं जब व्याकरण शास्त्र के मत से सब शब्द नित्य होते हैं तो वेदों के शब्दों की कथा तो क्या ही कहनी है क्योंकि वेदों के शब्दों के शब्द तो सब प्रकार से नित्य ही बने रहते हैं ॥

इसी प्रकार जैमिनि मुनि ने भी शब्द को नित्य माना है (नित्यस्तु स्याद्दर्शनस्य परार्थत्वात्। पूर्व मीमांसा। अ०१ पा०१ सू०१८) शब्द में जो अनित्य होने की शंका आती है उस का (तु) शब्द से निवारण किया है शब्द नित्य ही है अर्थात नाश रहित हैं क्योंकि उच्चारण क्रिया से जो शब्द का श्रवण होता है सो अर्थ के जनाने ही के लिये है इस से शब्द अनित्य नहीं हो सक्ता जो शब्द का उच्चारण किया जाता है उसकी ही प्रत्यभिज्ञा होती है कि श्रोत्र द्वारा ज्ञान के बीच में वही शब्द स्थिर रहता है फिर उसी शब्द से अर्थ की प्रतीति होती है जो शब्द अनित्य होता तो अर्थ का ज्ञान कौन कराता क्योंकि वह शब्द ही नहीं रहा फिर अर्थ को कौन जनावेगा और जैसे अनेक देशों में अनेक पुरुष एक काल में ही एक गौ शब्द का उच्चारण करते हैं इसी प्रकार उसी शब्द का उच्चारण वारंवार भी होता है इस कारण से भी शब्द नित्य हैं जो शब्द अनित्य होता तो यह व्यवस्था कभी नहीं बन सकती सो जैमिनि मुनि ने इस प्रकार के अनेक हेतुओं से पूर्व मीमांसा शास्त्र में शब्द को नित्य सिद्ध किया है ॥

इसी प्रकार वैशेषिक शास्त्र में कणादि मुनि ने भी कहा है (तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्। वैशेषिके। अ०१ सू०३ अस्यायमर्थः) वेद ईश्वरोक्त हैं इन में सत्य विद्या और पक्षपात रहित धर्म का ही प्रतिपादन है इस से चारों वेद नित्य हैं ऐसाही सब मनुष्यों को मानना उचि-

त है क्योंकि ईश्वर नित्य है इससे उसकी विद्या भी नित्य है ॥
वैसे ही न्यायशास्त्र में गोतम मुनि भी शब्द को नित्य कहते हैं (मंत्रायुर्वेद प्रामाण्य वच्च तत्प्रामाण्य माप्त प्रामाण्यात् । अ० २ पाद १ सू० ६७ अस्यायमर्थः) वेदों को नित्य ही मानना चाहिये क्योंकि सृष्टि के आरंभ से लेके आज पर्य्यंत ब्रह्मादि जितने आप्त होने आये हैं वे सब वेदों को नित्य ही मानते आये हैं उन आप्तों का अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये क्योंकि आप्त लोग वे होते हैं जो धर्मात्मा कपट छलादि दोषों से रहित सब विद्याओं से युक्त महायोगी और सब मनुष्यों के सुख होने के लिये सत्य का उपदेश करने वाले हैं जिनमें लेशमात्र भी पक्षपात वा मिथ्याचार नहीं होता उन्हों ने वेदों का यथावत् नित्य गुणों से प्रमाण किया है जिन्होंने आयुर्वेद को बनाया है जैसे आयुर्वेद (वैद्यक शास्त्र) के एक देश में कहे औषध और पथ्य के सेवन करने से रोग की निवृत्ति और सुख प्राप्त होता है जैसे उसके एक देश के कहे के सत्य होने से उसके दूसरे भाग का भी प्रमाण होता है इसी प्रकार वेदों का भी प्रमाण करना सब मनुष्यों को उचित है क्योंकि वेद के एक देश में कहे अर्थ का सत्यपन विदित होने से उससे भिन्न जो वेदों के भाग हैं कि जिनका अर्थ प्रत्यक्ष न हुआ हो उनका भी नित्य प्रमाण अवश्य करना चाहिये क्योंकि आप्त पुरुष का उपदेश मिथ्या नहीं हो सक्ता (मंत्रायु०) इस ऊपर लिखे सूत्र के भाष्य में वात्स्यायन मुनि ने वेदों का नित्य होना स्पष्ट प्रतिपादन किया है कि जो आप्त लोग हैं वे वेदों के अर्थ को देखने दिखाने और जनाने वाले हैं जो २ उस २ मंत्र के अर्थ के द्रष्टा वक्ता होते हैं

वेही आयुर्वेद आदि के बनाने वाले हैं जैसे उनका कथन आयुर्वेद में सत्य है वैसेही वेदों के नित्य मानने का उनका जो व्यवहार है सोभी सत्य ही है ऐसा मानना चाहिये क्योंकि जैसे आप्तों के उपदेश का प्रमाण अवशय होता है वैसेही सब आप्तों काभी जो परम आप्त सबका गुरु परमेश्वर है उसकेकिये वेदों काभी नित्य होने का प्रमाण अवश्य ही करना चाहिये ॥

इस विषय में योग शास्त्र के कर्त्तापतंजलि मुनि भी वेदों को नित्य मानते हैं (स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥ पातंजलि योग शास्त्रे । अ० १ पा० १ सू० २६) जोकि प्राचीन अग्नि वायु आदित्य अंगिरा और ब्रह्मादि पुरुष सृष्टि की आदि में उत्पन्न हुए थे उन से लेके हम लोग पर्यंत और हमसे आगेजो होने वाले हैं इन सब का गुरु परमेश्वर हीं है क्योंकि वेद द्वारा सत्य अर्थों का उपदेश करने से परमेश्वर का नाम गुरु है सोईश्वर नित्यही है क्योंकि ईश्वर में क्षणादि काल की गति का प्रचारही नहीं है और वह अविद्या आदि क्लेशों से और पाप कर्म तथा उनकी वासनाओं के भोगों से अलग है जिस में अनंत विज्ञान सर्वदा एकरस बना रहता है उसी के रचे वेदों काभी सत्यार्थ पन और पन भी निश्चित है ऐसा ही सब मनुष्यों को जानना चाहिये ॥

इसी प्रकार से सांख्य शास्त्र में कपिलाचार्य्य भी कहते हैं (निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम् ॥ सू० ५१ अस्यायमर्थः) परमेश्वरकी (निज) अर्थात् स्वाभाविक जो विद्या शक्ति है उससे प्रकट होने से वेदों का नित्यत्व और स्वतः प्रमाण सब मनुष्यों को स्वीकार करना चाहिये ॥

इसी प्रकार से वेदांत शास्त्र में वेदों के नित्य होने के विषय में व्यासजी ने भी लिखा है (शास्त्रयोनित्वात्। अ०१ पा०१ सू०३। अस्यायमर्थः) इस सूत्र के अर्थ में शंकराचार्य्य ने भी वेदों को नित्य मान के व्याख्यान किया है ऋग्वेदादि जो चारों वेद हैं वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं सूर्य्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं उनका बनाने वाला सर्वज्ञादि गुणों से युक्त परब्रह्म है क्योंकि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव सर्वज्ञगुणयुक्त इन वेदों को बना सके ऐसा संभव कभी नहीं हो सक्ता किन्तु वेदार्थ विस्तार के लिये किसी जीव विशेष पुरुष से अन्य शास्त्र बनाने का संभव होता है जैसे पाणिनि आदि मुनियों ने व्याकरणादि शास्त्रों को बनाया है उनमें विद्या के एक २ देश का प्रकाश किया है सो भी वेदों के आश्रय से बना सके हैं और जो सब विद्याओं से युक्त वेद हैं उनको सिवाय परमेश्वर के दूसरा कोई भी नहीं बना सक्ता क्योंकि परमेश्वर से भिन्न सब विद्याओं में पूर्ण कोई भी नहीं है किंच परमेश्वर के बनाये वेदों के पढ़ने विचारने और उसी के अनुग्रह से मनुष्यों को यथा शक्ति विद्या का बोध होता है अन्यथा नहीं ऐसा शंकराचार्य्य ने भी कहा है इससे क्या आया कि वेदों के नित्य होने में सब आर्य्य लोगों की साक्षी है और यह भी कारण है कि जो ईश्वर नित्य और सर्वज्ञ है उसके किये वेद भी नित्य और सर्वज्ञ होने के योग्य हैं अन्यका बनाया ऐसा ग्रंथ कभी नहीं हो सक्ता (अत एव च नित्यत्वम्। पा०३ सू०२९) इस सूत्र से भी यही आता है कि वेद नित्य हैं और सब सज्जन लोगों को भी ऐसा ही मानना उचित है तथा वेदों के प्रमाण और नित्य होने में अन्य शास्त्रों के

प्रमाणों को साक्षी के समान जानना चाहिये क्योंकि वे अपने ही प्रमाण से नित्य सिद्ध हैं जैसे सूर्य के प्रकाश में सूर्य काही प्रमाण है अन्य का नहीं और सूर्य्य प्रकाश स्वरूप है पर्वत से लेके त्रसरेणु पर्य्यंत पदार्थों का प्रकाश करता है वैसे वेद भी स्वयं प्रकाश हैं और सब सत्य शास्त्रों का भी प्रकाश कर रहे हैं॥

ऐसे ही परमेश्वर ने अपने और अपने किये वेदों के नित्य और स्वतः प्रमाण होने का उपदेश किया है सो आगे लिखते हैं (सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्॥ कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥१॥ य· अ· ४० मं· ८॥ अस्यायमभिप्रायः) यह मंत्र ईश्वर और उसके किये वेदों का प्रकाश करता है कि जो ईश्वर सर्वव्यापक आदि विशेषण युक्त है सो सब जगत् में परिपूर्ण हो रहा है उसकी व्याप्ति से एक परमाणु भी रहित नहीं है सो ब्रह्म (शुक्रं) सब जगत् का करने वाला और अनंत विद्यादि बल से युक्त है (अकायं) जो स्थूल सूक्ष्म और कारण इन तीनों शरीरों के संयोग से रहित है अर्थात् वह कभी जन्म नहीं लेता (अव्रणं) जिसमें एक परमाणु भी छिद्र नहीं कर सक्ता इसी से वह सर्वथा छेद रहित है (अस्नाविरं) वह नाड़ियों के बंधन से अलग है जैसा वायु और रुधिर नाड़ियों बंधा रहता है ऐसा बंधन परमेश्वर में नहीं होता (शुद्धं) जो अविद्या अज्ञानादि क्लेश और सब दोषों से पृथक् है (अपापविद्धम्) सो ईश्वर पाप युक्त वा पाप करने वाला कभी नहीं होता क्योंकि वह स्वभाव से ही धर्मात्मा है (कविः) जो सब का जानने वाला है (मनीषी) जो सब का

अंतर्यामी है और भूत भविष्यत् तथा वर्तमान इन तीनों कालों के व्यवहारों को यथावत् जानता है (परिभूः) जो सब के ऊपर विराजमान हो रहा है (स्वयंभूः) जो कभी उत्पन्न नहीं होता और उसका कारण भी कोई नहीं किंतु वही सबका कारण अनादि और अनंत है इससे वही सबका माता पिता है और अपनेही सत्यसामर्थ्य से सदा वर्तमान रहता है इत्यादि लक्षणों से युक्त जो सच्चिदानंद स्वरूप परमेश्वर है (शाश्वतीभ्यः०) उसने सृष्टि की आदि में अपनी प्रजा को जोकि उसके सामर्थ्य मे सदा से वर्तमान है उसके सब सुखों के लिये (अर्थात्व्यदधात्) सत्य अर्थों का उपदेश किया है इसी प्रकार जब२ परमेश्वर सृष्टि को रचता है तब२ प्रजा के हित के लिये सृष्टि की आदि में सब विद्याओं से युक्त वेदों का भी उपदेश करता है और जब२ सृष्टि का प्रलय होता है तब२ वेद उसके ज्ञान में सदा बने रहते हैं इससे उनको सदा नित्य मानना चाहिये॥

जैसे शास्त्रों के प्रमाणों से वेद नित्य हैं वैसेही युक्ति सेभी उनका नित्यपन सिद्ध होता है क्योंकि असत् से सत् का होना अर्थात अभाव से भाव का होना कभी नहीं हो सक्ता तथा सत् का अभाव भी नहीं हो सक्ता जो सत्य है उसी से आगे प्रवृत्ति भी हो सक्ती है और जो वस्तु ही नहीं है उससे दूसरी वस्तु किसी प्रकार से नहीं हो सक्ती इस न्याय से वेदों को नित्य ही मानना ठीक है क्योंकि जिसका मूल नहीं होता है उसकी डाली पत्र पुष्प और फल आदि भी कभी नहीं हो सक्ते जैसे कोई कहै कि वंध्या के पुत्र का विवाह मैंने देखा यह उसकी बात असंभव है क्योंकि जो उसके पुत्र होता तो वह वंध्या

ही क्यों होती और जब पुत्र ही नहीं है तो उसका विवाह और दर्शन कैसे हो सक्ते हैं वैसेही जब ईश्वर में अनंत विद्या है तभी मनुष्यों को विद्या का उपदेश भी किया है और जो ईश्वर में अनंत विद्या न होती तो वह उपदेश कैसे कर सक्ता और वह जगत् को भी कैसे रच सक्ता जो मनुष्यों को ईश्वर अपनी विद्या का उपदेश न करता तो किसी मनुष्य को विद्या जो यथार्थ ज्ञान है सो कभी नहीं होता क्योंकि इस जगत् में निर्मूल का होना व बढ़ना सर्वथा असंभव है इस्से यह जानना चाहिये कि परमेश्वर से वेद विद्या मूल को प्राप्त हो के मनुष्यों में विद्या रूप वृक्ष विस्तृत हुआ है इसमें और भी युक्ति है कि जिसका सब मनुष्यों को अनुभव और प्रत्यक्ष ज्ञान होता है उसीका दृष्टान्त देते हैं देखो कि जिसका साक्षात् अनुभव होता है उसी का ज्ञान में संस्कार होता है संस्कार से स्मरण स्मरण से इष्ट में प्रवृत्ति और अनिष्ट से निवृत्ति होती है अन्यथा नहीं जो संस्कृत भाषा को पढ़ता है उसके मन में उसी का संस्कार होता है अन्य भाषा का नहीं और जो किसी देश भाषा को पढ़ता है उसको देश भाषा का संस्कार होता है अन्य का नहीं इसी प्रकार जो वेदों का उपदेश ईश्वर न करता तो किसी मनुष्य को विद्या का संस्कार नहीं होता जब विद्या का संस्कार न होता तो उसका स्मरण भी नहीं होता स्मरण के बिना किसी मनुष्य को विद्या का लेश भी न हो सक्ता इस युक्ति से क्या जाना जाता है कि ईश्वर के उपदेश से वेदों को सुनकर पढ़कर और विचार कर के ही मनुष्यों को विद्या का संस्कार आज पर्यंत होता चला आया है अन्यथा कभी नहीं हो सक्ता॥

प्र० मनुष्यों की स्वभाव से जो चेष्टा है उसमें सुख और दुःख का

अनुभव भी होता है उससे उत्तर २ काल में क्रमानुसार से विद्या की वृद्धि भी अवश्य होता तब वेदों को भी मनुष्य लोग रच लेंगे. फिर ईश्वर ने वेद रचे ऐसा क्यों मानना उ० इसका समाधान वेदोत्पत्ति के प्रकरण में कर दिया है वहां यही निर्णय किया है कि जैसे इस समय में अन्य विद्वानों से पढ़े बिना कोई भी विद्यावान नहीं होता और इसी के बिना किसी पुरुष में ज्ञान की वृद्धि भी देखने में नहीं आती वैसे ही सृष्टि के आरंभ में ईश्वरोपदेश की प्राप्ति के बिना किसी मनुष्य की विद्या और ज्ञान की बढ़ती कभी नहीं हो सक्ती इस में अशिक्षित बालक और बनवासियों का दृष्टान्त दिया था कि जैसे उस बालक और बन में रहने वाले मनुष्य को यथावत विद्या का ज्ञान नहीं होता तथा अच्छे प्रकार उपदेश के बिना उनको लोक व्यवहार का भी ज्ञान नहीं होता फिर विद्या की प्राप्ति तो अत्यन्त कठिन है इस्से जानना चाहिये कि परमेश्वर के उपदेश रूपी वेद विद्या आने के पश्चात् ही मनुष्यों को विद्या और ज्ञान की उन्नति करनी भी सहज हुई क्योंकि उसके सभी गुण सत्य हैं इस्से उसकी विद्या जो वेद है वह भी नित्य ही है जो नित्य वस्तु है उसके नाम गुण और कर्म भी नित्य ही होते हैं क्योंकि उनका आधार नित्य है और बिना आधार से नाम गुण और कर्मादि स्थिर नहीं हो सक्ते क्योंकि वे द्रव्यों के आश्रय सदा रहते हैं जो अनित्य वस्तु है उसके नाम गुण और कर्म भी अनित्य होते हैं सो नित्य किसको कहना जो उत्पत्ति और बिनाश से पृथक् है तथा उत्पत्ति क्या कहती है कि जो अनेक द्रव्यों के संयोग विशेष से स्थूल पदार्थ का उत्पन्न होना और जब वे पृथक् २ होके उन द्रव्यों के वियोग से

जो कारण में उनकी परमाणु रूप अवस्था होती है उसको बिना
श कहते हैं और जो द्रव्य संयोग से स्थूल होते हैं वे चक्षु आदि इं-
द्रियों से देखने में आते हैं फिर उन स्थूल द्रव्यों के परमाणुओं का
जब वियोग हो जाता है तब सूक्ष्म के होने से वे द्रव्य देख नहीं
पड़ते इसका नाम नाश है क्योंकि अदर्शन कोही नाश कहते हैं
जो द्रव्य संयोग और वियोग से उत्पन्न और नष्ट होता है उसी
को कार्य्य और अनित्य कहते हैं और जो संयोग और वियोग
से अलग है उसकी न कभी उत्पत्ति और न कभी नाश होता है इस
प्रकार का पदार्थ एक परमेश्वर और दूसरा जगत् का कारण है
क्योंकि वह सदा अखंड एक रस ही बना रहता है इसीसे उसको नि-
त्य कहते हैं इस में कणादि मुनि के सूत्र का भी प्रमाण है (सदकार-
ण वन्नित्यम्) वै० अ० ४ सू० १ इस्का अर्थ यह है कि जो किसी का
कार्य्य है कि कारण से उत्पन्न होके विद्यमान होता है उसको अनि-
त्य कहते हैं जैसे मिट्टी से घड़ा होके वह नष्ट भी हो जाता है इ-
सी प्रकार परमेश्वर के सामर्थ्य कारण से सब जगत् उत्पन्न हो
के विद्यमान होता है फिर प्रलय में स्थूलाकार नहीं रहता किंतु
वह कारण रूप तो सदा ही बना रहता है इससे क्या आया कि जो
विद्यमान हो और जिसका कारण कोई भी न हो अर्थात् स्वयं कार-
ण रूप ही हो उसको नित्य कहते हैं क्योंकि जो २ संयोग से उत्पन्न
होता है सो २ बनाने वाले की अपेक्षा अवश्य रखता है जैसे कर्म नियम
और कार्य्य ये सब कर्त्ता नियन्ता और कारण को ही सदा जनाते
हैं और जो कोई ऐसा कहै कि कर्त्ता को भी किसी ने बनाया होगा
तो इससे पूछना चाहिये कि उस कर्त्ता के कर्त्ता को किसने बनाया ?

सी प्रकार यह अनवस्था प्रसंग अर्थात् मर्यादा रहित होताहै जिसकी मर्यादा नहीं है वह व्यवस्था के योग्य नहीं ठहर सक्ता और जो संयोग से उत्पन्न होता है वह प्रकृति और परमाणु आदि के संयोगकरने में समर्थ ही नहीं हो सक्ता इस्मे क्या आया कि जो जिस्से सूक्ष्म होता है वही उसका आत्मा होता है अर्थात् स्थूल में सूक्ष्म व्यापक होता है जैसे लोहे में अग्नि प्रविष्ट होके उसके सब अवयवों में व्याप्त होता है और जैसे जल पृथ्वी में प्रविष्ट होके उसके कणों के संयोग से पिंडा करने में हेतु होताहै तथा उसका छेदन भी करता है वैसेही परमेश्वर सब संयोग और वियोग से पृथक् सब में व्यापक प्रकृति और परमाणु आदि से भी अत्यंत सूक्ष्म और चेतन है इसी कारण से प्रकृति और परमाणु आदि द्रव्यों के संयोग करके जगत् को रच सक्ता है जो ईश्वर उससे स्थूल होता तो उनको ग्रहण और रचन कभी नहीं कर सक्ता क्योंकि जो स्थूल पदार्थ होते हैं वे सूक्ष्म पदार्थों के नियम करने में समर्थ नहीं होते इस से हम लोग प्रकृति और परमाणु आदि के संयोग और वियोग करने में समर्थ नहीं है क्योंकि जो संयोग वियोग के भीतर है वह उसके संयोग वियोग करने में समर्थ नही हो सक्ता तथा जिस वस्तु से संयोग वियोग का आरंभ होता है वह वस्तु संयोग और वियोग से अलग ही होता है क्योंकि वह संयोग और वियोग के आरंभ के नियमों का करता और आदि कारण होता है तथा आदि कारण के अभाव से संयोग और वियोग का होना ही असंभव है इस्से क्या जानना चाहिये कि जो सदा निर्विकार स्वरूप अज अनादि नित्य सत्य सामर्थ्य से युक्त और अनंतविद्यावाला ईश्वर है उसको विद्या से वेदों के

प्रगट होने और उसके ज्ञान में वेदों के सदैव वर्तमान रहनेसे वेदों को सत्यार्थ युक्त और नित्य सब मनुष्यों को मानना योग्यहै यह संक्षेप से वेदों के नित्य होने का विचार किया॥

इति वेद नित्यत्व विचारः

अब वेदों के नित्यत्व विचारके उपरान्त वेदों में कौन२ विषय किस२ प्रकार के हैं इसका विचार किया जाता है वेदों में अवयव रूप विषय तो अनेक हैं परन्तु उनमें चार मुख्य हैं (१) एक विज्ञान अर्थात् सब पदार्थों को यथार्थ जानना (२) दूसरा कर्म (३) तीसरा उपासना और (४) चौथा ज्ञान है विज्ञान उसको कहते हैं कि जो कर्म उपासना और ज्ञान इन तीनों से यथावत् उपयोग लेना और परमेश्वर से लेके तृणपर्य्यंत पदार्थों का साक्षाद्बोध का होना उनसे यथावत् उपयोग का करना इससे यह विषय इन चारों में भी प्रधान है क्योंकि इसी में वेदों का मुख्य तात्पर्य्य है सोभी दो प्रकार का है एक तो परमेश्वर का यथावत् ज्ञान और उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना और दूसरा यह है कि उसके रचे हुए सब पदार्थों के गुणों को यथावत् विचार के उन से कार्य्य सिद्ध करना अर्थात् ईश्वर ने कौन२ पदार्थ किस२ प्रयोजन के लिये रचे हैं और इन दोनों में से भी ईश्वर का जो प्रति पादन है सोही प्रधान है इसमें आगे कठवल्ली आदि के प्रमाण लिखते हैं (सर्वे वेदायत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि चयद्वदन्ति। यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य्यं चरंति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्॥ कठोप० वल्ली २ मं० १५॥) परम पद अर्थात् उसका नाम मोक्ष है

जिस में पर ब्रह्म को प्राप्त होके सदा सुख में ही रहना जो सब आ नन्दों से युक्त सब दुःखों से रहित और सर्वशक्तिमान् पर ब्रह्म है जिस के नाम (ओं) आदि हैं उसी में सब वेदों का मुख्य तात्पर्य्य है इसमें योग सूत्र का भी प्रमाण है (तस्य वाचकः प्रणवः योग शास्त्रे। अ०१ पा०१ सू०२७) परमेश्वर ही का ओंकार नाम है (ओं खं ब्रह्म यजु:० अ०४०) तथा (ओमिति ब्रह्म तैत्तिरी आर ण्य के। प्र०७ अनु०८॥) ओं और खं ये दोनों ब्रह्म के नाम हैं और उसी की प्राप्ति कराने में सब वेद प्रवृत्त हो रहे हैं जिसकी प्राप्ति के आगे किसी पदार्थ की प्राप्ति उत्तम नहीं है क्योंकि जगत् का वर्णन दृष्टांत और उपयोगादि का करना ये सब पर ब्रह्म ॥ को ही प्रकाशित करते हैं तथा सत्य धर्म के अनुष्ठान जिनको तप कहते हैं वेभी परमेश्वर की ही प्राप्ति के लिये हैं तथा ब्र ह्म चर्य्य गृहस्थ वान प्रस्थ और सन्यास आश्रम के सत्या चरण रूप जो कर्म हैं वे भी परमेश्वर की ही प्राप्ति कराने के लिये हैं जिस ब्रह्म की प्राप्ति की इच्छा करके विद्वान् लोग प्रय त्न और उसी का उपदेश भी करते हैं॥ नचिकेता और यम इन दो नों का परस्पर यह संवाद है कि हे नचिकेतः जो अवश्य प्राप्ति क रने के योग्य पर ब्रह्म है उसी का मैं तेरे लिये संक्षेप से उपदेश करता हूं और यहां यह भी जानना उचित है कि अलंकार रूप क था से नचिकेता नाम से जीव और यम से अन्तर्यामी परमात्मा को समझना चाहिये (तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्व वेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तदक्षर मधि गम्यते॥१॥ यत्तद् द्रेश्यम ग्राह्यम ...

म वर्णम चक्षुः श्रोत्रं तदपाणि पादं नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तद व्ययं यद्भूतयोनिं परि पश्यन्ति धीराः॥२॥ मुण्डके १ खं० ड१ म०५।६।) वेदों में दो विद्या हैं एक अपरा दूसरी परा इन में से अपरा यह है कि जिस्से पृथ्वी और तृण से लेके प्रकृति पर्य्यंत पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक२ कार्य्य सिद्ध करना होता है और दूसरी परा कि जिस्से सर्व शक्तिमान् ब्रह्म की यथावत् प्राप्ति होती है यह परा विद्या अपरा विद्या से अत्यंत उत्तम है क्योंकि अपरा काही उत्तम फल परा विद्या है॥

और भी इस विषय में ऋग्वेद का प्रमाण है कि (तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः॥ दिवीव चक्षुराततम्॥१॥ ऋग्वेदे। अष्टके१ अध्याये२ वर्गे७ मंत्रः५॥ अस्यायमर्थः) (विष्णु) अर्थात् व्यापक जो परमेश्वर है उसका (परमं) अत्यन्त उत्तम आनन्द स्वरूप (पदं) जो प्राप्ति होने के योग्य अर्थात् जिसका नाम मोक्ष है उसको (सूरयः) विद्वान् लोग (सदा पश्यन्ति) सब काल में देखते हैं वह कैसा है कि सब में व्याप्त हो रहा है और उसमें देश काल और वस्तु का भेद नहीं है अर्थात् उस देश में है और इस देश में नहीं तथा उस काल में था और इस काल में नहीं उस वस्तु में है और इस वस्तु में नहीं इसी कारण से वह पद सब जगह में सब को प्राप्ति होता है क्योंकि वह ब्रह्म सब ठिकाने परि पूर्ण है इसमें यह दृष्टान्त है कि (दिवी वचक्षुराततम्) जैसे सूर्य का प्रकाश आवर्ण रहित आकाश में व्याप्त होता है और जैसे उस प्रकाशक में नेत्र की दृष्टि व्याप्त होती है इसी प्रकार पर ब्रह्म पद भी स्वयं प्रकाश सर्वत्र व्याप्त वान् हो

रहा है उस पद की प्राप्ति से कोई भी प्राप्ति उत्तम नहीं है इसलिये चारों वेद उसी की प्राप्ति कराने के लिये विशेष करके प्रतिपादन कर रहे हैं इस विषय में वेदांत शास्त्र में व्यास मुनि के सूत्र काभी प्रमाण है (तत्तु समन्वयात) सब वेद वाक्यों में ब्रह्म का ही विशेष करके प्रति पादन है कहीं २ साक्षात् रूप और कहीं २ परंपरा से इसी कारण से वह पर ब्रह्म वेदों का परम अर्थ है तथा इस विषय में यजुर्वेद का भी प्रमाण है कि (यस्मान्नजा॰) जिस पर ब्रह्म से (अन्यः) दूसरा कोई भी (परः) उत्तम पदार्थ (जातः) प्रगट (नास्ति) अर्थात् नहीं है (यआविवेश भु॰) जो सब विश्व अर्थात् सब जगह में व्याप्त हो रहा है (प्रजापतिः प्र॰) वही सब जगत् का पालन कर्त्ता और अध्यक्ष है जिसने (त्रीणिज्योती ᳪ षि) अग्नि सूर्य और बिजुली इन तीन ज्योतियों को प्रजा के प्रकाश होने के लिये (सचते) रच के संयुक्त किया है और जिसका नाम (षोडशी) है अर्थात् (१) ईक्षण जो यथार्थ विचार (२) प्राण जो कि सब विश्व का धारण करने वाला (३) श्रद्धा सत्य में विश्वास (४) आकाश (५) वायु (६) अग्नि (७) जल (८) पृथिवी (९) इंद्रिय (१०) मन अर्थात् ज्ञान (११) अन्न (१२) वीर्य्य अर्थात् बल और पराक्रम (१३) तप अर्थात् धर्मानुष्ठान सत्याचार (१४) मंत्र अर्थात् वेद विद्या (१५) कर्म अर्थात् सब चेष्टा (१६) नाम अर्थात् दृश्य और अदृश्य पदार्थों की संज्ञा येही सोलह कला कहाती हैं ये सब ईश्वर ही के बीच में हैं इस्से उसको षोडशी कहते हैं इन षोडश कलाओं का प्रति पादन प्रश्नोपनिषद् के ६ छठे प्रश्न में लिखा है इस्से परमेश्वर ही वेदों का मुख्य अर्थ है और उस से

अथवा जो यह जगत् है सो वेदों का गौण अर्थ है और इन दोनों में से प्रधान का ही ग्रहण होता है इस से क्या आया कि वेदों का मुख्य तात्पर्य परमेश्वर ही के प्राप्ति कराने और प्रतिपादन करने में है उस परमेश्वर के उपदेश रूप वेदों से कर्म उपासना और ज्ञान तीनों काण्डों का इसलोक और परलोक के व्यवहारों के फलों की सिद्धि और यथावत् उपकार करने के लिये सब मनुष्य इन चार विषयों के अनुष्ठानों में पुरुषार्थ करें यही मनुष्य देह धारण करने के फल हैं॥

आगाड़ी इसके श्री स्वामीजी महाराज ने वेदों का दूसरा विषय कर्मकाण्ड (जो अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधतक सकाम व निष्काम दो प्रकार का होता है) वेदादिक अनेक प्रमाणों से सिद्ध करके भूमिका के पृष्ठ ४६ से लेकर ७१ तक वर्णन किया है निवेदन कार ने उसपर कुछ तर्क वितर्क नहीं किया इसलिये हमने उसकी नकल नहीं की परन्तु वह परमोपकारी होने के कारण सब मनुष्यों के देखने व समझने और अवश्य करने के योग्य है॥

इस कर्मकाण्ड में जहां तहां अग्न्यादि कई देवताओं का ग्रहण किया है उनमें कोई जड़ कोई चेतन्न हैं वे सब व्यवहारिक देव वा देवता कहाते हैं उनका ठीक २ वैसाही व्यवहारिक १० प्रकार का अर्थ किसी में एक किसी में दो वा अधिक व्याकरण रीत्यादि विधान से सिद्ध होता है जैसा कि भूमिका में है॥ इसलिये इनका देवतात्व सब को वैसाही समझना उचित है जैसा कि जिस से व्यवहार का काम निकलता है अर्थात् इन में से कोई उपासना के योग्य नहीं है सब लोगों को उपास्य और परमपूज्य केवल वही परब्रह्म परमेश्वर है जिसने इन सब देवतादिक पदार्थों को निर्माण व

प्रकाशित किया है और उसी में दिव धातु के ठीक २ दसो अर्थ कि जिनमें से पांच जो केवल व्यवहारिक अर्थ बोधक हैं व्यापकता के कारण और शेष पांच जोकि परमार्थ बोधक हैं वे द्योतकता के कारण संघटित होते हैं ॥

ऐसा वेदों का सिद्धान्त स्पष्ट विद्यमान होते जिनको अल्प बुद्धिता के कारण विदित नहीं हुआ उन्हों ने वेदों के विषय में जो जी में आया सो लिख दिया है उनके संदेह निवृत्त्यर्थ महाराज जी ने पृष्ठ ७२ से ८० तक बहुत से वेदादिक प्रमाण लिख कर उनका अर्थ संस्कृत और भाषा में विस्तार पूर्वक प्रकाशित किया है उसका सारांश नीचे लिखकर पीछे वेद संज्ञा विचार ज्यों का त्यों नक़ल होगा ॥

कितने ही आर्य और अंगरेज़ कहते हैं कि वेदों में पृथिव्यादिक भूत पूजा लिखी है आर्य लोगों ने बहुत दिन उनको पूजते २ पीछे से परमेश्वर को जाना यह उनका कहना (इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः ससुपर्णो गरुत्मान् ॥ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः) इत्यादिक अनेक वेद मन्त्रों का अर्थ देख मिथ्या सिद्ध होता है और साबित होता है कि आर्य लोग सृष्टि के आरम्भ से इन्द्र सूर्य वरुण अग्नि कुवेर ईश आदि नामों से उसी एक परमेश्वर को पूजते आए हैं ॥

डाक्टर मोक्ष मूलर साहब ने अपने संस्कृत साहित्य नामक ग्रंथ में लिखा है कि आर्य लोगों को बहुत काल पीछे ईश्वर का ज्ञान हुआ और वेदों के प्राचीन होने में एक भी प्रमाण नहीं मिलता परंतु उनके नवीन होने में अनेक प्रमाण पाये जाते हैं उनमें से एक

हिरण्यगर्भ शब्द का प्रमाण दिया है और कहा कि छन्दोभाग से मंत्र भाग दो सौ वर्ष पीछे बना है और दूसरी यह बात कही है कि वेदों में दो भाग हैं एक छन्द और दूसरा मंत्र उनमें से छन्दो भाग ऐसा है जो सामान्य अर्थ के साथ संबध रखता है और दूसरे की प्रेरणा से प्रकाशित हुआ मालूम पड़ता है कि जिसकी उत्पत्ति बनाने वाले की प्रेरणा से नहीं हो सक्ती और उसमें कथन इस प्रकार का है जैसे अज्ञानी के मुख से अकस्मात् बचन निकला हो उसकी उत्पत्ति में (३१००) इकत्तीस सौ वर्ष व्यतीत हुए हैं और मंत्र भाग की उत्पत्ति में (२९००) उनतीस सौ बर्ष हुए हैं उसमें (अग्निः पूर्वेभिः०) इस मंत्र का भी प्रमाण दिया है सो उनका यह कहना ठीक नहीं हो सक्ता क्योंकि उन्हों ने (हिरण्य गर्भः०) और (अग्निःपूर्वेभिः०) इन दोनों मंत्रों का अर्थ यथावत् नहीं जाना है तथा मालूम होता है कि उनको हिरण्यगर्भ शब्द नवीन जान पड़ा होगा इस विचार से कि हिरण्य नाम है सोने का वह सृष्टि से बहुत पीछे उत्पन्न हुआ है अर्थात् मनुष्यों की उन्नति राजा और प्रजा के प्रबंध होने के उपरान्त पृथिवी में से निकाला गया है सो यह बात भी उनकी ठीक नहीं हो सक्ती क्योंकि इस शब्द का अर्थ यह है कि ज्योति कहते हैं विज्ञान को सो जिसके गर्भ अर्थात् स्वरूप में है ज्योति अमृत अर्थात् मोक्ष है सामर्थ्य में जिसके और ज्योति जो प्रकाश स्वरूप सूर्य्यादिलोक जिस के गर्भ में हैं तथा ज्योति जो जीवात्मा जिसके गर्भ अर्थात् सामर्थ्य में तथा ज्योति यशः सत्कीर्ति जो धन्यवाद जिसके स्वरूप में है इसी प्रकार ज्योति इन्द्र अर्थात् सूर्य्य वायु और अग्नि ये सब जिस के

सामर्थ्य में हैं ऐसा जो एक परमेश्वर है उसी को हिरण्यगर्भ कहते हैं इस हिरण्यगर्भ शब्द के प्रयोग से वेदों का उत्तम पन और सनातन पन तो यथावत् सिद्ध होता है परन्तु इस से उनका नवीन पन सिद्ध कभी नहीं हो सक्ता इस से डाक्टर मोक्ष मूलर साहेब का कहना जो वेदों के नवीन होने के विषय में है सो सत्य नहीं है और जो उन्हों ने (अग्निः पूर्वेभिः॰) इसका प्रमाण वेदों के नवीन होने में दिया है सोभी अन्यथा है क्योंकि इस मंत्र में वेदों के करता त्रिकालदर्शी ईश्वर ने भूत भविष्यत् वर्त्तमान तीनों कालों के व्यवहारों को यथावत् जानके कहा है कि वेदों को पढ़ के जो विद्वान् हो चुके हैं वा जो पढ़ने हैं वे प्राचीन और नवीन ऋषि लोग मेरी स्तुति करें तथा ऋषि नाम मंत्र प्राण और तर्क का भी है इन से ही मेरी स्तुति करनी योग्य है इसी अपेक्षा से ईश्वर ने इस मंत्र का प्रयोग किया है इससे वेदों का सनातन पन और उत्तम पन तो सिद्ध होता है किंतु उन हेतुओं से वेदों का नवीन होना किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सक्ता इसी हेतु से डाक्टर मोक्ष मूलर साहेब का कहना ठीक नहीं ॥

इस में विचारना चाहिये कि वेदों के अर्थ को यथावत् बिना विचारे उनके अर्थ में किसी मनुष्य को हठ से साहस करना उचित नहीं क्योंकि जो वेद सब विद्याओं से युक्त हैं अर्थात् उनमें जितने मंत्र और पद हैं वे सब संपूर्ण सत्य विद्याओं के प्रकाश करने वाले हैं और ईश्वर ने वेदों का व्याख्यान भी वेदों से ही कर रक्खा है क्योंकि उनके शब्द धात्वर्थ के साथ योग रखते हैं इसमें निरुक्त का भी प्रमाण है जैसा कि यास्क मुनिने कहा है (तत्॰ इतीत॰)

इत्यादि वेदों के व्याख्यान करने के विषय में ऐसा समझना कि जब तक सत्य प्रमाण सुतर्क वेदों के शब्दों का पूर्वा पर प्रकरणों, व्याकरण आदि वेदांगों, शतपथ आदि पूर्व मीमांसा आदि शास्त्रों, और शाखांतरों, का यथावत् बोध नहो और परमेश्वर का अनुग्रह उत्तम विद्वानों की शिक्षा उनके संग से पक्षपात छोड़ के आत्मा की शुद्धि नहो तथा महर्षि लोगों के किये व्याख्यानों को न देखे तब तक वेदों के अर्थ का यथावत् प्रकाश मनुष्यों के हृदय में नहीं होता। इसलिये सब आर्य्य विद्वानों का सिद्धांत है कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से युक्त जो तर्क है वही मनुष्यों के लिये ऋषि है इससे यह सिद्ध होता है कि जो सायनाचार्य्य और महीधरादि अल्प बुद्धि लोगों के झूठे व्याख्यानों को देखके आजकाल के आर्य्यावर्त्त और यूरूप देश के निवासी लोग जो वेदों के ऊपर अपनी २ देश भाषाओं में व्याख्यान करते हैं वे ठीक २ नहीं हैं और उन अनर्थ युक्त व्याख्यानों के मानने से मनुष्यों को अत्यन्त दुःख प्राप्त होता है, इसे बुद्धिमानों को उन व्याख्यानों का प्रमाण करना योग्य नहीं तर्क का नाम ऋषि होने से सब आर्य्य लोगों का सिद्धान्त है कि सब कालों में अग्नि जो परमेश्वर वही उपासना करने के योग्य है॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेद नित्यत्व विचारो नाम द्वितीयो मयूखः॥२॥

अथ वेद संज्ञा विचारः

अथ कोयं वेदो नाम मन्त्र भाग संहितेत्याह । किंच मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेद नाम धेयमिति कात्यायनोक्ते ब्राह्मण भाग स्यापि वेद संज्ञा कुतो न स्वीक्रियत इति। मैवंवाच्यम् । न ब्राह्मणा नांवेद संज्ञा भवितुमर्हति । कुतः । पुराणे तिहास संज्ञकत्वा द्वेद व्याख्यानत्वादृषिभिरुक्तत्वादनीश्वरोक्तत्वात्कात्यायनभिन्नै र्ऋषिभिर्वेद संज्ञाया मस्वीकृतत्वान्मनुष्य बुद्धि रचितत्वाच्चेति ॥

भाषार्थ

प्र० वेद किन का नाम है उ० मंत्र संहिताओं का प्र० जो कात्यायन ऋषिने कहा है कि मंत्र और ब्राह्मण ग्रंथों का नाम वेद है फिर ब्राह्मणभाग को भी वेदों में ग्रहण आप लोग क्यों नहीं करते हैं उ० ब्राह्मण ग्रंथ वेद नहीं हो सके क्योंकि उन्हींका नाम इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा, और नाराशंसी भी है वे ईश्वरोक्त नहीं हैं किंतु महर्षि लोगों के किये वेदों के व्याख्यान हैं एक कात्यायन को छोड़ के किसी अन्य ऋषि ने उनके वेद होने में साक्षी नहीं दी है और देहधारी पुरुषों के बनाये हैं इन हेतुओं से ब्राह्मण ग्रंथों की वेद संज्ञा नहीं हो सक्ती और मंत्र संहिताओं का वेद नाम इस लिये है कि ईश्वर रचित और सब विद्याओं का मूल है ॥

भाष्यम्

यथा ब्राह्मण ग्रन्थेषु मनुष्याणां नाम लेख पूर्वका लौकिका इतिहासाः सन्ति नचैवं मन्त्रभागे। किंचभो। त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ॥ २ ॥

यजुः० अ० ३ मं० ६२। इत्यादीनि वचनान्यृषीणां नामाङ्कितानि यजुर्वेदादिष्वपि दृश्यन्ते। अनेनेतिहासादि विषये मंत्र ब्राह्मणयोस्तुल्यता दृश्यते पुनर्ब्राह्मणानामपि वेद संज्ञा कुतो नमन्यते। अ भू० पृ० मि०। जैयाना जमदग्नि कश्यपौ देह धारिणो मनुष्यस्य नाम्नोस्तः। अत्र प्रमाणम्। चक्षुर्वै जमदग्नि र्ऋषिर्यदेनेन जगत्पश्यत्यथो मनुते तस्माच्चक्षुर्जमदग्नि र्ऋषिः। श० का० ८ अ० १। कश्यपोवै कूर्मः प्राणोवै कूर्मः श० का० ७ अ० ५। अनेन प्राणस्य कूर्मः कश्यपश्च संज्ञास्ति। शरीरस्यना भीतस्य कर्मी कारणमस्थितेः। अनेन मन्त्रेणेश्वरः प्रार्थ्यते तद्यथा हे जगदीश्वर भवत्कृपया नोऽस्माकं जमदग्नि संज्ञकस्य चक्षुषः कश्यपाख्यस्य प्राणस्य च त्र्यायुषं त्रिगुणमर्थात् त्रीणि शतानि वर्षाणि यावत्तावदायुरस्तु। चक्षुरिन्द्रियोपलक्षणमिन्द्रियाणां प्राणो मनआदीनाञ्च (यद्देवेषु त्र्यायुषम्) अत्र प्रमाणम्। विद्वांसो हि देवाः। श० कं० ३ अ० ७। अनेन विदुषां देव संज्ञास्ति। देवेषु विद्वत्सु यादृशं प्रभाव गुणं त्रिगुणमायुर्भवति (तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्) तदिन्द्रियाणां मनःप्राणानां नोऽस्माकं पूर्वोक्तं सुखयुक्तं त्रिगुणमायुरस्तु भवेत्। येन सुखयुक्ता वयं तावदायुर्भुञ्जीमहि। अनेनान्यदप्युपदिश्यते। ब्रह्मचर्यादि सुनियमैर्मनुष्यैरेतत् त्रिगुणमायुः कर्तुं शक्यमस्तीति गम्यते। अतोर्थाभिधायकैर्जमदग्न्यादिभिः शब्दैरर्थमात्रं वेदेषु प्रकाश्यते। अतो नात्र मन्त्रभागे हीतिहास लेशोप्यस्तीत्यवगन्तव्यम्। अतो यच्च सायणाचार्यादिभिर्वेदप्रकाशादिषु यत्र कुत्रेतिहासवर्णनं कृतं तद्भ्रममूलमस्तीति मन्तव्यम्।

भाषार्थः

प्र० जैसे ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रंथों में याज्ञवल्क्य मैत्रेयी गार्गी और जनक आदि के इतिहास लिखे हैं वैसे ही (त्र्यायुषं जमदग्नेः) इत्यादि वेदों में भी पाये जाते हैं इस्से मंत्र और ब्राह्मण भाग ये दोनों बराबर होते हैं फिर ब्राह्मणग्रंथों को वेदों में क्यों नहीं मानते हो उ० ऐसा भ्रम मत करो क्योंकि जमदग्नि और कश्यप ये नाम देह धारी मनुष्यों के नहीं हैं इसका प्रमाण शत पथ ब्राह्मण में लि-खा है कि चक्षु का नाम जमदग्नि और प्राण का नाम कश्यप है इस कारण से यहां प्राण से अंतः करण और आंख से सब इन्द्रियों का ग्रहण करना चाहिये अर्थात् जिनसे जगत् के सब जीव बाहर और भीतर देखते हैं (त्र्यायुषं ज०) सो इस मंत्र से ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिये कि हे जगदीश्वर आप के अनुग्रह से हमारे प्राण आदि अंतः करण और आंख आदि सब इन्द्रियों की (३००) तीन सौ वर्ष तक उमर बनी रहे (यद्देवेषु०) सो जैसी विद्वानों के बीच में विद्यादि शुभगुण और आनंद युक्त उमर होती है (तन्नोअस्तु०) वैसी ही हम लोगों की भी हो तथा (त्र्यायुषंजमदग्नेः०) इत्यादि उपदेश से यह भी जाना जाता है कि मनुष्य ब्रह्मचर्य्यादि उत्तम नियमों से त्रिगुण चतुर्गुण आयु कर सकता है अर्थात (४००) चार सौ वर्ष तक भी सुख पूर्वक जी सकता है इस्से यह सिद्ध हुआ कि वेदों में सत्य अर्थ के वाचक शब्दों से सत्य विद्याओं का प्रकाश किया है लौकिक इतिहासों का नहीं इस्से जो साय-णाचार्यादि लोगों ने अपनी २ बनाई टीकाओं में वेदों में जहां तहां इतिहास वर्णन किये हैं वे सब मिथ्या हैं ॥

भाष्यम्

नथ। ब्राह्मण ग्रन्था नामेव पुराणे तिहासादिनामास्ति न ब्रह्मवैव र्त श्रीमद्भागवतादीनां चेति निश्चीयते। किंच भोः। ब्रह्मयज्ञ विधाने यत्र क्वचि ब्राह्मण मूल ग्रन्थेषु। यद् ब्राह्मणानी तिहासा न्पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरि त्यादीनि वचनानि दृश्यन्ते। एषां मूल मथर्व वेदे प्यस्ति। स बृहतीं दिशमनु व्यचलत। तमि तिहासश्च पुराणं च गाथाश्च नाराशंसी श्चानुव्यचलन। इति हासस्य च वै सपुराणस्य च गाथानां च नाराशंसीनां च प्रियं धा म भवति य एवं वेद ॥१॥ अथर्व० कां० १५ प्र० ३० अनु० १। अतो ब्राह्मण ग्रन्थेभ्यो भिन्ना भागवतादय ग्रन्था सेतिहासा दि संज्ञया केनापि न गृह्यन्ते। ये वदन्ति। ... ब्राह्मण ग्रन्थानां ... न ग्रहणं जायते ... श्रीमद्भागवतादी ... मिति ... ब्राह्मणग्रन्थे ... तिहासादीना मन्तर्भावात। ... देवा ... सं ... आसन्नित्यादय इतिहासा ग्राह्याः। ... रेवनू ... ... मीदेकमेवा द्वितीयम। छान्दोग्य० ... प्र० ६ ... आत्मा वा इद मेक मेवाग्र आसीन्नान्यत् किंचन मि ... ... नरय ... एय कोप नि० अ० १ खं० १॥ आपोह वा इदम ... सलिल मेवास। श० कं० ११ अ० १। इदं वा अग्रेनेव किंचनासीत्। इत्यादीनि ... तः पूर्वावस्था कथन पूर्व कारिण वचना नि ब्राह्मणा न्तर्ग तान्येव पुराणानि ग्राह्याणि। कल्पा मन्त्रार्थ सामर्थ्य प्रकाशकाः ... ॥ इषे त्वोर्जे त्वेति व्याख्ये तदाह। यद् इषे त्वेत्यूर्जे त्वेति ... इष्टा हवे सो जायते तस्मै तदाह सविताबै देवानां प्रसविता सविता ... ... श० कं० १ अ० ७। इत्यादयो ग्राह्याः। गाथा या

ज्ञवल्क्य जनक संवादो यथा शतपथ ब्राह्मणे गार्गी मैत्रेय्यादीनां परस्परं प्रश्नोत्तर कथन युक्ताः सन्तीति। नाराशंस्यश्च। अत्राहुर्यास्काचार्य्याः। नराशंसो यज्ञ इति कात्थक्यो नरा अस्मिन्नासीनाः शंसन्त्यग्निरिति शाकपूणिर्नरैः प्रशस्यो भवति। नि॰ अ॰ ८ खं॰ ६॥ नरा यत्र प्रशंसा नृभिर्यत्र प्रशस्यते ता ब्राह्मण निरुक्त ग्रन्थान्तर्गताः कथा नाराशंस्यो ग्राह्या नातोऽन्या इति किञ्च तेषु तेषु ब्राह्मणेष्वपीदमेव विज्ञायते यत् यस्माद् ब्राह्मणानीति संज्ञा मर्यादितिहासादिस्तेषां संज्ञेति। तद्यथा। ब्राह्मणान्येवेतिहासान् जानीयात् पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति॥

भाषार्थ

और इस हेतु से ब्राह्मण ग्रन्थों का ही इतिहासादि नाम जानना चाहिये श्रीमद्भागवतादि का नहीं प्र॰ जहां २ ब्राह्मण और सूत्र ग्रन्थों में (ब्राह्मण, इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा, नाराशंसी) इत्यादि वचन देखने में आते हैं तथा अथर्व वेद में भी इतिहास पुराणादि नामों का लेख है इस से ब्राह्मण ग्रन्थों से भिन्न ब्रह्मवैवर्त्त श्रीमद्भागवत महाभारतादि का ग्रहण इतिहासपुराणादि नामों से क्यों नहीं करते हो उ॰ इनके ग्रहण में कोई भी प्रमाण नहीं है क्योंकि उन में भनों के परस्पर बिरोध और लड़ाई आदि की असंभव मिथ्या कथा अपने २ मत के अनुसार लोगों ने लिख रक्खी हैं इस से इतिहास और पुराणादि नामों में इनका ग्रहण करना किसी मनुष्य को उचित नहीं जो ब्राह्मण ग्रन्थों में (देवासुराः संपन्ना आसन) अर्थात् देव विद्वान और असुर

मूर्ख ये दोनों युद्ध करने को तत्पर हुए थे इत्यादि कथाओं का नाम इतिहास है (सदेवसो०) अर्थात् जिसमें जगत् की उत्पत्ति आदि का वर्णन है उस ब्राह्मण भाग का नाम पुराण है (इम वोर्जंत्वोर्तिव इत्ये०) जो वेद मंत्रों के अर्थ अर्थात जिनमें द्रव्यो के सामर्थ्य का कथन किया है उसका नाम कल्प है इसी प्रकार जैसे शत पथ ब्राह्मण में याज्ञ· वल्क्य जनक गार्गी मैत्रेयी आदि की कथाओं का नाम गाथा है और जिनमें नर अर्थात् मनुष्य लोगों ने ईश्वर धर्म आदि पदार्थ विद्याओं और मनुष्यों की प्रशंसा की है उनको नाराशंसी कहते हैं (ब्राह्म· णानी तिहासान०) इस वचन में ब्राह्मणानि संति और इतिहासा· दि संज्ञा है अर्थात् ब्राह्मण ग्रंथों का नाम इतिहास पुराण क· ल्प गाथा और नाराशंसी है सो ब्राह्मण और निरुक्तादि ग्रन्थों में जो २ जैसी २ कथा लिखी हैं उन्हीं का इतिहासादि से ग्रहण करना चाहिये अन्य का नहीं ॥

भाष्यम्

अन्यदप्यत्र प्रमाणमस्ति न्यायदर्शन भाष्ये। वाक्यविभागस्य चा· र्थ ग्रहणात् ।१। अ०२ आ०२ सू०६०। अस्योपरि वात्स्याय न भाष्यम। प्रमाणं शब्दो यथा लोके विभागश्च ब्राह्मण वाक्या नां त्रिविधः अयमभिप्रायः। ब्राह्मणग्रंथ शब्दा लौकिका एव न वैदिका इति तेषां त्रिविधो विभागोलक्ष्यते। सू० विध्यर्थवादानुवादव· चन विनियोगात् ॥२॥ अ०२ आ०२ सू०६१॥ अस्योप० वा०भा० । त्रिधा खलु ब्राह्मण वाक्यानि विनि युक्तानि विधि वचना न्यर्थ वाद वचना न्यनु वचना नीति तत्र। सू० विधिर्विधायकः॥३॥अ० २ आ०२ सू०६२॥ अस्योप० वा० भा०। यद्वाक्यं विधायकम् चो·

दकं सविधिः। विधिस्तु नियोगोऽनुज्ञा वा यथाग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकाम इत्यादि। ब्राह्मण वाक्यानामिति शेषः। मू० स्तुतिर्निन्दा परकृतिः पुराकल्प इत्यर्थवादः॥४॥ अ० २ आ० १ सू० ६३। अस्योप० वा० भा० विधेः फलवाद लक्षणा या प्रशंसा सा स्तुतिः संप्रत्ययार्थं स्तूयमानं श्रद्दधीतेति प्रवर्त्तिका च फलश्रवणात् प्रवर्त्तते सर्वजिता वै देवाः सर्वमजयन् सर्वस्याप्त्यै सर्वस्य जित्यै सर्वस्यैतेनाप्नोति सर्वं जयतीत्येवमादि। अनिष्टफलवादो निन्दा वर्जनार्थं निन्दितं न समाचरेदिति। स एष वा प्रथमो यज्ञो यज्ञानां यज्ज्योतिष्टोमो य एतेनानिष्ट्वाऽन्येन यजते गर्त्ते पतत्ययमेवैतज्जीर्यते वा इत्येवमादि। अन्यकर्तृकस्य व्याहतस्य विधेर्वादः परकृतिः। हुत्वा वपामेवाग्रेऽभिघारयन्ति। अथ पृषदाज्यं तदु ह चरकाध्वर्यवः पृषदाज्यमेवाग्रेऽभिघारयन्ति। अग्नेः प्राणाः पृषदाज्यं स्तोममित्येवमभिदधतीत्येवमादि। ऐतिह्यसमाचरितो विधिः पुराकल्प इति। तस्माद्वा एतेन ब्राह्मणा हविः पवमानं सामस्तोमं अस्तौषन् योनेर्यज्ञं प्रतनवामह इत्येवमादि। कथं। परकृतिपुराकल्पौ अर्थवादाविति। स्तुतिनिन्दावाक्येनाभिसंबन्धाद्विध्याश्रयस्य कस्यचिदर्थस्य द्योतनादर्थवाद इति॥

भावार्थ

ब्राह्मण ग्रन्थों की इतिहासादि संज्ञा होने में और भी प्रमाण है जैसे लोक में तीन प्रकार के बचन होते हैं वैसे ब्राह्मण ग्रंथों में भी हैं उन में से एक विधिवाक्य है (देवदत्तो ग्रामम गच्छतु सुखार्थम्। सुख के लिये देवदत्त ग्राम को जाय इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में भी हैं (अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः) जिसको स्वर्ग

की रक्षा हो वह अग्निहोत्रादि यज्ञों को करे दूसरा अर्थवाद है जो कि चार प्रकार का होता है एक स्तुति अर्थात् पदार्थों के गुणों का प्रकाश करना जिस्से मनुष्यों की श्रद्धा उत्तम काम करने और गुणों के ग्रहण मेंही हो दूसरी निन्दा अर्थात् बुरे काम करने में दोषों का दिखलाना जिस्से उनको कोई न करे तीसरे (परकृतिः) जैसे इस लोग ने बुरा काम किया इस्से उसको दंड मिला और साहूकार ने अच्छा काम किया इस्से उसकी प्रतिष्ठा और उन्नति हुई चौथा (पुराकल्प) अर्थात् जो बात पहिले हो चुकी हो जैसे जनक की सभा में याज्ञवल्क्य गार्गी शाकल्य आदि ने इकट्ठे होके आपस में प्रश्नोत्तर रीति से संवाद किया था इत्यादि इतिहासों को पुराकल्प कहते हैं॥

भाष्यम्

सू० विधिविहितस्यानुवचनमनुवादः॥५॥ अ०२ आ०२ सू० ६४॥ अस्योप० वा० भा०। विध्यनुवचनं चानुवादो विहितानुवचनं च पूर्वः शब्दानुवादोऽपरोऽर्थानुवादः। सू० न चतुष्ट्वमैतिह्यार्थापत्तिसंभवाभावप्रामाण्यात्॥६॥ अ०२ आ०२ सू०॥१॥ अस्योप० वा० भा०। न चत्वार्य्येव प्रमाणानि किं तर्हि। ऐतिह्यमर्थापत्तिः संभवोऽभाव इत्येतान्यपि प्रमाणानि। इति होचुरित्यनिर्दिष्टप्रवक्तृकं प्रवादपारंपर्य्यमैतिह्यम्। अनेन प्रमाणेन। पेतिहासादि नामभिर्ब्राह्मणान्येव गृह्यन्ते नान्यदिति॥

भाषार्थ

इसका तीसरा भाग अनुवाद है अर्थात् जिसका पूर्व विधान करके उसी का स्मरण और कथन करना सो भी दो प्रकार का है एक शब्द

का और दूसरा अर्थ का जैसे वह विद्या को पढ़े यह शब्दानुवाद है विद्या पढ़ने से ही ज्ञान होता है इस को अर्थानुवाद कहते हैं जिसकी प्रतिज्ञा उसी में हेतु उदाहरण उपनय और निगमन को घटाना हो जैसे परमेश्वर नित्य है यह प्रतिज्ञा है विनाश रहित होने से यह हेतु है आकाश के समान है इसको उदाहरण कहते हैं जैसा आकाश नित्य है वैसा परमेश्वर भी है इसको उपनय कहते हैं और इन चारों का क्रम से उच्चारण कर के पक्ष में यथावत योजना करने को निगमन कहते हैं जैसे परमेश्वर नित्य है विनाश रहित होने से आकाश के समान जैसा आकाश नित्य है वैसा परमेश्वर भी है इत्यं इसमें समझ लेना चाहिये कि जिस शब्द और अर्थ का दूसरी बार उच्चारण और विचार हो इस को अनुवाद कहते हैं सो ब्राह्मण पुस्तकों में यथावत् लिखा है इस हेतु से भी ब्राह्मण पुस्तकों का नाम इतिहास आदि जानना चाहिये क्योंकि इनमें इतिहास पुराण कल्प गाथा और नाराशंसी ये पांच प्रकार की कथा सब ठीक २ लिखी हैं और भागवतादि को इतिहासादि नहीं जानना चाहिये क्योंकि उनमें मिथ्या कथा बहुत सी लिखी हैं ॥

भाष्यम्

अन्यच्च । ब्राह्मणानि तु वेदव्याख्यानान्येवसन्ति नैव वेदाख्यानीति । कुतः । इषे त्वोर्जे त्वेति श॰ कां॰ १ अ॰ ७ । इत्यादीनि मंत्रप्रतीकानि धृत्वा ब्राह्मणेषु वेदानां व्याख्यान करणात् ॥

भाषार्थ

ब्राह्मण ग्रंथों की वेदों में गणना नहीं हो सकी क्योंकि (इषे त्वोर्जे त्वेति)

इस प्रकार से उनमें मंत्रों की प्रतीक धर २ के वेदों का व्याख्यान किया है और मंत्र भाग संहिताओं में ब्राह्मण ग्रंथों की एक भी प्रतीक कहीं नहीं देखने में आती इस्से जो पूर्वोक्त मूल मंत्र अर्थात चार संहिता हैं वेही वेद हैं ब्राह्मण ग्रंथ नहीं ॥

भाष्यम

अन्यच्च महाभाष्येपि । केषां शब्दानाम् लौकिकानां वैदिकानाञ्च । तत्र लौकिकास्तावत् । गौरश्वः पुरुषोहस्ती शकुनिर्मृगो ब्राह्मण इति । वैदिकाः खल्वपि । शन्नो देवीरभिष्टये । इषे त्वोर्जेत्वा । अग्निमीळे पुरोहितम् । अग्न आयाहि वीतये इति । यदि ब्राह्मण ग्रंथा नामपि वेद संज्ञाभीष्टा भूत्तर्हि तेषामप्युदाहरणमदात् । अत्र महाभाष्यकारेण मन्त्र भागस्यैव वेद संज्ञां मत्वा प्रथम मंत्र प्रतीकानि वैदिकेषु शब्देषूदाहृतानि । किंतु यानि गौरश्व इत्यादीनि लौकिकोदाहरणानि दत्तानि तानि ब्राह्मणादि ग्रंथेष्वेव घटन्ते । कुतः । अष्टाध्यायां शब्दव्यवस्थादर्शनात् । द्वितीया ब्राह्मणे ॥ १ ॥ अ० २ पा० ३ । चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि । २ । अ० २ पा० ३ । पुराण प्रोक्तेषु ब्राह्मण कल्पेषु ॥ ३ ॥ अ० ४ पा० ३ । इत्यष्टाध्याय्यां सूत्राणि । अत्रापि पाणिन्याचार्यैर्वेद ब्राह्मणयोर्भेदेनैव प्रतिपादितम । तद्यथा पुराणैः । प्राचीनैर्ब्रह्मादृषिभिः प्रोक्ता ब्राह्मणा कल्पग्रन्था वेद व्याख्यानाः सन्ति । अत एवैतेषां पुराणेतिहास संज्ञा कृतास्ति । यद्यत्र छन्दो ब्राह्मणयोर्वेद संज्ञा भीष्टा भवेत्तर्हि चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसीति छन्दोग्रहणं व्यर्थं स्यात् । कुतः । द्वितीया ब्राह्मणेति ब्राह्मण ग्रंथस्य प्रकृतत्वात । अतो विज्ञायते न ब्राह्मण ग्रंथानां वेद संज्ञास्तीति । अतः किं सिद्धम । छन्दोभि ब्राह्मणानां नामभिः । अत्र

प्रमाणम् । ब्रह्म वै ब्राह्मणः क्षत्रं राजन्यः। पृ० कां० १३ अ० १॥ समानार्थी वेतौ वृष शब्दो वृषन् शब्दश्च ब्रह्मन् शब्दो ब्राह्मण शब्दश्च। इति व्याकरण महाभाष्ये। अ०५ पा०१ आ० १॥ चतुर्वेद विद्भि ब्रह्मभिर्ब्राह्मणै र्महर्षिभिः प्रोक्तानि यानि वेद व्याख्यानानि तानि ब्राह्मणानि। अन्यच्च। कात्यायनेना पि ब्रह्मणा वेदेन सहचारित्वात्सह चारोपाधिं मत्वा ब्राह्मणानां वेद संज्ञा संमतेति विज्ञायते तन्नापि न सम्यगस्ति। कुतः। एवं तेनानुक्तत्वादनेकैरन्यैर्ऋषिभिरगृहीतत्वात्। अनेनापि न ब्राह्मणानां वेद संज्ञा भवितु मर्हतीति। इत्यादि बहुभिः प्रमाणै र्मन्त्राणा मेव वेद संज्ञा न ब्राह्मण ग्रंथानामिति सिद्धम्

भाषार्थ

ब्राह्मण ग्रंथों की वेद संज्ञा नहीं होने में व्याकरण महाभाष्यका भी प्रमाण है जिसमें लोक और वेदों के भिन्न २ उदाहरण दिये हैं जैसे गौरश्वः० इत्यादि लोक के और शन्नो देवीरभिष्टय इत्यादि वेदों के हैं किन्तु वैदिक उदाहरणों में ब्राह्मणों का एक भी उदाहरण नहीं दिया और गौरश्वः इत्यादि जो लोक के उदाहरण दिये हैं ये सब ब्राह्मण पुस्तकों के हैं क्योंकि उनमें ऐसाही पाठ है इसी कारण से ब्राह्मण पुस्तकों की वेद संज्ञा नहीं हो सकी और कात्यायन जी नाम से जो दोनों की वेद संज्ञा होने में वचन है सो सहचार उपाधि लक्षणा से किया हो तो भी नहीं बन सका क्योंकि जैसे किसी ने कहा कि उस लकड़ी को भोजन कराहो और दूसरे ने इसनेईश्वर से तुरंत जान लिया कि लकड़ी जड़ पदार्थ होने से भोजन नहीं कर सक्ती किंतु जिस मनुष्य के हाथ में लकड़ी है उसको भो

जन कराना चाहिये इस प्रकार से कहा हो तो भी मानने के योग्य नहीं हो सक्ता क्योंकि इसमें अन्य ऋषियों की एक भी साक्षी नहीं है इस से यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्मा नाम ब्राह्मण का है सो ब्रह्मादि जो वेदों के जानने वाले महर्षि लोगथे उन्हीं के बनाये हुए ऐतरेय शतपथ आदि वेदों के व्याख्यान हैं इसी कारण से उनके किये ग्रन्थों का नाम ब्राह्मण हुआ है इससे निश्चय हुआ कि मंत्र भाग की ही वेद संज्ञा है ब्राह्मण ग्रंथों की नहीं ॥

भाष्यम्

किंचभोः। ब्राह्मणग्रंथानामपि वेदवत्प्रामाण्यं कर्त्तव्य माहोस्वि न्नेति। अत्रब्रूमः। नैतेषां वेदवत्प्रामाण्यं कर्त्तुं योग्यमस्ति। कुत ईश्वरोक्ताभावात्तदनुकूलतयैव प्रमाणार्हत्वाच्चेति। परंतु साक्षि भानि परतः प्रमाण योग्यान्येवेति॥

भाषार्थ

प्र० हम यह पूछते हैं कि ब्राह्मण ग्रन्थों का भी वेदों के समान प्रमाण करना उचित है वा नहीं उ० ब्राह्मण ग्रंथों का प्रमाण वेदों के तुल्य नहीं हो सकता क्योंकि वे ईश्वरोक्त नहीं हैं परंतु वेदोंके अनुकूल होने से प्रमाण के योग्य तो हैं॥

इति वेद संज्ञा विचारः॥

यस्याः आनन्दो विलसति पुरो ब्रह्म निर्दिनः आनन्दस्य आत्मा निवसति मुदा सत्य निलया॥ इयं ख्यातिर्यस्य निखिल गुणराजी प्रचार णा स्य ननाः यंग्रन्थो रचित इति बोद्धव्य मनघाः॥१॥ यह श्लोक स्वयं स्वामी जी महाराज ने ग्रन्थ निर्माण बोधक बनाया है॥

अवदेखिये

आर्यगण। भरतखंड से लेकर यूरूप व आमेरिका तक इस ऋग्वे दादि भाष्य और भूमिका के लेने व देखने और सहायता करने वाले एक से एक विशेष गुणज्ञ गुणवान् विद्वान् बुद्धिमान् और धार्मिक राजे महाराजे और बड़े २ राज्याधिकारी आदि हजा रों सत्पात्र और सत्पुरुष हैं उनमें से थोड़ों का नाम यहां नीचे इस लिये लिखा जाता है कि इस ग्रंथ के अवलोकन करने वालों को इन्हें देख ऐसों की बुद्धि में भ्रम डालने* वालों की योग्यता भली भांति प्रकाशित हो जावे॥

ग्राहकाभिधान सूचीपत्रम्

ग्राहक संख्या	ग्राहक संख्या भूमिका	नाम	पता
१	५	राजमान्य राजे श्रीगो-पाल राव हरी देशमुख	जज दक्षिण नाशिक जिलाक-बंबई हाता
२	४९	कृष्णराव विठ्ठल विंदरकर	जज दक्षिण मिरज
३	५७२	महादेव गोविंद रानडे	जज पूना बम्बई हाता
४	२५	रामचन्द्र गोपाल देशमुख	जज गायकवाड़ गुजरात दक्षिण बड़ौदा
५	४०१	लालशंकर उमाशंकर	सबआर्डिनेंट जज पंडरपुर गिर गांव बैंकरोड बम्बई हाता
६	५०	मारणलाल मथुरा दास	डिप्टीकल्लकर भड़ौंच गुजरात
७	१६०	रा०रा० भास्कर बालकृष्ण निमथे	डिप्टीइन्स्पेक्टर नाशिक

*जैसे राजा शिव प्रसाद आदि

८	१५१	रा॰रा॰ शिवराव बापूजी	हेड मास्टर अंगरेजी स्कूल नासि
		पगारये वि॰ए॰	क
९	२२	बाबू हरिश्चंद्र चिन्ता	फोटोग्राफ़र बम्बई
		मणि	
१०	१८०	भास्कर पांडुरंग गोपाल	गिरगांव बम्बई हाना
११	१५६	रावबहादुर विष्णु मोरे	नासिक
		श्वर भिडे	
१२	२४०	अंणा साहब पटवर्धन	रईस आज़म पूना बंबई
१३	२४१	भाऊ साहब मेंडन्कर	रईस आज़म पूना बंबई
१४	२६०	रा॰रा॰ गंगाधर वासुदेव	दीक्षित जागीरदार नासिक
		टकले	
१५	५१२	रिवरेंड पिटरसनाईफो	छंद वाराणसी बी॰
		र्स	
१६	१६	भरटी माधोराव	दीवान गुजरात गायकवाड
१७	२८	दीवान मणीभाई जस	बड़ौदा
		भाई	काठियावाड़ कच्छ भुज बंबई
१८	५५०	मिस्टर रंगपा	
			मंगेश मांजेश्वर काग़ज़ी मोद्दा
१९	९५	ठाकुर रंजीत सिंह	मंगलूर एम॰सी॰ मदरास हाथा
			अचरोल वाले जागीरदार सवाई
२०	१२४	पंडित सालिगराम	जैपुर
२१	३	पंडित कालूराम	हेड पंडित कालेज अजमेर
			सेठों का रामगढ़ सराई जैपुर

२२	१३५	पंडित शिव नारायन	हेड पंडित म्योकालिज अजमेर
२३	१५३	राय गुरु प्रसाद	एक्स्ट्रा असिस्टेंट ज़ि० चांदा इलाक़ा नागपुर
२४	७७	मुं० देवी प्रसाद बी० ए०	केयर आफ़ मु० जोरीलाल तहसीलदार नरसिंहपुर सी० पी०
२५	८५	ठाकुर गंगा सिंह	हेडमास्टर ज़ि० स्कूल दमोह
२६	२४५	मु० जुगुल किशोर	मीर मुंशी कुलदफ़्तर रियासत भूपाल
२७	३६	महाराज कृष्ण	कौन्सी रियासत इन्दौर
२८	५९	राव रघुनाथ राव	कार्यभारी दीवान महाराजा इंदौर
२९	१७६	पंडित अमरनाथ	हेड मुतरज्जिम चीफ़ कोर्ट लाहौर
३०	१९२	बाबू कृपाशंकर बी० ए०	डिप्टी इन्स्पेक्टर स्कूल लाहौर
३१	१९५	बाबू शशिभूषण कुमर जी एम० ए० बी० एल	प्रोफ़ेसर गवर्नमेंट कालेज लाहौर
३२	१९५	बाबू काली प्रसन्न राय एम० ए० बी० एल	प्लीडर चीफ़ कोर्ट पंजाब लाहौर
३३	१९९	बाबू ईशान चन्द्र बोस	असिस्टेंट एकाउंटेंट जेनरल पंजाब लाहौर
३४	२०६	बाबू शिव दयाल	मुन्सिफ़ अलीपुर ज़ि० मुज़फ़्फ़रगढ़ पंजाब
३५	[illegible]	मिर्ज़ा [illegible] साहब बहादुर	एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर गुरदासपुर पंजाब
३६	२०९	लाला कर्म चन्द	मुन्सिफ़ ज़िला होशियारपुर पंजाब
३७	४५९	राय राम सहाय	एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर ज़िला फ़ीरोज़पुर पंजाब

३८	४५८	डाक्टर हरि प्रसाद	सिविल सरजन माधोपुर
३९	२७५	लाला मूलराज एम॰ ए॰	लाहौर
४०	४८०	कार स्टीफ़न साहब बहादुर	ड्यूटी प्रथेल असिस्टेंट लुधियाना
४१	४८८	लाला मुंशीलाल एम॰ ए॰	हेड मास्टर गवर्नमेंट स्कूल होशियारपुर
४२	४९०	लाला मोहनलाल बी॰ ए॰	गवर्नमेंट कालेज लाहौर पंजाब
४३	४९३	लाला श्रीराम एम॰ ए॰	हेड मास्टर नार्मल स्कूल लाहौर
४४	८०	कन्हैयालाल कलरुधारी	लुधियाना पंजाब
४५	२५२	लाला बालमुकुंद	असिस्टेंट इनजिनियर सियालकोट
४६	२८७	डायरेक्टर	वपूरंटर ग॰ सेन्ट्रलडिपो लाहौर
४७	५१७	लाला लब्धाराम	असिस्टेंट इंजिनियर ज़ि॰ गुजरानवाला वजीराबाद
४८	५१६	डाक्टर जस्वन्तराय	असिस्टेण्ट सरजन शफाखाने मुल्तान
४९	५२७	लाला ईश्वरदयाल	सिविल इनजिनियर लाहौर
५०	५६०	सागरमल	असिस्टेंट इनजिनियर मुल्तान
५१	४५५	राय रामसहाय साहब	मकस्त्रा असिस्टेंट कमिश्नर फ़ीरोजपुर
५२	५५०	सूबेदार मेजर शिव बख्श दुबे	सरदार बहादुर १९ पलटन रावलपिंडी
५३	२६१	मेजर डबल्यू आर एम॰ हाल रायड सा॰ बहादुर	डायरेक्टर सरिश्तेतालीम पंजाब
५४	८२	सर्दार अतर सिंह	एम॰ यू एफ॰ चीफ़ आफ़ भदौड़ लुधियाना
५५	११६	सर्दार जगत सिंह	मोतनिह महाराज जींद हाजिरबाश मुहको लेफ्टिनेंट गवर्नर पंजाब

५६	२१९	राजा रघुबीर सिंह	जींद इलाका अंबाला
५७	२१७	लाला देवी सिंह	मोतमिद महाराजा नाभा हाज़िर बाश मुहकमे लेफ्टिनेंट गवर्नर पंजाब
५८	२२३	दीवान रामदास	दीवान महाराजा कपूरथला पंजाब
५९	२५६	बाबू शारदाप्रसाद भट्टाचार्य	पबलिक वर्क्स डिपार्टमेंट लाहौर
६०	२२३	पंडित भागराम	एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर अजमेर
६१	१८	मुन्शी [illegible]	नामी रईस मुरादाबाद
६२	८९	पंडित मोहन लाल	हेड मास्टर गवर्नमेंट स्कूल मेरठ
६३	११७	पंडित काशी नारायण	मुन्सिफ़ अलीगढ़
६४	३४	बाबू नवीन चंद्र राय	पे मास्टर [illegible] रेलवे [illegible]
६५	२०	पंडित सुंदर लाल	पोस्ट मास्टर [illegible] इलाहाबाद
६६	४४०	राय देवी प्रसाद	डिप्टी कलक्टर बंदोबस्त मुरादाबाद हाल गाज़ीपुर
६७	५१	राजा जयकृष्णदास	डिप्टी मजिस्ट्रेट बिजनौर
६८	३७६	डाक्टर हरि प्रसाद	सिविल सर्जन जगाधरी
६९	४२१	राय बद्रीदास	मद कलेक्टर बिजनौर
७०	२४६	द्वारिका प्रसाद	सरिश्तेदार कलेक्टर आफ़िस मुज़फ़्फ़र नगर
७१	५१९	पंडित गोपालराव हरी रईस झांसी	वज़ीटर सरिश्ते तालीम ज़िला फ़र्रुख़ाबाद
७२	२४७	बाबू डालचंद	हेड मास्टर ज़िला स्कूल मुज़फ़्फ़र नगर

७३	४२	पांडे वैणीमाधवशास्त्री	ग्राम नदरई ज़िलअ एटा
७४	५७२	बाबू राम नाथ	डिप्टी कमिश्नर आफ़िस प्रतापगढ़ अवध
७५	५४	मुंशी हनूमान प्रसाद	एजेन्ट राजे इन्द्र विक्रम शाह बहादुर रियासत खेरीगढ़ अवध
७६	२७४	बाबू वंशीलाल सिंह	वकील हाईकोर्ट खैरी अवध
७७	४५०	बाबू जगमोहन सिंह	इन्स्पेकर अवध रुहेलखंड रेलवे बनारस
७८	२२५	कृष्णलाल मिश्र	वकील हाईकोर्ट प्रतापगढ़ अवध
७९	७६	पंडित लक्ष्मीनारायणदुबे	मुलाज़िम महाराज बलरामपुर लखनऊ
८०	४०७	राम दयाल राय बहादुर	मुन्सिफ़ ताजपुर दरभंगा
८१	४९४	बाबू जयकृष्ण मुकरजी	इंजिनियर चीफ़स आफ़िस एन.वी. रेलवे दार्जलिंग
८२	३२	बाबू केशव चंद्र सेन	अध्यक्ष ब्रह्म समाज कलकत्ता
८३	५७	बाबू द्विजेंद्रनाथ ठाकुर	आदि ब्रह्म समाज कलकत्ता
८४	६४	बाबू महेन्द्र सरकार	डाक्टर कलकत्ता
८५	५	जयप्रकाश	दीवान राजा डुमराव बंगाल हाथ्वा
८६	४०२	प्रोफेसर मेक्समूलर	आक्सफोर्ड इंगलेंड
८७	४०३	प्रोफेसर मोनियर विलियमस	आक्सफोर्ड इंगलेंड

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेद सत्ता विचारो नाम तृतीयो मयूखः ॥३॥

अथ चतुर्थोम

यूखः

आर्यगण पिछले तीन अध्यायोंके द्वारा आपको श्रीजी महाराज रचित वेद भाष्य भूमिका का नमूना दिखा चुका कहिये किस प्रकार प्रबल आप्त प्रमाणों से वेदों का माहात्म्य और उनका नित्यत्वादि प्रकाशित किया है धन्य है उनकी इस लोकोत्तर विद्या और परिश्रम को श्रीजगदीश्वर उनको पूर्णायु करे जिससे सृष्टि सुधरे॥

अब आपको थोड़ा चमत्कार श्रीजी रचित भाष्योंका और दिखाता हूं यद्यपि यह आरम्भ मात्र ही यहां लिखा गया है तथापि बहुलाभ दायक होगा, और इतने ही से समस्त ग्रन्थ की कैफ़ियत और दोनों वेदों का आशय और विस्तार इस ग्रन्थ के अवलोकन करने वालों पर भली भांति प्रकाशित होजावेगा इतना ही नहीं किन्तु और भी बहुत सी ऐसी आवश्यक बातें विदित होंगी जितनी कि वैदिक मत वालों को जानना परमावश्यक हैं॥

अब देखना चाहिये कि जिस ग्रन्थ के एक मंत्रकी व्याख्या पढ़ने से इतना लाभ है तो समस्त के देखने सुनने और पढ़ने से कितना लाभ न होगा॥

अथ ऋग्वेद भाष्यारम्भः

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ॥
यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥ ऋ० ५।८२।५ ॥

विद्यानन्दं भगवति चतुर्वेद सम्स्थापनाया मंप्रत्यै
पं निगम मिलायं संप्रराम्याथ कुर्वे। वेदत्र्यङ्केविधु
युत सरे मार्गसुक्ले भौमे ऋग्वेदस्यारिम्लगुरा
गुरो ज्ञानदानुग्रहे भाष्यम ॥१॥

ऋग्वेदीयाध्याय वर्ग सङ्ख्या

प्रथमाष्टके		द्वितीयाष्टके		तृतीयाष्टके		चतुर्थाष्टके		पञ्चमाष्टके		षष्ठाष्टके		सप्तमाष्टके		अष्टमाष्टके	
अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग
१	३०	१	२६	१	[illegible]	१	३३	१	३०	१	४०	१	४०	१	१०
२	२८	२	[illegible]	२	१८	२	२८	२	३०	२	४०	२	३३	२	२५
३	३५	३	२६	३	३१	३	[illegible]	३	३०	३	४०	३	२६	३	[illegible]
४	२६	४	२६	४	३४	४	२६	४	३०		५४	४	२१	४	२२
५	[illegible]	५	२८	५	२६	५	३०	५	२३	५	३८	५	३३	५	[illegible]
६	२१	६	३०	६	३०	६	३१	६	३१	६	२८	६	२८	६	२०
७	३१	७	३५	७	२७	७	३५	७	३३	७	३६	७	३०	७	३०
८	२६		२७	८	२६	८	३२	८	३६	८	३३	८	२६	८	४८
योग	२०५	योग	२२१	योग	२२५	योग	२५०	योग	[illegible]	योग	२३१	योग	२४८	योग	२४५

आज मैं सब प्रकार से विद्या के आनन्द को देने वाली चारों वेदों
की भूमिका को समाप्त और जगदीश्वर को अच्छे प्रकार प्रणाम के
[illegible] १९३४ मार्ग शुक्ल ६ भौमवार के दिन संपूर्ण ज्ञान के

देने वाले ऋग्वेद के भाष्य का आरम्भ करता हूं ॥२॥
(ऋग्भिः स्तुवन्ति) इस ऋग्वेद से सब पदार्थों की स्तुति होती है अर्थात ईश्वर ने जिसमें सब पदार्थों के गुणों का प्रकाश किया है इस लिये विद्वान् लोगों को चाहिये कि ऋग्वेद को प्रथम पढ़ के उन मंत्रों में ईश्वर से लेके पृथ्वी पर्य्यन्त सब पदार्थों को यथावत जान के संसार में उपकार के लिये प्रयत्न करें ॥
ऋग्वेद शब्द का अर्थ यह है कि जिस से सब पदार्थों के गुणों और स्वभावों का वर्णन किया जाय वह ऋक और वेद अर्थात जो यथार्थ सत्य ज्ञान का हेतु है इन दो शब्दों से ऋग्वेद शब्द बनता है (अग्निमीळे) यहां से लेके (यथा वः सुसहासति) इस मन्त्र पर्य्यन्त ऋग्वेद में आठ अष्टक और प्रत्येक अष्टक में आठ अध्याय हैं सब अध्याय मिलके चौसठ होते हैं ॥ प्रत्येक अध्याय के वर्गों की संख्या कोष्टों में लिखे अनुसार जानो और आठों अष्टक के सब वर्ग मिलकर २०२४ दो हज़ार चौबीस होते हैं तथा इसमें दस मण्डल हैं उनके मंत्र आदि की संख्या का विस्तार आगे लिखे कोष्ठ के अनुसार है ॥

प्रति मण्डलान्तर्गत अनुवाकादि संख्या

मण्डलसंख्या	अनुवाक संख्या	सूक्त संख्या	मंत्र संख्या
प्रथम	२४	१९१	१९७६
द्वितीय	४	४३	४२९
तृतीय	५	६२	६१७
चतुर्थ	५	५८	५८९
पंचम	६	८७	७२७
षष्ठ	६	७५	७६५
सप्तम	६	१०४	८४१
अष्टम	१०	१०३	१७१६
नवम	७	११४	११०८
दशम	१२	१९१	१७५४

इन दसों मण्डलों में ८५ पच्चासी अनुवाक और एक हज़ार अ-ठाईस सूक्त और दस हज़ार पांच सौ बत्तीस मंत्र हैं॥ सब सज्ज-नों को उचित है कि इस बात को ध्यान में धरलें जिससे किसी प्रकार का कभी गड़बड़ न हो॥

अथादिमस्य नवर्चस्य सूक्तस्य मधुच्छन्दा ऋषिः। अग्निर्देवता। गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः

तत्राद्य मन्त्रेऽग्निशब्देनेश्वरेणात्म भौतिका वर्थावुपदिश्येते

यहां प्रथम मंत्र में अग्नि शब्द करके ईश्वर ने अपना और भौतिक अर्थ का उपदेश किया है॥

अग्नि मीळे पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजम् ॥ होतारं रत्नधातमम् ॥१॥ यह प्रथम मंत्र हुआ

अग्निं । ईळे पुरःऽहितं । यज्ञस्य । देवं । ऋत्विजम् । होतारं । रत्नऽधातमम् ॥१॥ ये प्रथम मंत्र के पद हुए

पदार्थः-(अग्निं) परमेश्वरं भौतिकं वा । इन्द्रं मित्रं वरुण मग्निमाहु । रथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ॥ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥१॥ ऋ० १।१६४।४६ अ-ने नैकस्य सतः

पर ब्रह्मण इन्द्रादीनि बहुधा नामानि सन्तीति वेदितव्यम् ॥

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ॥

तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥२॥ य० ३२।१। यत्सच्चिदानन्दादि लक्षणं ब्रह्म तदेवात्राग्न्यादि नाम वाच्यमिति बोध्यम् ॥ ब्रह्मह्यग्निः । श० १।४।२।११ आत्मा वा अग्निः श० १।२।३।२ अत्राग्निर्ब्रह्मात्मनोर्वाचकोस्ति ।

अयं वा अग्निः प्रजाश्च प्रजापतिश्च ॥ श० ९।१।२।४२।

अत्र प्रजा शब्देन भौतिकः प्रजापति शब्देनेश्वरश्चाग्निर्ग्राह्यः ।

अग्निर्वै देवानां व्रतपतिः । एतद्धि वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम् । श० १।१।१।२५।

सत्याचार नियम पालनं व्रतं तत्पति रीश्वरः । त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यऽर्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन् ॥ वर्षिष्ठं रत्न मकृत स्वधाभिरादिद्यावा पृथिवी पर्य्यपश्यत् ॥१॥ ऋ० ३।२।६।८ ॥ अत्राग्नि शब्दस्यानुवृत्तेः

प्रजानन्निति ज्ञानवत्त्वात् पर्य्यपश्यदिति सर्वज्ञत्वादीश्वरो ग्राह्यः ॥

यास्क मुनिरप्यत्रार्थ कारणायाग्नि शब्द पुरःसरमेतन्मंत्रमेवं व्याचष्टे ॥ अग्निः कस्मादग्रणीर्भवत्यग्रं यज्ञेषु प्रणीयतेऽङ्गं नयति सन्नममानोऽक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविर्न क्नोपयति न स्नेहयति त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायत इति शाकपूणिरिताद्दक्ताद्दग्धाद्वा नीतात्स खल्वेतेरकारमादत्ते गकारमनक्तेर्वा दहतेर्वा नीः परस्तस्यैवा भवतीति ॥ अग्निमीळेऽग्निं याचामीळिरध्येषणाकर्मा वा देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा यो देवः सा देवता । होतारं ह्वातारं जुहोतेर्होतेत्यौर्णवाभो रत्नधातमं रमणीयानां धनानां दातृतमम् ॥ निरु० ७। १४।१५। अग्रणीः सर्वोत्तमः सर्वेषु यज्ञेषु पूर्वं परमेश्वर एवेति प्रतिपादनात्तस्यात्र ग्रहणम् । दग्धादिति विशेषणात् भौतिकस्याग्नेश्च । प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि । रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥१॥ एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम् ॥ इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥२॥ मनु० अ० १२। श्लो० १२२।१२३। अत्राप्यग्न्यादीनि परमेश्वरस्य नामानि सन्तीति ॥ ईळे अग्निं विपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधनम् ॥ श्रुष्टीवानं धितावानम् ॥४॥ ऋ०३।२२।२। विपश्चितम् ईळे इति विशेषणादग्निशब्देनात्रेश्वरो गृह्यते अनन्तविद्यावत्त्वाच्चेतनस्वरूपत्वाच्च ।

अथ केवलं भौतिकार्थग्रहणाय प्रमाणानि । यदश्वं तं पुरस्तादुदश्रयंस्तस्याभयेनाष्ट्रे निवातेऽग्निरजायत तस्माद्यत्राग्निं मन्थिष्यन्त्स्यात्तदश्वमानेतवै ब्रूयात् । स पूर्वेणोपतिष्ठते वज्रमेवैतदुच्छ्रयन्ति तस्याभयेनाष्ट्रे निवातेऽग्निर्जायते। श०२।१।४।१६।

वृषो ऽग्निः। अश्वोह वा एष भूत्वा देवेभ्यो यज्ञं वहति। श०१।३।३।२९।३०। वृषवद्यानानां वोढृत्वा द्वृषो ऽग्निः॥ तथाऽयमग्निराशुगमयितृत्वेनाश्वो भूत्वा कलायन्त्रैः प्रेरितः सन्देवेभ्यो विद्वद्भ्यः शिल्पविद्याविद्भ्यो मनुष्येभ्यो विमानादियानसाधनसंगतं यानं वहति प्रापयतीति। तूर्णिर्हव्यवाडिति। श०१।३।४।१२। अयमग्निर्हव्यानां यानानां प्रापकत्वेन शीघ्रतयागमकत्वाद्धव्यवाट् तूर्णिश्चेति। अग्निर्वै योनिर्यज्ञस्य। श०१।४।३।११ इत्याद्यनेकप्रमाणैरश्वनाम्ना भौतिकोऽग्निरत्र गृह्यते ऽस्याशुगमनहेतुत्वादश्वोऽग्निर्विज्ञेयः। वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः॥ तं हविष्मन्त ईळते॥५॥ ऋ०३।२७।१४। यदा शिल्पिभिरयमग्निर्यन्त्रकलाभिर्यानेषु प्रदीप्यते तदा देववाहनो देवान् यानस्थान् विदुषः शीघ्रं देशान्तरे ऽश्व इव वृष इव च प्रापयति ते हविष्मन्तो मनुष्या वेगादिगुणवन्तमश्वमग्निमीडते कार्य्यार्थमधीच्छन्तीति वेद्यम्॥ (ईळे) स्तुवे याचे ऽधीच्छामि प्रेरयामि वा (पुरोहितं) पुरस्तात्सर्वं जगद्दधाति छेदनधारणाकर्षणादिगुणांश्चापितं॥ पुरोहितः पुर एनं दधति होत्रायवृतः कृपायमाणो ऽन्वध्यायत्। निरु०२।१२। (यज्ञस्य) इज्यते ऽसौ यज्ञस्तस्य महिम्नः कर्मणो विदुषां सत्कारस्य संगतस्य सत्संगत्योत्पन्नस्य विद्यादिदानस्य शिल्पक्रियोत्पाद्यस्य वा। यज्ञः कस्मात्प्रख्यातं यजतिकर्मेति नैरुक्ता याच्ञो भवतीति वा यजुरुन्नो भवतीति वा बहुकृष्णाजिन इत्यौपमन्यवो यजूंष्येनं नयन्तीति वा निरु०३।१९। (देवं) दातारं हर्षकरं विजेतारं द्योतकं वा (ऋत्विजं) यऋतौ ऋतौ प्रत्युत्पत्तिकालं-संसारं संगतं य-

जति करोति तथा च शिल्पसाधनानि संगमयति सर्वेषु ऋतुषु यजनीयस्तं ऋत्विग्दधृग० अ०३।२।५९ अनेन कर्त्तरि निपातनम् तथा कृतो बहुलमिति कर्मणि वा। (होतारं) दातारमादातारं वा (रत्नधातमम्) रमणीयानि पृथिव्यादीनि सुवर्णादीनि च रत्नानि दधाति धापयतीति रत्नधा अतिशयेन रत्ना धारति रत्नधानमस्तम्॥

अन्वयः

अहं यज्ञस्य पुरोहितमृत्विजं होतारं रत्नधातमं देवमग्निमीळे॥

यह प्रथम मंत्र का अन्वय हुआ

भावार्थः अत्र श्लेषालंकारेणोभयार्थ ग्रहणमस्तीति बोध्यम्। इतो ऽग्रे यत्र यत्र मन्त्र भूमिकायामुपदिश्यत इति क्रियापदं प्रयुज्यते ऽस्य सर्वत्र कर्त्तेश्वर एव बोध्यः। कुतः। वेदानां तेनैवोक्तत्वात् पितृवत्कृपायमाण ईश्वरः सर्वविद्याप्राप्तये सर्वजीवहितार्थं वेदोपदेशं चकार यथा पिता ऽध्यापको वा स्वपुत्रं शिष्यं च प्रतित्वमेवं वदेवं कुरु सत्यं वद पितरमाचार्यं च सेवस्वानृतं माकुर्वित्युपदिशति तथैवात्र बोध्यम्। वेदश्च सर्व जीवकल्याणार्थ माविर्भूतः। एव मर्थो ऽत्रोत्तम पुरुष प्रयोगः। वेदोपदेशस्य परोपकारार्थत्वात्। अत्राग्निशब्देन परमार्थव्यवहार विद्या सिद्धये परमेश्वर भौतिकौ द्वावर्थौ गृह्यते पुरा आर्यैर्या ऽश्व विद्या नाम्ना शीघ्रगमन हेतुः शिल्प विद्या संपादिते ति श्रूयते सा ऽग्नि विद्यैवासीत्। परमेश्वरस्य स्वयं प्रकाशत्व सर्व प्रकाशकत्वाभ्यामनन्त ज्ञानवत्त्वात्।

भौतिकस्य रूपदाह प्रकाश वेग छेदनादि गुणवत्वाच्छिल्य

विद्यायां मुख्य हेतुत्वाच्च प्रथमं ग्रहणं कृतमस्तीति वेदितव्यम ॥१॥

पदार्थान्वय भाषा

(यज्ञस्य) हम लोग विद्वानों के सत्कार संगम महिमा और कर्म के (होतारं) देने तथा ग्रहण करने वाले (पुरोहितं) उत्पत्ति के समय से पहिले परमाणु आदि सृष्टि के धारण करने वाले और (ऋत्विजं) बारं बार उत्पत्ति के समय में स्थूल सृष्टि के रचने वाले तथा ऋतु ऋतु में उपासना करने योग्य (रत्नधातमम्) और निश्चय करके मनोहर पृथ्वी वा सुवर्ण आदि रत्नों के धारण करने वाले (देवं) देने तथा सब पदार्थों के प्रकाश करने वाले परमेश्वर की (ईळे) स्तुति करते हैं तथा उपकार के लिये (यज्ञस्य) हम लोग विद्यादि दान और शिल्प क्रियाओं से उत्पन्न करने योग्य पदार्थों के (होतारं) देने हारे तथा (पुरोहितं) उन पदार्थों के उत्पन्न करने के समय से पूर्व भी छेदन धारण और आकर्षण आदि गुणों के धारण करने वाले। (ऋत्विजं) शिल्पविद्यासाधनों के हेतु (रत्नधातमम्) अच्छे अच्छे सुवर्णादि रत्नों के धारण कराने तथा (देवं) युद्धादिकों में कला युक्त शस्त्रों से विजय कराने हारे भौतिक अग्नि की (ईळे) बार बार इच्छा करते हैं॥ यहां अग्नि शब्द के दो अर्थ करने में प्रमाण ये हैं कि (इन्द्रं मित्रं) इस ऋग्वेद के मंत्र से यह जाना है कि एक सद् ब्रह्म के इन्द्र आदि अनेक नाम हैं तथा (तदेवाग्नि) इस यजुर्वेद के मंत्र से भी अग्नि आदि नामों करके सच्चिदानन्दादि लक्षण वाले ब्रह्म का जानना चाहिये (ब्रह्मह्य०) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से-

अग्नि शब्द ब्रह्म और आत्मा इन दो अर्थों का वाची है (अयंवा०) इस प्रमाण में अग्नि शब्द से प्रजा शब्द करके भौतिक और प्रजा पति शब्द से ईश्वर का ग्रहण होता है (अग्नि०) इस प्रमाण से सत्याचरण के नियमों का जो यथावत् पालन करना है सोही व्रत कहाता है और इस व्रत का पति परमेश्वर है (त्रिभिः पवित्रैः०) इस ऋग्वेद के प्रमाण से ज्ञान वाले तथा सर्वज्ञ प्रकाश करने वाले विशेषण से अग्नि शब्द करके ईश्वर का ग्रहण होता है निरुक्तकार यास्क मुनिजी ने भी ईश्वर और भौतिक पक्षों को अग्नि शब्द की भिन्न भिन्न व्याख्या करके सिद्ध किया है सो संस्कृत में यथावत् देख लेना चाहिये परंतु सुगमता के लिये कुछ संक्षेप से यहां भी कहते हैं यास्क मुनिजी ने स्थौलाष्ठीवि ऋषि के मत से अग्नि शब्द का अग्रणी सबसे उत्तम अर्थ किया है अर्थात् जिस का सब यज्ञों में पहिले प्रतिपादन होता है वह सब से उत्तम है इस कारण अग्नि शब्द से ईश्वर तथा दाह गुण वाला भौतिक अग्नि इन दोही अर्थों का ग्रहण होता है (प्रशासितारं०) (एतमे०) मनुजी के इन दो श्लोकों में भी परमेश्वर के अग्नि आदि नाम प्रसिद्ध हैं (ईळे०) इस ऋग्वेद के प्रमाण से भी उस अनंत विद्या वाले और चेतन स्वरूप आदि गुणों से युक्त परमेश्वर का ग्रहण होता है अब भौतिक अर्थ के ग्रहण करने में प्रमाण दिखलाते हैं (यदश्वं०) इत्यादि शत पथ ब्राह्मण के प्रमाणों से अग्नि शब्द करके भौतिक अग्नि का ग्रहण होता है यह अग्नि बैल के समान सब देश देशान्तरों में पहुंचाने वाला होने के कारण वृष और अश्व भी कहाता है क्योंकि वह कलाओं के द्वारा अश्व

अर्थात् शीघ्र चलाने वाला होकर शिल्पविद्या के जानने वाले विद्वान् लोगों के विमान आदि यानोंको वेग से वाहनोंके समानदूरदूर देशोंमें पहुंचाता है (तूर्णिः०) इस प्रमाण से भी भौतिक अग्निका ग्रहण है क्योंकि वह उक्त शीघ्रता आदि हेतुओं से हव्यवाट् और तूर्णि भी कहाता है (अग्निर्वैयो०) इत्यादिक और भी अनेक प्रमाणों से अश्व नाम करके भौतिक अग्निका ग्रहण किया गया है (वृषो०) जबकि इस भौतिक अग्नि को शिल्पविद्या वाले विद्वान् लोग यंत्रकलाओं से सवारियों में प्रदीप्त करके युक्त करते हैं तब (देववाहनः) उन सवारियों में बैठे हुए विद्वान् लोगों को देशांर में बैलों वा घोड़ों के समान शीघ्र पहुंचाने वाला होता है, । हे मनुष्यो। तुम लोग (हविष्मंतं) वेगादि गुण वाले अश्वरूप अग्नि के गुणों को (ईडते) खोजो इस प्रमाण से भी भौतिक अग्नि का ग्रहण है ॥

भावार्थभाषा— इस मंत्र में श्लेषालंकार से दो अर्थों का ग्रहण होता है ॥ पिता के समान कृपा करके परमेश्वर सब जीवों के हित और सब विद्याओं की प्राप्ति के लिये कल्प कल्प की आदि में वेद का उपदेश करता है जैसे पिता वा अध्यापक अपने शिष्य वा पुत्र को शिक्षा करता है कि तू ऐसा कर वा ऐसा वचन कह सत्य वचन बोल इत्यादि शिक्षा को सुनकर बालक वा शिष्य भी कहाता है कि सत्य बोलूंगा पिता और आचार्य्य की सेवा करूंगा झूठ न कहूंगा इस प्रकार जैसे परस्पर शिक्षक लोग शिष्य वा लड़कों को उपदेश करते हैं वैसे ही (अग्निमीळे०) इत्यादि वेद मंत्रों में भी जानना चाहिये क्योंकि ईश्वर ने वेद सब

जीवों के उत्तम सुखके लिये प्रगट किया है इसी (अग्निमीळे०) वेदके उपदेश का परोपकार फल होने से इस मंत्र में ईडे यह उत्तम पुरुष का प्रयोग भी है (अग्निमीडे०) परमार्थ और व्यवहारविद्या की सिद्धि के लिये अग्नि शब्द करके परमेश्वर और भौतिक ये दोनों अर्थ लिये जाते हैं जो पहिले समय में आर्य लोगों ने अश्व विद्या के नाम से शीघ्र गमन का हेतु शिल्प विद्या उत्पन्न की थी वह अग्नि विद्या ही की उन्नती थी आपही आप प्रकाशमान सबका प्रकाश और अनंत ज्ञानवान् आदि हेतुओं से अग्नि शब्द करके परमेश्वर तथा रूप दाह प्रकाश वेग छेदन आदि गुण और शिल्प विद्या के मुख्य साधक आदि हेतुओं से प्रथम मंत्र में भौतिक अर्थ का ग्रहण किया है ॥१॥

आर्य्यगण इसी प्रकार परम प्रबल प्रमाणों सहित (अग्निः पूर्व) इस दूसरे आदि मंत्रों का भाष्य होता गया है ऐसाही स्वरूप यजुर्वेद भाष्य का भी जानो जितना कुछ कि उसका निदर्शन अवश्य है उतना आगे देख लीजिये ॥

इति ऋग्वेद भाष्य प्रदर्शनम्

अथ यजुर्वेदभाष्यारम्भः

योजीवेषु दधाति सर्वसुकृतज्ञानं गुणैरीश्वर स्तं नत्वा क्रियते परोपकृतये सद्यः सुबोधायच ॥ ऋग्वेदस्य विधाय वै गुणगुणि ज्ञानप्रदातुर्वरं भाष्यं काम्यमथोक्रियाथ यजुर्वेदस्य भाष्यं मया ॥१॥

चतुस्त्र्यङ्कैः रवि निसहितैर्विक्रमसरे। शुभे पौषे मासे सितदल भविष्योन्मित तिथौ ॥ गुरोर्वारे प्रातः प्रतिपदमतिष्टं सुविदुपां। प्रमाणैर्निर्बद्धं शतपथनिरुक्तादिभिरपि ॥२॥

विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव ॥१॥ य०३०।३।

भाषार्थ- अब यजुर्वेद के भाष्य का आरंभ किया जाता है जो निर्गुण गुण पुंज से देत सुकृत विज्ञान। प्रणत पाल जगदीश्वर हि करि प्रणाम तिहि ध्यान ॥१॥ ज्ञानदायि ऋग्वेद का भाष्याभीष्ट विधाय। पर उपकार विचारि करि शीघ्र सुबोध निधाय ॥२॥ शतपथ ब्राह्मण आदि पुनि निघंटु निरुक्त निहारि। यजुर्वेद जो किया पर बनौं ताहि बिचारि ॥३॥ एक सहस्र नवशत अधिक बिक्रम चौंतीस ॥ पौष शुक्ल तेरस तिथी दिन अधीश वागीश ॥४॥ विक्रम के संबत् १९३४ पौष सुदि १३ गुरवार के दिन यजुर्वेद के भाष्य बनाने का आरंभ किया जाता है ॥ (विश्वानि०) इस मंत्र का अर्थ भूमिका में कर दिया है। ईश्वर ने ऋग्वेद में गुण और गुणी के विज्ञान के प्रकाश द्वारा सब पदार्थ प्रसिद्ध किये हैं उन मनुष्यों को पदार्थों से जिस २ प्रकार यथा योग्य उपकार लेने के

लिये क्रिया करनी चाहिये तथा उस क्रिया के जो जो अंग वा साध· न हैं सो सो यजुर्वेद में प्रकाशित किये हैं क्योंकि जब तक क्रिया क रने का दृढ़ ज्ञान न हो तब तक उस ज्ञान से श्रेष्ठ सुख कभी नहीं हो सक्ता और विज्ञाने के ये हेतु हैं कि जो क्रिया प्रकाश अविद्या की नि· वृत्ति अधर्म में अप्रवृत्ति तथा धर्म और पुरुषार्थ का संयोग करना है। जो कर्म कांड है सो विज्ञान का निमित्त और जो विज्ञान कांड है सो क्रिया से फल देने वाला होता है कोई जीव ऐसा नहीं है कि जो मन प्राण वायु इंद्रिय और शरीर के चलाये बिना एक क्षण भर भी रह सके क्योंकि जीव अल्पज्ञ एक देश वर्त्ती चेतन है इसलिये ईश्वर ने ऋग्वेद के मंत्रों से सब पदार्थों के गुण गुणी का ज्ञान और यजुर्वे द के मंत्रों से सब क्रिया करनी प्रसिद्ध की है क्योंकि (ऋक) और (यजुः) इन शब्दों का अर्थ भी यही है कि जिस से मनुष्य लोग ई· श्वर से ले के पृथ्वी पर्य्यंत पदार्थों के ज्ञान से धार्मिक विद्वानों का संग सब शिल्प क्रिया सहित विद्याओं की सिद्धि श्रेष्ठ वि· द्या श्रेष्ठ गुण वा विद्या का दान यथा योग्य उक्त विद्या के व्यवहा र से सर्वोपकार के अनुकूल द्रव्यादि पदार्थों का खर्च करें इस लि· ये इसका नाम यजुर्वेद है इसमें सब ४० अध्याय और सब अध्या यों के मिलकर १९७५ उन्नीस सौ पचहत्तर मंत्र हैं बस यहां से आगे मंत्रों का भाष्य पूर्व प्रदर्शित रीति से चला है॥　इति यजुर्वेद भाष्य निदर्शनम्॥

आर्य्यगण इसी प्रकार के साम और अथर्व वेदों के भी भाष्य बनेंगे कदाचित् कहो कि इन सब वेदों के भाष्य प्रथम ही से बहुत से आचार्य बनागये हैं फिर इन नवीन भाष्य की क्या आवश्यकता

थी तो इस का उत्तर यह है कि निःसन्देह और अवश्य इन वेदों पर प्राचीन काल में ब्रह्मादिक ऋषि मुनियों ने जो व्याख्यान अर्थात् ऐतरेय शतपथ आदि नामों से ब्राह्मण ग्रन्थ बनाए हैं वे सब उत्तम और परतः प्रमाण करने के योग्य हैं परन्तु अब अर्थात् पुराण मत प्रवृत्त भये पीछे उवट रावण सायन महीधर आदि आचार्यों ने अपनी आधुनिक विद्या के अनुसार जो व्याख्यान अर्थात् वेद भाष्य रचे हैं वे अत्यन्त गर्हित और तुच्छ हैं क्योंकि उन्हों ने अपनी तुच्छ बुद्धि और निंदित मत के अनुसार उनका ऐसा घृणित अर्थ लिखा है कि जिससे संसार में अनर्थ फैल गया है इन्हीं को देख ऐसे ही अनर्थ कारक भाष्य यूरुप में प्रोफेसर विलसन् और माक्समूलर आदि कई एक विद्वानों ने भी रचे हैं जिनकी प्रवृत्ती से सर्वत्र वेदों पर शंका होने लगी और बहुतेरे लोग वेदों को आधुनिक ग्रन्थ बताने लगे इस महान् अंधकार के मिटाने के लिये परम दयालु पूर्ण प्रतापी श्रीमान् स्वामी जी महाराज ने सनातन रीति के अनुसार यह परम श्लाघ्य वेद भाष्य रचा है जिसके अभ्यास और अवलोकन से वेदों का यथा पूर्व महत्व प्रकाशित होता है इस प्रशंसनीय भाष्य पर भी कितने ही आधुनिक विद्वान पूर्वापर विचार किये बिना शंका कर बैठे उन सब को श्रीजी महाराज ने अच्छे प्रकार शान्त किया है जो समाधान भ्रान्ति निवारण भ्रमोच्छेदन आदि पुस्तकों के द्वारा प्रकाशित किये गये हैं वे सर्वत्र मिलते हैं इसलिये उनको छोड़ कर आगे हम उस एक समाधान को उदाहरणार्थ यहां और लिखते हैं जो अगस्त सन् १८७७ ई० में काशी और कलकत्ता कालिजों के संस्कृतज्ञ विद्वान् प्रिन्सिपल आदि की

शंकाओं पर अंग्रेजी में लिखा गया था ॥

अथोदाहरणम्

सकल विद्वज्जन शिरोमणि श्रीमान् स्वामीजी महाराज कहते हैं कि मुझे वकीलहिन्द और यूनीवर्स्टी कालिज पंजाब के पत्रों से ज्ञात हुआ कि कई एक साहबों ने मद्रचित वेद भाष्य पर प्रतिकूल अनुमति दी है इसलिये मैं उन की शंकाओं का उत्तर क्रम से निवेदन करता हूं प्रथम उन शंकाओं का उत्तर है जो मिस्तर आर ग्रिफ़िथ एम० ए० प्रिन्सपिल बनारसकालिज ने की हैं। पांच हज़ार वर्ष के लगभग से वेद विद्या जाती रही महाभारत से पहले इस देश में सब विद्या ठीक २ प्रचारित थीं परन्तु पीछे से पढ़ने पढ़ाने के ग्रन्थ और रीति बिलकुल बदल गई जब से अब तक वही अशुद्ध प्रणाली प्रचारित है यद्यपि कहीं २ के लोग वेदादिक सत्य ग्रन्थों को कंठ कर लेते हैं परन्तु उसके शब्दार्थ को कोई भी नहीं जानता न ऐसे कोई व्याकरणादिक ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़ाये जाते हैं जिनसे वेदों का अर्थ हो सके आधुनिक जो महीधर आदि के बनाए हुए वेद भाष्य देखने में आते हैं वे महाभ्रष्ट और अंधकार के बढ़ाने वाले हैं उनके देखने वालों को मद्रचित भाष्य ठीक समझ में नहीं आता मेरा भाष्य शुद्ध वेदार्थ बोधक और प्राचीन भाष्यों के ठीक अनुकूल है वह तभी समझ में आवेगा जब लोग प्राचीन भाष्यादिक ग्रन्थों की सहायता स्वीकार करेंगे मैंने प्रत्येक मंत्र का अर्थ सत्य प्रतीत होने के अर्थ बहु प्राचीन आप्त व्याख्यान कारों का प्रमाण बहुत-

स्पष्ट पतेवार लिख दिया है यदि ग्रिफ़िथ साहब ने प्राचीन भाष्य वा मेरे लिखे प्रमाणों और उदाहरणों को पढ़ा होता तो कभी उनकी ऐसी विरुद्ध सम्मति न होती जैसी कि उनने हाल में दी है उवट सायन महीधर रावण आदि के रचे कुल भाष्य प्राचीन भाष्यों से समस्त स्थानों में विपरीत हैं केवल इन्हीं भाष्यों का उलथा अंग्रेज़ी में विलसन् और माक्समूलर आदि प्रोफ़ेसरों ने किया है इस लिये मैं इनके भाष्यों कोभी शुद्ध और न्याय कारी नहीं कह सकता इन्हीं ग्रन्थों के कारण ग्रिफ़िथ साहब आदि लोग भी संदेह मार्ग में पड़े हैं और मुझ को यह कह कर दूषित करते हैं कि स्वामी जी ने अर्थ पलट कर अपने प्रयोजन के सिद्धार्थ दूसरे ही अर्थ नियत किये हैं परन्तु उनका यह तर्क सर्वथा निर्मूल है मैं ने सर्वत्र ऐतरेय और शतपथादि नामक ब्राह्मण ग्रन्थ और निरुक्त तथा पाणिनीय व्याकरणादिक सत्य ग्रन्थोंका प्रमाण देकर प्रत्येक मंत्र का सत्य २ अर्थ लिखा है यदि ग्रिफ़िथ साहिब उसको देखते तो कभी ऐसा न लिखते विचार करता हूं कि उनने मेरा भाष्य बिना ही देखे भाले अपनी मन मानी अनुमति प्रकाशित करदी है॥

मैं नहीं समझ सकता हूं कि क्यों ग्रिफ़िथ साहब मेरा वृथा श्रम समझते हैं जब कि मेरे भाष्य के लेने वाले हज़ार से अधिक बड़े २ सत् पुरुष हैं और प्रत्यह नवीन जनों के निवेदन पत्र मेरी पुस्तक लेने के विषय में बराबर चले आते हैं- मेरे ग्राहकों में से बहुत से अच्छे २ संस्कृतज्ञ और बहुतेरे अंगरेज़ी और संस्कृत में पूरे २ विद्वान् हैं ग्रिफ़िथ साहब का यह अंतिम लेख कि वेदों की चर्चा

ओं से बहुत से देवताओं के नाम प्रकाशित होते हैं सो उनकी यह बात मुझको तब प्यारी लगे और विद्वानोंके समीप प्रमाणिक ठहरे जब वे उस मतलबकी कोई ऋचा मुझको लिख भेजें (अ) यद्यपि वेदोंको शीघ्र दृष्टि से देखने से देवताओंके नाम उतने दीख पड़ते हैं जितने कि स्तुति करने वालोंके हैं परन्तु पुराने व्याख्यात ग्रन्थों के अनुसार (कि जो ठीक आर्य धर्म के विषयक है) वे अनेक नाम देवता वा मनुष्यों और वस्तुओं के नहीं ठहर सकते अर्थात् वे सब तीन देवताओं ही के नाम से संबंध रखते हैं और फिर वे तीनों नामों की देवता भी पृथक् २ नहीं हैं अर्थात् वे तीनों नाम एकही परमेश्वर के हैं निघंटु अर्थात् वेदों के शब्द कोश के अन्त में तीन नामावली देवताओं की हैं ॥ उन में से पहिली में अग्नि के दूसरी में वायु के तीसरी में सूर्य्य के पर्याय वाची नाम हैं निरुक्त के अन्त भाग में जिसमें केवल देवतों का वृत्तान्त है यह दोबार कथन किया गया है कि देवता केवल तीन हैं (तिस्र एव देवता) इनसे अधिक तर अनुमान सिद्धान्त यह निकलता है कि केवल एकही देवता है यह बात वेद के अनेक वाक्यों से भी सिद्ध होती है और यही आशय निरुक्त और वेद के प्रमाण के अनुसार अति सुगम और संक्षेप रीति से ऋग्वेद के सूची पत्र में वर्णन किया है इससे यह निर्णय होता है कि आर्यों के पुराने धर्म मार्ग की पुस्तकें केवल एकही ब्रह्मको गाती हैं और सूत्रों से भी ऐसाही सिद्ध होता है ॥

(ब) वेदों से ज्ञात होता है कि आर्य्य ऋषियों का धर्म मार्ग केवल एक बड़े ब्रह्म के पूजन और श्रद्धा व भक्ति में था जिसको वे

सर्व शक्तिमान सर्वज्ञ और सर्व व्यापक जानते थे और जिसके संबंधी गुणों को वे अत्यन्त पूजनीय वाक्यों में प्रगट करते थे और वे संबंधित गुण उस की तीन प्रकार की शक्तियां हैं उनमें से प्रथम उत्पादक दूसरी पालक तीसरी संहारक नाम से वर्णन की जाती हैं॥

(स) इन शांति सत्य ध्यानों से मुझे पूर्ण विश्वास होता है कि चारों वेद एक ही ब्रह्म को गाते हैं जो सर्वशक्तिमान अनन्त चिरस्थाई स्वयंभू संसार का द्योतक और पालक है मैं इस के संग एक और ऋचा लिखता हूं जिस से एक ही ब्रह्म निश्चित होता है उस से आपकी शंका निवृत्ति होगी खूब जानिये कि आर्य्य लोग स्वाभाविक बुद्धि से सदैव अद्वैतसेवी अर्थात् केवल एक ईश्वर ही को मानते थे॥

(द) उसी उक्त ऋचा का एक चरण यह है जिससे निस्संदेह केवल एक ही ब्रह्म का निरूपण होता है यद्यपि हम लोग उसको अनेक नाम से आवाहन करते हैं, ऋग्वेद की पहिली और १६४ और ४६ वीं ऋचा को देखो स्पष्ट लिखा है कि उसी एक परब्रह्म को ज्ञानवान इन्द्र मित्र वरुण और अग्नि के नाम से पुकारते हैं कोई कहते हैं कि वह आकाश में सपक्ष गरुत्मान है और कोई २ बुद्धिवान उसी के अग्नि यम मातरिश्वा आदि अनेक नाम मानते हैं॥

ऋग्वेद में जो प्रथम मंत्र है उसमें अग्नि शब्द आया है उसका उल्था सी एच टानी साहब ए० मे० प्रिन्सिपल प्रेसीडेन्सी कालिज कलकत्ता ने आग के अर्थ में अपने उस प्रथमोक्त ध्यान से किया है कि अग्नि भी एक पदार्थ प्रतिष्ठा का वेद में है परंतु अग्नि को तत्व मान कर किसी प्राचीन ऋषि मुनि ने पूजन व आवाहन नहीं किया और

अग्नि शब्द का जो स्वाभाविक अर्थ आग का है वह केवल उन वाक्यों में लिया जाता है जिन में लौकिक संबंधी बातें हैं परन्तु ऐसे वाक्यों में जहां ईश्वर की स्तुति प्रार्थना निवेदन आदि का प्रसंग होता है वहां अग्नि शब्द का अर्थ परमेश्वर का घटित किया जाता है यह अर्थ कुछ मैंने मिथ्या कल्पित नहीं किया इस प्रकार के युक्तार्थ ब्राह्मण और निरुक्त नामी ग्रन्थों में बराबर वर्णन हो आये हैं॥

अंत पर टानी साहब की जो यह संमति है कि मैंने जो भाष्य बनाया है वह इस कारण से रचा कि सायन और अंगरेज़ी उल्थाकारों के भाष्य कट जावें अर्थात् अशुद्ध ठहरें सो इस विषय में मैं कभी दूषित नहीं हो सकता हूं अगर सायन ने भूल की है और अंगरेज़ों ने उसको अपना मार्ग प्रदर्शक जान कर अंगीकार कर लिया तो भले ही करें परन्तु मैं जान बूझ कर भूल का काम नहीं कर सकता परन्तु मिथ्या मत बहुत काल तक नहीं ठहर सकता केवल सत्य ही ठहरता है और असत्य सत्यता के सन्मुख शीघ्र धुमैला हो जाता है पंडित गुरुप्रसाद हेड पंडित ओरियंटल कालिज लाहौर ने यह बात कह कर कि स्वामीजी के भाष्य में कोई अशुद्धी छापे की कहे सो नहीं है मेरे प्रत्येक आशय को दूषित ठहराया है तथापि मैं उनको धन्यवाद देता हूं उनने मेरे भाष्य के छापने वाले का विश्वास माना यह क्या थोड़ी बात है। परन्तु मैं कहता हूं कि उसका भी दोष वे मेरा ही जानें लेकिन थोड़ा मुंह खोल कर कहें तो कैफ़ियत खुले नहीं तो क्या जान पड़े और जो वे मुझे दूसरे स्थल पर यह दोष लगाते हैं कि अपने ही पंथ का प्रचार किया चाहता है सो मैं ऐसी बातों को सुन अति पश्चाताप से कहता और समझता हूं कि वे वेद विद्या से बिलकुल अजान हैं

यदि उन्होंने प्राचीन भाष्यों का अवलोकन किया होता तो कभी ऐसा न कहते ॥ और तीसरा कलंक जो वे मुझे यह लगाते हैं कि इन्द्र मित्र और त्वष्टा आदि शब्दों के अर्थ स्वामीजीने अपनी ओर से गढ़े हैं सो उनकी इस शंका के उत्तर में मैं उनको वेद भाष्य के विज्ञापनका प्रमाण देता हूं और एक प्रति साथही इस उत्तर के ऐसी लगाये देता हूं कि जिसमें उन शब्दों का यथावत् वर्णन है फिर भी इन सब बातों के परिणाम में मुझे निस्संदेह हो यही कहना पड़ता है कि उनमें पुरातन संस्कृत विद्या अत्यन्त ही कम है ॥

चौथा दोष जो वे मेरे व्याकरण में यह आरोपण करते हैं कि परस्मैपद के स्थान में आत्मनेपद लिखा है सो अब मैं इस बात का निश्चय कराने को कि खुद पंडित जी व्याकरण का ज्ञान नहीं रखते कैयट और नागेश आदि ग्रन्थों के कई एक प्रामाणिक उदाहरण पृथक लिखता हूं और उन स्थलों की नकल भी हूबहू उनको भेज सक्ता हूं जिससे मेरा क्रिया प्रयोग कैसा शुद्ध है यह प्रतीत यथेच्छ हो जावेगी और मैंने मौके पर पाणिनीय व्याकरणके प्रथमाध्याय के तीसरे पाद का ४७ वां सूत्र भी लिखा है परन्तु विना व्याकरण बोध क्योंकर उनके समझ में आवे ॥

पांचवीं शंका उनको मेरे एक छंद के प्रयोग पर उपस्थित हुई वह अत्यन्त ही हास्य जनक है जो मैं उसका इस संक्षिप्त उत्तर में कुछ वर्णन करूं तो असार विस्तार होगा रहा उनका समाधान सो उसके लिये पैङ्गल सूत्र और उसके भाष्यकार हलायुध भट्ट का एक साक्ष्य प्रमाण पृथक लिखता हूं उसे देख शान्त होवें ॥

ज्ञात होता है कि पंडित हृषीकेश भट्टाचार्य्य गुलोय पंडित

ओरियंटल कालिज लाहौर सर्वज्ञ पंडित गुरुप्रसादजी के ही अनुगामी हुए हैं इससे उनकी शंकाओं का उत्तर वही समझना चाहिये जो पीछे लिख आए हैं (उपचारक) शब्द में उनकी एक शंका पृथक् है सो उन्हें यह बात सुझाने को कि मेरा अर्थ बहुत ही निर्मल है मैं उन्हें केवल पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के तीसरे पाद के ३२वें सूत्र का प्रमाण देता हूं उसको देख पुष्ट होवें ॥

अब रहे पंडित भगवानदास असिस्टेन्ट प्रोफ़ेसर संस्कृत गवर्नमेन्ट कालिज लाहौर सो उनकी कोई नवीन शंका नहीं है इसलिये जो कुछ मैंने ऊपर कहा वही बहुत है वेभी होवें इति॥

आर्यगण इस प्रकार इन सब सशंकितों की शान्तिः पुष्टि स्तुष्टि अस्तु करके श्रीमान् दयानिधि स्वामीजी महाराज ने इस आशय का उल्था अंगरेज़ी में कराय उसकी बहुत सी प्रति रूप वा उक्त सशंकितों के सिवाय बहुत से प्रतिष्ठित अंगरेज़ व आर्यों के पास भेज गवर्नमेन्ट को प्रतिज्ञा पूर्वक निश्चय कराया कि मेरा भाष्य यूरोप आदि के भाष्यों से विरुद्ध होने पर भी पुरातन भाष्य सम्मत होने के कारण सर्वत्र आदरणीय होना चाहिये इसके प्रचार से समस्त पाठशालाओं को भी बड़ा लाभ होगा संपूर्ण सत्य विद्याओं की वृद्धि के सिवाय अपरमित देशोन्नति के साथ अधर्म की निवृत्ति- सत्य धर्म कर्म की प्रवृत्ति और मोक्षान्त सुख की प्राप्ति निरतम होती रहेगी ॥ तब से कोई दिग्गज तो चिंघारा नहीं आनोक्ति बहुत ठौर सुनने में

आई उनको धुतकार भी होगई और होती रहेगी अस्तु ॥ यथाकृतिस्तथाफलम् ॥ हमको अपने काम से काम सो कर्ते हैं अर्थात् आगे इसके आपको आधुनिक आचार्यों के रचित वेद भाष्यों का कुछ निदर्शन दिखलाना बहुत अवश्य है क्योंकि (लोकापवादात् भयम्) अर्थात लोग कहेंगे कि अपनों की स्तुति औरों की निंदा करना जनरीति है सो यहां लेश मात्र को भी नहीं है हम ज्यों का त्यों दिखला रहे हैं ॥

देखिये महीधराचार्य्य जी की यजुर्वेद भाष्य रचना को पृष्ठ ७०८ से लेकर ७२२ तक कैसा भ्रष्टार्थ अश्वमेध प्रकरण के मंत्रों का किया है सत्य पण्डित यें तो ऐसा असंभव आशय बालभाषणों का भी कभी किसी ने न सुना होगा और आचार्यजी ने तो ग्रन्थही पूरा किया है पोप लोग भी इन्हीं का दम भरते हैं हा कितना खेद ॥

अथ महीधर भाष्यम्॥

गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवाम हे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवाम हे वसोमम ॥ आ ह मं जानि गर्भ धमा त्वमजासि गर्भ धम् ॥१॥

॥भाष्यम्॥

अस्य मंत्रस्य व्याख्याने महीधरेणोक्त मस्मिन्मंत्र गणपति शब्दादश्वो वाजी ग्रहीतव्य इति । तद्यथा ।

महिषी यजमानस्य पत्नी यज्ञशालायां पश्यतम् सर्वेषामृत्विजा मश्वस्य समीपे शेते शयाना सत्याह हे अश्व गर्भधं गर्भं दधाति गर्भधं गर्भधारकं रेतः अहं आ अजानि आकृष्य

क्षिपामि त्वं च गर्भधं रेतः आ अजासि आकृष्य क्षिपसि ॥

ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु ॥ २ ॥

॥ महीधरस्यार्थः ॥ अश्वशिश्नमुपस्थे कुरुते वृषा वाजीति। महिषी स्वयमेवाश्वशिश्नमाकृष्य स्वयोनौ स्थापयति ॥

यकासकौ शकुन्तिका हलगिति वंचति। आहन्ति गभे पसो निगल्गलीति धारका ॥ ३ ॥

म[illegible] वदति।

अध्वर्य्यादयः कुमारी [illegible] सोपहासं संवदन्ते। अङ्गुल्या योनिं प्रदेशयन् [illegible] शीघ्रगमने योनौ हलहला शब्दो भवती त्यर्थः। [illegible] योनौ शकुनिसदृश्यां यदा पसो लिंग माहन्ति आगच्छति। [illegible] नस्य नामहन्तिर्गत्यर्थः।

यदा भगे शिश्नमागच्छति तदा धारका धरति लिंग मिति धारका योनिर्निगल्गलीति [illegible] वीर्य्यं क्षरति यद्वा शब्दानुकरणं गल्गलेति शब्दं करोतीति (यकासकौ०)

कुमारी अध्वर्य्यु प्रत्याह। अंगुल्या लिंगं प्रदेशयन्त्याह। अग्रभागे सच्छिद्रं लिंगं तव मुखमिव भासते ॥

माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य रोहतः। प्रतिलामीति ते पिता गभे मुष्टिमतंसयत् ॥ ४ ॥

॥ महीधरस्यार्थः ॥

ब्रह्मा महिषीमाह महिषि हहे हये महिषि ते तव माता च पुनस्ते तव पिता यदा वृक्षस्य वृक्षजस्य काष्ठमयस्य मंचकस्याग्र मुपरिभागं रोहतः आरोहतः तदा ते पिता गभे भगे मुष्टिं

मुष्टि तुल्यं लिंगमतं सयतं सर्व ... ग्नीशर्पात एव। तवोत्पत्तिरित्य श्लीलम्। लिंगमुत्थाने नालं करोति ... व भोगेने स्नाप्नोमीति वदन् एवं तवोत्पत्तिः॥

ऊर्ध्वं मैना मुच्छ्रापय गिरौ भारं हरन्निव। अथास्यै मध्यमेधतां शीते वाते पुनन्निव ॥५॥

॥ महीधरस्यार्थः॥

यथा अस्यै अस्या वा वातापा मध्यमेध ... योनिप्रदेशो वृद्धिं यायात् यथा यानिर्विशाला भवति तथा मध्ये गृहीत्वोच्छ्रापये त्यर्थः। दृष्टान्तान्तर माह। यथा शीतले वायौ वाति पुनन्धान्य पवनं कुर्वाणः कृषीवलो धान्यपात्रं ऊर्ध्वं करोति नयेत्यर्थः

यदस्या अंहुभेद्याः कृधु स्थूलमुपातसत्।
मुष्काविदस्या एजतो गोशफे शकुलाविव॥६॥

यत् यदा अस्याः परिवृक्ताया: कृधु ह्रस्वं स्थूलंच शिश्नमुपातसत् उपगच्छत् योनिं प्रतिगच्छत् तंस उपक्षये तदा मुष्कौ वृषणौ इत् एव अस्याः योने रुपरि एजतः कंपेते लिंगस्य स्थूलत्वा द्योने रल्पत्वा दृषणौ बहिस्तिष्ठत इत्यर्थः। तत्र दृष्टान्तः गोः शफे जलपूर्णे गोः खुरे शकुलौ मत्स्याविव यथा उदकपूर्णे गोः पदे मत्स्यौ कंपेते।

यद्देवासो ललामगुं प्रविष्टीमिनमाविषुः। सक्थ्नादेदिश्यते नारी सत्यस्याक्षिभुवो यथा॥७॥

॥ महीधरस्यार्थः॥

यत यदा देवासः देवाः दीव्यन्ति क्रीडन्ति देवाः ... त्विजो ललामगुं लिंगं प्रशस्तादि ... योनौ ... यान्ति ललामगुं

सुखनाम ललाम सुख गच्छति प्राप्नोति ललामगुः शिश्नः। यद्वा ललाम पुंड्रं गच्छति ललामगुः लिंगं योनिं प्रविष्टादुर्स्थितं पुण्ड्राकारं भवतीत्यर्थः। कीदृशं ललामगुं त्रिष्टीमिनं शिश्नस्य योनिप्रदेशे क्लेदनं भवतीत्यर्थः। यदा देवाः शिश्नक्रीडिनो भवन्ति ललामगुं योनौ प्रवेशयन्ति। तदा नारीसक्थ्या ऊरुणा ऊरुभ्यां देदिश्यते निर्दिश्यते अत्यन्तं लक्ष्यते। भोग समये सर्वस्य नार्य्यंगस्य नरेण व्याप्तत्वा दूरुमात्रं लक्ष्यते। इयं नारीतीत्यर्थः॥

यद्धरिणीय वमत्ति न पुष्टं पशु मन्यते। शूद्राय दर्य्यजारा न पोषाय धनायति॥८॥

॥ महीधरस्यार्थः॥

क्षता पालागलीमाह। शूद्राशूद्र जातिः स्त्री यदा अर्य्य जारा भवति वैश्यो यदा शूद्रां गच्छति तदा शूद्रः पोषाय न धनायते पुष्टिं न इच्छति मद्भार्य्या वैश्येन भुक्तासती पुष्टा जातेति न मन्यते किन्तु व्यभिचारिणी जातेति दुःखितो भवतीत्यर्थः। (यद्धरिणो०) पालागलीक्षतारमाह। यत् यदा शूद्राः अर्य्यायै अर्य्याया वैश्याया जारो भवति तदा वैश्यः पोषं पुष्टिं नानुमन्यते मम स्त्री पुष्टा जातेति नानुमन्यते किंतु शूद्रेण नीचेन भुक्तेति क्लिश्यतीत्यर्थः।

उत्सक्थ्या अवगुदं धेहि समंजिं चारया वृषन्। यस्त्रीणां जीव भोजनः॥९॥

॥ महीधरस्यार्थः॥

यजमानोऽश्वमभिमंत्रयते। हे वृषन् सेक्तः अश्व उत् ऊर्ध्वे

सक्थिनी ऊरू यस्या तस्या महिष्या गुदमद्ध गुदोपरि रेतो धेहि वीर्य्यं धारय। कथं तदाह अंजिलिंगं सञ्चारय योनौ प्रवेशय। योंगजिः स्त्रीणां जीव भोजनः। यस्मिन् लिंगे योनौ प्रवेष्टे स्त्रियो जीवन्ति भोगांश्च लभन्ते तं प्रवेशय॥ इति महीधर भाष्य निदर्शनम्॥

आर्य्यगण देखा आपने महीधरभाष्य कहिये जैसा हम ऊपर लिख चुके उससे अधिक निंद्य है वा नहीं जिन पाठकगणों को संस्कृत में अभ्यास न होवे पैसा टका दक्षिणा देकर किसी नामी पोप देव जी से इसका अर्थ सुनकर महीधरादि भाष्य कारों को साष्टांग नमस्कार करें॥ वाह धन्य हैं उनकी विशाल बुद्धि को उनके सिवाय कौन ऐसा वेदों का गुप्त भाव बतावे। मैंने बहुतेरा साहस इसका भाषार्थ प्रकाशित करने में किया परंतु लेखनी नचली॥ यजमान की स्त्री घोड़े के साथ बांच यज्ञशाला में हजारों मनुष्यों के सन्मुख अश्वमेध नामके यज्ञमें मैथुनकर रही है उस समय उससे पुरोहित हंसते और वह भी उनको वैसाही उत्तर देती है इत्यादि जो२ अश्लील और असंभव कर्म इन महात्माजीने वर्णन किया है ऐसा कभी कोई मूर्ख मनुष्य भी मुंह से नहीं निकाल सक्ता कहिये कैसे किसी की वेदों पर श्रद्धा होवे और जो ऐसे भाष्य हों तो क्यों वेद सर्वथा सर्वत्र भ्रष्ट न कहावें इसी लिये श्रीमान् वेदोद्धारक महाराजने अति प्राचीन रीतिका नवीन अपना भाष्य रचकर सब जगत का भ्रम और अन्धकार दूर किया है॥ देखिये इन्हीं मन्त्रोंका अर्थ श्रीमान् ने परमेश्वर और राजा प्रजापालन विषयों में कैसा सर्व सत्य प्रमाणों से सिद्ध किया है तभी हम उनको बहुविधधन्य

वाद देने हैं ऐसा ही मम भला और करना सबको सदैव उचित है ॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके श्री भाष्य प्रदर्शनंनाम चतुर्थो मयूख: ॥

अथ पंचमो मयूखः।

तत्रादौ सामाजिक चरित्रम्

आर्यगण पिछले ४ मयूखों के द्वारा आप लोगों को श्रीमान् सकल विद्या निधान श्री स्वामीजी महाराज की ग्रन्थ रचना भली भांति दर्शा चुका इतनाही नहीं किन्तु इस प्रसंग से बहुत सी परमोपयोगी बातें सब पर प्रकाशित की गई हैं ॥

प्रसिद्ध है कि ग्रन्थ रचना जैसी की चाहिये वैसी विना एकान्त स्थिति के नहीं बन सकती परन्तु श्रीमान् बराबर देशाटन करते हुये इस काम को कर रहे हैं अतएव धन्य वाद है उनके पुरुषार्थ को देखिये प्रतिदिन सन्मुख आये हुए सैकड़ों मनुष्यों को यथेच्छ उत्तर देकर तथ्य समझाना नियमित समयपर सभामें जाकर तीन घंटा व्याख्यान देना और ऐसे २ अतुल ग्रन्थों को बनाना ये तीनों देशोपकारी काम प्रात करते हैं सिवाय इसके दैहिक आत्मिक और सर्व सामाजिक कार्यभी सत्यवत् यथावत् होता है परन्तु सदैव एक रस और निरालस्य ही देखे गये उनके समीप कोई राजा आवे चाहे रङ्क। वह उत्साही हो वा विरोधी एक हो अथवा अनेक परन्तु हमने श्रीमान् को उन सब के साथ एक ही सा कृपालु और आनंद मग्न पाया ॥

विक्रमी सम्वत् १९२२ से लेकर अबतक अर्थात् इस सात वर्ष के भीतर लाखों मील चले किरोड़ों मनुष्यों से मिले और पूर्वोक्त सब ऐसे ग्रन्थ बनाये कि जिनके प्रकाश और प्रभाव से हजारों वर्ष के भूले लाखों मनुष्य सुमार्गी लगे और बम्बई लाहौर फ़ीरोजपुर, अमृतसर

र, गुरदासपुर, रावलपिंडी, वज़ीराबाद, गुजरात, गुज़रानवाला, झेलम, मुल्तान, लुधियाना, सहारनपुर, रुड़की, मेरठ, मिर्ज़ापुर, दानापुर, पिशावर, देहरादून, मुरादाबाद, फ़र्रुखाबाद, [illegible] रामगढ़, कानपुर, बदायूं, बनारस, प्रयाग, मैनपुरी, [illegible] देहली, एटा, नरसिंहपुर, आदि बहुतसे नगरों में आर्यसमाज स्थापित हुए और होते जाते हैं ॥

सन् १८८० ई० के आरम्भ मे पानियर अख़बार वाले ने कुल ५० समाज और तीन लाख आर्य संख्या लिख प्रकाशित की और पश्चात् एक परिवत्सर के थ्यूसूफ़िकिल सुसैटी के सभापति अमेरिका वाले कर्नैल अल्काट साहब ने (जोकि २० मास से इस भरतखंड में आबसे हैं) जहां तहां अपने व्याख्यानों में ६० समाज और वे शुमार उनके अनुयायी वर्णन किये हैं इस से सिद्ध होता है कि इन दिनों ८० समाज और पांच लाख के लगभग [illegible] मनुष्य संख्या है आगे जैसा काल बढ़ता जाय वैसी ही ये दोनों संख्या वृद्धिंगत समझते रहो अब रहा इन समस्त समाजों की कर्तव्यता का जानना सो आगे लिखे उन के नियमों से प्रकाशित होगा ॥

अथ सामाजिक नियमाः

(१) सब सत्य विद्या और विद्या से जो पदार्थ जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है ॥

(२) ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप निराकार अनुपम सर्वाधार सर्वेश्वर सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी अजर अमर अभय नित्य पवित्र और सृष्टि कर्त्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है ॥

(३) वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है॥

(४) सत्य के ग्रहण और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये॥

(५) सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करना चाहिये॥

(६) संसार का उपकार करना [illegible] समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामा[illegible] करना॥

(७) सब से प्रीति पूर्वक धर्मानुसार [illegible] वर्तना चाहिये॥

(८) अविद्या का नाश और विद्या की [illegible] चाहिये॥

(९) प्रत्येक [illegible] ही उन्नति से सन्तुष्ट न [illegible] चाहिये किन्तु सब की उन्नति [illegible] अपनी उन्नति [illegible] चाहिये॥

(१०) सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में [illegible] और प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतन्त्र रहना [illegible]॥

इति [illegible]।

[illegible] जिसने [illegible] और श्लाघ्य ये सब [illegible] हैं यदि [illegible] इन [illegible] लोग मानें तो क्या [illegible]॥

भाई हो मनुष्य [illegible] सफल होगा [illegible] इन परम प्रशस्त और [illegible] में आरूढ़ होगे॥ जिनको अपने और अपने देश के कल्याण करने की इच्छा होवे [illegible] मात्र [illegible] उतनी ही हानि हो [illegible] नहीं इस लिये [illegible] देखो

ऊपर जो हम पांच लाख आर्य संख्या लिख चुके हैं ये कोई इम७ वर्ष के भीतर इतर देशों से नहीं आगये न आकाश से आकर गिरे हैं ये सब के सब तुम्हारे ही देश निवासी इष्ट मित्र और सुजन संबंधी हैं। कालकी बात है कि ये सब लोग मूर्ति पूजक ही थे टुक देखो और सोचो कि ये क्यों अपने बाप दादों की चाल ढाल त्याग क्षण मात्र में और के और हो गए यदि कहो कि अज्ञानता से तो हो नहीं सक्ता क्योंकि यह धर्म ऐसी वस्तु है कि इस का परित्याग सहसा कोई भी नहीं कर सक्ता कहो संवत १९१४ के गदर का क्या कारण है देखो मुसलमानों ने अपने समय में बड़े२ राजा रईस और ब्राह्मणादिकों पर धर्म छोड़ने के अर्थ कैसा२ ज़ोरो-ज़ुल्म किया। लोगों ने अपने प्राण गंवाये पर धर्म नहीं छोड़ा पादरी और ईसाई लोग सोचो कैसे२ यत्न करते और नाना प्रकार के लोभ लालच दिखाते हैं परन्तु उनका सब रुपया और प्रयत्न तथा परिश्रम व्यर्थ जाता है यदि हज़ारों में कोई एक निर्बुद्धि वा लालची वा कृतघ्नी वा कुसंस्कारी फांसभी गया तो वह दूसरे ही दिवस गेला और जन्म भर पछताता है जब देखता है कि अब मैं किसी प्रकार इधर नहीं मिल सक्ता तब लाचार हो उन्हीं में कालक्षेप करने लग जाता है ऐसों में जो मूर्ख निर्लज्ज होते हैं वे मनादी भी करने लग जाते हैं परन्तु ऐसे बहुधा वही होते हैं जो अल्पावस्था में किसी प्रकार ईसाईयों के हाथ पड़ गये वा कोई चांडाल जाति के हुए जब इस प्रकार बल वत्तर यह धर्म संकट है तो फिर कहो कि आप लोग क्यों वृथा आर्यों की तर्फ़ से भ्रम में पड़े हो कोई कहे कि आर्य समाजियों में कोई विद्वान् तो अब तक

हुआ ही नहीं सो भी अत्यन्त भूल है नेक नीची (४) दृष्टि कर देखो और इस पुस्तक के पृष्ठ ६९ से लेकर ६६ तक लौटो पलटो कपाट खुल जावेंगे अर्थात् जान जाओगे कि इन समाजों में बहुत से ऐसे बड़े २ विद्वान् और वेद शास्त्र के जानने वाले सत् पुरुष मौजूद हैं कि जिनके सन्मुख पोप तो क्या किसी पोप राज को भी साधारण बात न कहते बनेगी फिर शास्त्रार्थ करना कैसा। सिवाय इसके परमात्मा ने आप हिन्दू नाम धारियों को भी आंख कान मुंह और बुद्धि दी है थोड़ा काल खर्च कर इन समाजियों के पुस्तक देखो व्याख्यानों को सुनो जी में आवे वह पूछो

नोट (४) थोड़े दिन हुए तब मुक़ाम कलकत्ता में पंडितों की एक सभा हुई थी सभा क्या थी मानों ठीक कुछ क लोगों का एक जलसा था कैफ़ियत इसकी यह थी कि जो २ पंडित महेशचन्द्र न्याय रत्न पूछते गए उस उसको सुब्रह्मण्य शास्त्री उनकी नम्रता के अनुसार वैसाही मार्ग जैसा कि उक्त पंडितजी महाराज को अभिमत था और शास्त्री जी जो शब्द मुंह में निकालते थे उसको सब पंडित लोग वाहवा जी वाहवा बहुत ठीक बहुत ही ठीक कहते गए बस थोड़ी ही देर में सिद्ध कर मशहूर किया कि स्वामी दयानन्द जी का कहना सब अशुद्ध और पंडित महेश चन्द्र जी का विचार परम शुद्ध है इसपर अख़बार बिरादर हिन्द भी बहुत कुछ उछले उनको जामे से बाहर हुए देख मेरठ समाज ने फिर लौट उसी पिंजरे में किया जिस्में कि वे प्रथम थे॥

ख़ुलासह उसका यह है कि मेरठ समाचार कहता है कि हम मानते हैं एडीटर साहब बिरादर हिंद की इस बात को कि मूर्ति पूजकों में सब नर एकही सांचे के ढले और बेईमान नहीं हैं परंतु यह कहना तब ठीक था जब कोई ईमानदार मूर्ति पूजक स्वामीजी महाराज रचित ग्रन्थों को पढ़ उसे उस प्रकार के इतर ग्रन्थों से मिला कर क़ाइल हो आर्य समाजी न बन गया होता इन दिनों जो विद्वान् हमारे समाजों में हैं सोचैं कि वे कहां से आए उनमें से बहुतेरे स्वामीजी के वेद भाष्य बनने से प्रथम मूर्ति पूजक थे बहुत से ऐसे हैं कि जो उक्त भाष्य रचना से पूर्वही अपनी पूर्ण विद्या बल से वेदों का मुख्यार्थ समझ मूर्ति पूजा त्याग चुके थे परन्तु थे सब कुलपरंपरा से मूर्ति पूजक थे और बहुत काल तक ख़ुद भी मूर्ति पूजा करते रहे अकस्मिन्न

और उनके दिये उत्तरों को एकान्त बैठ विचारो कि कौनसा पक्ष सत्य है और ठीक मार्ग न जानने से अबतक अपने देशवासियों की क्या २ हानि हुई और जो अबभी सत्य मार्गावलम्बी न होंगे [illegible] दुर्दशा न होगी परन्तु यह ठीक समझ [illegible] आवेगी जब [illegible] विचार करोगे और जो पोपों द्वारा [illegible] में पड़े रहे [illegible] सुनते और बहुतेरे कहीं [illegible] हैं तो सत्य रूपी नौका [illegible] महाराज की आज्ञा पर चलो [illegible]

वह कथा इस प्रकार [illegible] की [illegible] पर [illegible]

में सन्देह उत्पन्न हुआ तब [illegible] विरुद्ध है यों तो आर्य समाजों [illegible] [illegible] ये समाज के सभापति [illegible] स्कूल [illegible] विद्यार्थ [illegible] जी कृष्ण [illegible] [illegible] तब बंबई [illegible] के मुन्शी [illegible] वाले पं० लक्ष्मी [illegible] पं० कृष्ण नारायणजी [illegible]

असल मतलब यह है कि [illegible] तिन पाया पर [illegible] बेचारों ने कभी [illegible] नहीं न [illegible] उनको कुछ ध्यान न उतनी [illegible] पावेंगे बस खंडन हो गया परन्तु और भी सुनों बहुत से मूर्तिपूजक [illegible] जिन्हें हम पोप कहते हैं उनको प्रसंग पड़ा जिससे यह बात खुल गई कि [illegible] जो अंतः करण से पूरा निश्चय हो गया है कि स्वामीजी जो कुछ कहते व लिखते हैं वह सब सत्य है कितनों ही ने तो स्पष्ट कह [illegible] था कि भाई स्वामी जी महाराज की प्रशंसा हमसे हो नहीं सक्ती परन्तु [illegible] प्रकाशित करें तो सेर भर आटे से भी जा [illegible] पंडित नन्दकिशोर साहब भरतपुरी और [illegible] साहब

रपट कोतवाल को जा सुनाई उसने बड़े दुःख के साथ दीवान रियासत तक यह खबर पहुंचाई ... वैसेही बहुत उदास दर्बार में पहुंचे दर्बारियों ने दीवान जी को उदास देख अपनी भी सूरत उनसे अधिक गमगीन बना कर उनसे बाइस उदासी पूछा उन्होंने भारी उसांस खींच वह हाल कह सुनाया ... दर्बारी लोग झूठ सच आंसू बहाने लगे यह खबर ... राजा साहब के भी गोशज़द (कर्णगोचर) हुई ... बड़ो गुज़ब भयो घंटा भर ... दीवान जी से कहा कि दर्बार बरखास्त करदें और ... निकाल क्या राजा ... दिनरात ... क्या दूसरे राज्य ... कोई ... आये उन्होंने ... मय सब का ... साथ पूछा कि हुजूर ... राजा साहब ने चौंककर कहा ... गंधर्वसेन ... नहीं ... कुमारी ... तो खुदाई ... है ... दाद दी। ... प्रतिनिधि ... से ... होते हैं

नजीबाबाद ... स्वामी ... को मिथ्या कह ने ... माजिक ... ममाल ... स्वामी जी ... कहते हैं कि कोई आकर हमसे स्वामी जी की ... के ... चालीस पन्द्रा पंडितों का नाम बता सके ... पर ... नहीं ... पृथ्वी सिंह ... करते हैं कि ... काशी के ... स्पष्ट कहा कि ... पंडित दयानंद ... वेद ... शुद्ध ... अतिमान्य है ... बस सब बुद्धि ... कि इस ...

बोले कि हुज़ूर गंधर्वसेन कोन थे राजा साहब बोले "जौ हम का जाने" दीवानजी से पूछो। दीवानजी बोले कि हुज़ूर ठीक हाल तो मोऊ को नहीं मालूम मोसे तो कोतवालने कही थी यों होते २ फिर लौट चौकीदार के सिर आई उसने मफुआ धोबीपर उतारी वह रोबरू दर्बार के हाज़िर किया गया पूछा क्योंरे धोबी वाले गंधर्वसेन के मरवे की ख़बर तूने इस चौकीदार से कही थी वह हाथ जोड़ कर बोला कि हां हुज़ूर कही तो ज़रूर हती कोतवाल ने धमका कर कहा अच्छा तो बतावें को हते बोला हते को काऊ नहीं वो तो हुज़ूर के गुलाम को गधा हतो। यह सुनतेही मति निधि साहब ने मुंह को रूमाल लगा कर अपनी हंसी रोकी राजा मोहित दर्बार चुप और आंखें नने धरती की ओर - कहिये आर्य गण क्यों यह दर्बार इस प्रकार आज लों बदनाम क्यों इसको मूंछ मुड़ी और क्यों दूसरों के आगे इन्को ऐसा लज्जित होना पड़ा। केवल बिन सोचे विचारे काम कर बैठने से वा कुछ और। बस यही दशा पोप प्रचारित धर्म की जानो। सैंकड़ों वर्ष से मुसल्मान जैनी और ईसाई इनके धर्म की धूल उड़ावें और ये चुप सुनें यों होते २ सर्वत्र वैदिक धर्म शिथिल होगया हज़ारों अपने हक़ीकी भैय्या हाथ से निकल गए अर्थात वैदिक धर्म छोड़ जैनी मुसल्मान और ईसाई हो गए और होने को थे। हाय कैसा शोक और अपार यह दुख था। कि जिस्को श्रीमान् परमदयालु स्वामीजी महाराज ने नर सिंह रूप धारण कर दूर किया नहीं तो न मालूम अब तक और कितने हमारे भाई बेटा हमसे न बिछुड़ जाते अर्थात जितने ये नव शिक्षित युवा इन दिनों पढ़ कर स्कूल कालिज छोड़ते उनमें से बहुत कम अबलों घर के रहते ख़ैर गुज़री जो वह बला बूटकोट पतलून और चुरट तकही रही अब तो हमारे २० वर्ष के लड़के ईसाईयों का नाक में दम करते हैं इस लिये कहा जाता है कि प्यारे चेतो और आंखों से बंधी अपनी पट्टी खोलो आपने गए दिन फिर कर फिरे समझो। देखो अख़बारों को वही जैनी आदि लोग आज कहां तक तुम्हारा वैदिक धर्म स्वीकार कर रहे हैं - कहो यह किसका प्रताप। जिनका तुम अबलौं विश्वास करते और दम भरते हो वे तो डुबोही चुके थे अर्थात धन विद्या बुद्धि चतुराई और राज पाट तो खोही चुके थे भाई बेटा और ज्ञानहार थे सो बच गए यदि इन पोपों में कुछ सत्य विद्या होती तो अवश्य उनके

द्वारा ये लोग वेद द्वेषियों का मुखध्वंस करते जब कहीं कोई एक भी ऐसा न कर सका तो फिर क्यों कर ये लोग विद्वान् वा बुद्धिवान् कहे जा सके हैं इन्होंने तो वेद रक्षा के ठौर अपनी तोंद रक्षा को मुख्य धर्म समझ रक्खा है जब उसकी रक्षा में बाधा दीखी तभी आर्य समाजों के मिटाने को घुस रहे और उनका नाम धर्म सभा रख हाय तोबा मचाने लगे पर मारने मर्द का सामना करना बहुत दुर्घट होता है दूर से ही बहक कर झूठे मन के गोले चलाने लगे भला क्योंकर ग्राफ़ और बम्ब के गोलों के आगे ये धुम ठहर सके थे सब उड़ गए और उनके ठौर बड़े २ गार पड़ गए निदान चार दिनकी दर फिस करके सबके सब घायल से धर पड़े हाय टका हाय टका पुकार रहे हैं और उपकार मानने के बदले हज़ारों दुर्वचन श्रीमान् को सुनाते हैं अनेक मिथ्यादोषों से आर्यों की सभा और सभासदों को दूषित करते हैं उनके चलन व्यवहारों और विवाहादि कार्यों में हानि पहुंचाने में समस्त प्रयत्न भी करते हैं बहुतों ने अपने मेली कुछ आदिमियों को ले उनको बावरन (बनावटी) आर्य बनाय उनको सर्वत्र घुमाय उनसे पश्चात्ताप कर वाय प्रायश्चित्त देना प्रसिद्ध किया है (५) इस लिये जिस से फिर कोई आगे इन

नोट (५) देखिये आर्यगण इनका बुद्धि वैचित्र्य। सर्वजगत् के उपकारक सत्य सनातन वैदिक धर्म प्रचारक आर्यों को प्रायश्चित्त के योग्य ठहरावें और नीचे लिखे समस्त दुराचारिणों को लीन कुलीन और परम प्रवीण बनावें। आंखों के अन्धे नाम नैन सुख वा कमल नैन। इस कहावत को भला सिवाय ऐसों के और कौन सत्य कर दिखावें वाह पोपजी वाह धन्य है आपकी विद्या और चतुराई उई। का यह प्रभाव है कि इतर जातीय सभ्यों के सदृश तुम्हारे सजातीय और स्वदेशीय भी तुम से घृणा करने लगे। तुम लोग तो आयुधारा के किनारे आ लगे परन्तु बड़ा भारी खेद है हमको तुम्हारी सन्तान का सोचो उनकी क्या दशा होगी॥

लोग ब्राह्मणादिक उत्तम वर्ण के कहावें परन्तु पशु पक्षियों को स्वहस्त से मारें और खाय मद्य होटलों में भी खाने पकड़े जावें और बहुतेरे अप्रकट २

फिर कोई आगे इनके समाजों में न जा मिले और जो हैं वे डर कर इधर
आजावें बाज़ तौर फौज़दारी भी कर बैठे अंत को कोई जुर्माना दे घर
आए कोई जुर्माना देने और मुचलका लिखने के सिवाय कारागा·
र सेवी भी हुए यहां तकही नहीं किन्तु ये लोग श्रीमान् के

का मद्य पिये गांजा चर्स और भंग की पीक में उड़ावें। महा भ्रष्ट कामी कुचाली और
कुपात्रों को आचारी पुजारी और कुलपूज्य कुलाचार्य गुसाईं कह कर उनकी जूठ·
न और मूत्र क्षत वस्त्र के निचोड़न को महा प्रसाद मानें और पावें और उनको अ·
पनी स्त्रियां समर्पण करें तथा भंगी चमार चूहड़े और मुसल्मान मूड़ मुड़ाय संत म·
हंत बन इनके माल खावें और अपने हाथ का इनको भी खवावें तथा यहां से कारे
पानी तक रह कर मानो भात का स्वाद पावें परन्तु घर आये पीछे त्यों के त्यों वाज
पेई बन जावें जुआ खेलें चोरी करें और करावें धनिकों के यहां भड़ुओं का सा काम दें
वें नाचें मटके गावें और नकलें करें तथा उनकी गाली झूठी [illegible] की भी दल्लु
गी खावें तथापि द्विवेदी और चतुर्वेदी ही बन [illegible] बुड्ढों को [illegible] कन्या व्याह
कर रोकड़ लेवें और उनकी शरीर [illegible] आयुभर मरण पर्यंत उसका माल खावें प·
रन्तु पावन ही जाने जावें। [illegible] भी [illegible] विजातीय को छोड़ चमारी चूहड़ी और
यवनी को उसके स्थान [illegible] बिठाने और विधवा [illegible] अपनी भाई भतृ·
जम चाची भाभी मांई बूआ मौसी गुरुस्त्री और बहन बेटी [illegible] जावें।
मंदिरों और तीर्थ स्थानों में परस्त्रियों को घूरें और दाव पावें वहीं धर भागें तथापि [illegible]
गत ही कहावें। लड़कों के [illegible] वस्था ही अपना [illegible] बहावें [illegible]
गिरावें और हर्ते के हुए लड़का लड़की और चलते फिरते [illegible] यों को मार फेंक प·
बुरे न जाने जावें प्रति दिन गंगा तुलसी सालिग्राम उठा कर रुपयों में मिथ्या गवाह·
देवें और सत्य गवाही आपड़े पर मुंह छिपावें अनेक जाल [illegible] के [illegible] घात पात
करें और अनेक विधवाओं का धन धाती जो हड़कीन अपनी कर लेवें पर [illegible]
त न ठहरें कसाइयों के हाथ गौ वेंचें कटवावें तथापि [illegible] होवें और गं·
गा यमुना के प्यारे पुत्र ही बजें और माने पूजे भी जावें ऐसे ऐसे अनेक प्रकार के स्व
पातकी और महा पातकी पोपों को टका देने के कारण उनके [illegible] में लीन और उ
नों टका न देने के कारण आर्य समाजी अति शुद्ध होने पर भी मलिन ठहराये जा
वें बड़े अन्याय॥

प्राण हरणार्थ भी बहुविध बल कर चुके हैं और यह काम नगर फ़र्रुख़ाबाद तथा काशी आदि कई स्थानों में हुआ निदान जब कोई उपाय काम न आया तब हार मान चुप हुए। इस प्रकार के स्वार्थी कृतघ्न पातकी लोगों के समागम से किसका कल्याण हुआ वा होगा वा होने को है और जो ऐसे लोग सभ्य कहावें तो कहिये राक्षस फिर का नाम धरा जावे मूर्ति पूजा को परम धर्म बतावें परन्तु उस मत के पुष्टि करने वालों पर उस विषयक कोई विपत्ति आ पड़े तो कभी उसके सहायक न होवें देखो मुरादाबाद के मुंशी इंद्रमणिजी पर पार साल मुसल्मानों ने कैसी विपत्ति ला डाली थी कि जिसमें भरत खंड भर में हिल चल पड़ गई व था उन पर ५००) रुपया जुर्माना हुआ सैकड़ों रुपया मालियत के पुराण और मूर्ति पूजा पुष्टि कारक उनके बनाये हुए सब ग्रन्थ चलाये गये परन्तु किसी पोपोक्त धर्म सभा वाले ने उनकी मदद न की धन देना तो दूर तन वा मन तक किसी ने उस तरफ़ न लगाया॥ आर्य समाज फ़र्रुख़ाबाद ने एक प्रार्थना पत्र अपनी गवर्नमेंट को इस विषय में न्याय होने के लिये लिखा था उस पर समस्त आर्य समाजियों के हस्ताक्षर हुए पीछे विचार हुआ कि इस पत्र पर पोप धर्म सभा वालों के भी हस्ताक्षर हो जायं तो अच्छा है निश्चय है कि वे लोग कर भी देवेंगे क्योंकि यह अनर्थ वास्तव्य में उन्हीं के मत पर है परन्तु विचार हीनों ने हस्ताक्षर न किये मुख्य सभासद ने वह पत्र द्वितीय सभासद के पास ले जाने को कहा द्वितीय ने तृतीय के इसी प्रकार सब पंचो ने पत्र दर्शन करके उलटा दिया एक साहब इस सभा के पंच तो पत्र देख ऐसे चौंके मानो पत्र नहीं वह सर्प

था चन पीछे हट दोनों हाथ समेट कर बोले कि मुझको इस से कुछ वास्ता नहीं चाहो हिन्दू मरें चाहो मुसल्मान् ॥

कहिये भ्रातृगण इसीका नाम धर्म सभा होता है यदि इस समय आर्य समाज सर्वत्र बन गये होते तो इस न्यायकारी गवर्नमेंट के भी राज्य में यवनों के हाथ से भरत खंड का धर्म बचना अति कठिन होजाता अब यहां और कुछ [illegible] लिखने की अवश्यकता नहीं क्योंकि हज़ारों अखबारों के द्वारा यहां से विलायत तक प्रसिद्ध होचुका है कि सब आर्य समाजों से हज़ारों रुपया चंदा एकत्र हुआ और तीन दर्जे तक यह मुकद्दमा आर्य समाजियों ने तन मन धन से पहुंचा कर मुसल्मानों से विजय प्राप्त की यद्यपि इस अवल चिन्ता में एक वर्ष से अधिक दिन व्यतीत तो हुए परन्तु भरत खंड वासियों का धर्म रहा यदि किसी प्रकार यहां मनोरथ सिद्ध न होती तो अवश्य यह मुकद्दमा लंदन पहुंचाया जाता ॥

अब कहें सत्य धर्म रक्षक विचार शील लोग कि आर्य समाजों की स्थिति से कैसा क्या लाभ अपने देश को हुआ और होगा सैकड़ों बल्कि हज़ारों वर्ष पीछे यह एक नया ऐक्यता का उदाहरण हाथ आया ॥

मैं लिख चुका हूं प्रथम खंड के प्रथम मयूख में कि वेदों की आज्ञानुसार सर्वत्र सभाओं का नियत होना परमावश्यक है क्योंकि ऐक्यता जो देशोन्नति की भारी जड़ है वह बिना ऐसी सभाओं के ठहर नहीं सक्ती और देशोन्नति अर्थात् संसार का उपकार करना इन समाजों का मुख्य उद्देश्य है ऐसा इन समाजों के छठे नियम में भी स्पष्ट लिखा हुआ आपको दिखा चुका फिर यह कब हो सक्ता था

कि आर्य समाजी देखा पर जाती विपत्ति देख धर्म सभा वालों की नाई अलग होजाते और जो ऐसा करते तोउनका भीधर्म बनावटी कहा जाता और जो धिक्कार अब मूर्ति पूजकों पर चारों ओर से पड़ रहा है उस से अधिक इनपर पड़ता और जब कभी आगे चूकेंगे तब पड़ेगा भाई हिन्दू लोगो यह मुन्शीजी वाला प्रसंग कोई सामान्य बात नहीं थी न जाने उस समय आप लोगों ने क्यों चूड़ीपहन लीं लज्जित हो अब भी लज्जित हो और आगे को चेतो। यद्यपि प्रसिद्ध है कि तुम्हारा उक्त धर्म सब जाल और सरासर बनावट है तथापि धर्म इस नाम पर आर्य समाजी झुकपड़े हज़ार आर्य समाजियोंको जुदा समझो आरव गाली दो और उनकी हानि करने में अनन्त यत्न भी करो परन्तु वे कभी तुमसे बदला नहीं ले सक्ते ले तो तब जब वे तुमको संसार से बाहर समझें निश्चय रक्खो अवश्य निश्चय रक्खो वे लोग तुमसे पेट भरू और स्वार्थी नहीं हैं वे जो कुछ तुम लोगों के विषय में लिख कह रहे हैं वह सब तुम्हारेही मंगलार्थ कह रहे हैं वे तुम्हारे अत्यंत शुभचिन्तक हैं जैसे रोगी और कुचालियों को कुपथ्य और कुचाल से रोकने वाले वैद्य मा बाप और मित्रादिक वैरी जान पड़ते हैं वही हाल तुम अपना और उनका जानो और याद रक्खो कि जैसे बहके हुए लड़के सिड़ी और नशैलों को सूधी और हितकी सब बातें विपरीत सूझ पड़ती है परन्तु उक्त दोषों के उतरे पीछे वे पछताते हैं वैसे तुम लोग भी किसी दिन शोक करेंगे, देखो कितने प्रकार से तुमको सब ठीक २ हाल लिख समझाया पर बनेगी तब जब तुम भी कुछ सोचोगे॥ हे जगदीश्वर तू हमारे इन सब हिन्दू नाम धारी भाईयों को शुद्ध बुद्धि और

सुदृष्टि दे जिस से इनको हितकी सूझे और जे अपनों को अपना समझें। बंधुगण जैसे थोड़े २ भेद के कारण होगए हैं दो दो भेद जिनके ऐसे मुसलमान और अंगरेज़ लोग आपस में एक दूसरे से विरोध रखकर भी स्वदेश का हितही चाहते हैं और बाहर वालों के लिये दोनों प्रकार के यवन वा अंगरेज़ एक हो जाते हैं वैसा तोभी तुम बाहर वालों के लिये आर्यों के साथ अपना बर्त्ताव कर रक्खो फिर देखो कि इतने ही से कितना सुख और लाभ तुमको होता है सारांश यह है कि आर्य समाजियों के दश नियमों में से उतने नियम तुम चुन कर स्वीकार करलो जितने में प्रस्तुत जिसको तुम स्वधर्म जान रहे हो वह तुम्हारा सधा चला जावे॥ देखो गौ रक्षा में सब आर्य समाजियों ने कैसा धन चन्दा करके एकत्र किया है और कैसे २ उत्तम नियम उस काम के प्रबन्ध के लिये बांध रहे हैं तुम लोग भी उसको परम धर्म समझते हो फिर क्या कारण है जो तुम उस काम में अपना उत्साह नहीं प्रकाशित करते और क्या कारण है जो तुम जानबूझ कर इस गौ रक्षिणी सभा में मुसलमान और ईसायों की भांति इन आर्यों से जुदे हो तमाशा देख रहे हो क्या यह बात भी तुमको लज्जित नहीं करती कहा मानो ऐसे अनेक कलंकों से कलंकित तुम हो रहे हो इस लिये कदापि इन आर्यों से जुदाई जनलाना तुमको शोभा नहीं देता इन कारणों से तुमको अटल दुःख भोगना पड़ेगा अतएव दूरदर्शी तुम्हारे परम मित्र ये आर्य लोग तुमको बारंबार चिताते हैं जब तक तुम ठीक मार्ग पर न आओगे तब तक आर्य लोग बराबर दोष तुम्हें दर्साते रहेंगे इसका कदापि तुमको बुरा न मानना चाहिये

स्मरण रक्खो कि इन आर्य लोगों के लाभ और मुख्य कर्तव्यता की हानि उस भांति होती है जैसे किसी गृहस्थ की उसके किसी भाई व बेटा के पागल हो जाने से होती हो अर्थात् जैसे वह गृहस्थ दिन रात उस पागल की सम्हाल के कारण अपना रोज़गार हाट आदि काम यद्देच्छ नहीं कर पाता केवल उसी की दुरुस्ती की चिन्ता में मगन रह कर उसके उपाय सोचा करता है। वैसे ही ये लोग तुम्हारी चिन्ता में रहते हैं तो क्या तुमको इनका उपकार नहीं मानना चाहिये। कहावती यह है ("सन्तस्तृणोत्तारणमुत्तमांगात्सुवर्णकोट्यर्पणमामनन्ति॥ प्राणव्यये नापि कृतोपकाराः खलाः पुनर्वैरमिवोद्वहन्ति॥२॥) कि सज्जन लोग अपने सिर से तिनका उतार फेंकने वाले का उपकार किरोड़ सुवर्ण मुद्रा दिये के बराबर मानते हैं परन्तु दुर्जनों की लीला ही जुदी है अर्थात् वे लोग अपने ऊपर प्राणों तक खो देने वालों से उस काम के बाद वैर ही मानने लग जाते हैं॥

कहिये बुद्धिवान् को उक्त दो प्रकारों में से क्या करना उचित। हमने स्वनेत्रों से देखा कि एक प्रतिष्ठित आर्य सभासद ने सुना कि फलां रईस साहब की आज कुछ गड़बड़ सी हुई जाती है उसी दम कहला भेजा कि घबड़ाए नहीं मैं हाज़िर हूं फिर वैसा ही कर दिखाया हालांकि रईस साहब पूर्व से ही इनके भारी ऋणी और हिन्दू धर्म सभा के नामी स्तम्भ थे बल्कि सभा जब तक उन्हीं के स्थान पर हुआ करती थी॥ परन्तु इससे क्या। समय निकल गया, लाला साहब भी कुछ घाटे में न रहेंगे परंतु उदाहरण हो गये ऐसा करना सब को उचित है परंतु वैसा कदापि कोई न करे जैसा कि उक्त रईस साहब के किसी विश्वासु मित्र पोप सभा के दूसरे स्तम्भ ने किया हालां कि बड़े भक्तों में से हैं दे-

रिवये एक प्रसंग में दो उदाहरण उपस्थित होगये जिन में से एककी निन्दा दूसरे की स्तुति सर्वत्र नगर में हो रही है ॥

आर्यगण इस प्रकार के सर्वोत्तम सर्व मान्य आर्य समाजों के नियम और उपनियम हैं कि जिन के थोड़े ही दिन के प्रचार से ऐसे सैकड़ों एक से एक बढ़कर उदाहरण वर्णन में आसक्ते हैं जिस समय परम कृपालु श्रीमान् ने ये प्रशंसित नियम रचे थे निश्चय था कि बहुत शीघ्र हमारे सब देशनिवासी स्वीकार कर लेवेंगे और अवश्य कर भी लेते परंतु बेचारों को पोप देवों ने खराबी में डाल रक्खा है। पोप भी क्या करें जिन पर हो पेट देव सवार ॥

भाई आर्य समाजियो भूख तो आप साहबों को भी लगती है तो फिर क्या वजह जो गो रक्षा में इस प्रकार धूम धाम पर इनसे नहीं किसी को कुछ काम। इस हद इनकी ओर से आंख बंद होना न चाहिये देखो परमेश्वर का नाम गो ब्राह्मण हित कर है अतः गो और ब्राह्मण का बराबर पद है अंतर है तो केवल इतना कि वह पशु ये नर। तो अवश्य हुआ कि पशु रक्षा से मनुष्य रक्षा प्रथम की जाय (१) मनुष्यों में भी उनकी रक्षा अवश्य है जिनकी उपजीविका लिखना पढ़ना हो (२) लिखने पढ़ने वालों में से भी वे विशेष ग्राह्य हैं जिनकी सत्य विद्या में अभिरुचि हो (३) उनसे अधिक वे रक्षणीय हैं जिनकी प्रकृति निर्मल हो (४) ये सब चार प्रकार के मनुष्य हुए। प्रथम को छोड़ा तो रहे तीन, उनमें से प्रत्येक के उत्तम कनिष्ठ नाम के दो २ भेद करने से छः प्रकार हो जावेंगे इनमें छुटे हुए को फिर मिला लेने से सब मनुष्य सात दर्जों में हो जावेंगे उनमें से जिन्हें पेट देव सता रहा हो उनकी रक्षा अवश्य सेव होनी चाहिये

उसका उपाय भी सोचा जावे और वह यथा योग्य अर्थात् जैसे को वैसा हो इन दिनों लिखने पढ़ने वालों को कहीं २ कुछ २ सुबीता है परन्तु नहीं है तो उनका जिनको भिक्षुक वृत्ति कहते हैं। उनके लिये कर्म उपासना और ज्ञान इन तीनों कांडों के साधक छोटे बड़े सत्य धर्म प्रचारक ग्रन्थ बना कर विज्ञापन दिये जावें कि इस बरस ऐसा सदैव दैवी श्रावणी और कार्तिकी को तीन डार नीचे लिखे पुस्तकों में भिक्षुक ब्राह्मणों की परीक्षा होगी जो इसमें उत्तीर्ण (कामयाब) होंगे उनको इस २ प्रकार पारितोषक (इनाम) और सनद मिलेगी और फिर सनद वालों से आर्य लोग अपने यहां वेद विहित १६ षोड़श संस्कार और होम हवनादिक कर्मों का काम लेवेंगे और मिठाई भी खिलावेंगे, यथा कार्य दक्षिणा भी होगी- सनद वाले ब्राह्मण लोग खुद भी शुद्ध पवित्र और सत्य परायण रह कर दोनों काल संध्या वंदनादि नित्य और नैमित्तिक तथा उक्त संस्कारादि कर्म सदैव प्रीति पूर्वक करते रहे जावें ऐसा न हो कि बजाई ढोलक और उड़ई पसनी वा मुड़ना॥

ऐसे अनेक काम उन के लिये आर्य लोग सोचें और उनका सन्मान प्रतिष्ठा उनकी योग्यता नुसार करें जिस्से उनका चित्त शांत हो और वे दुर्गा सप्ताह और सत्य नारायण आदि कथाओं को भूलें और आपके समाजों को सराहें। ऐसा होने से एक लड़ाई फ़तें की कहावत होगी अर्थात् पुराय और पुरुषार्थ दोनों सधेंगे। अन्यथा आप लोग कुछ नहीं कर सकेंगे सदा विघ्न ही होता रहेगा और सुख के पलटे संदेव गोका कुल रह कर यही कहोगे कि हाय बज्र तेरा सिर मारा पर इन दुष्टों के मारे दाल नहीं गलती। इसलिये

वह काम कीजिये जिस्में आप की दाल गले-कदाचित् कहो मान और गौरव उन्हीं का किया जाता है जिनके गुण और काम वैसे होते हैं ये लोग तो बड़े ही कृत्रिमी और मिथ्यावादी हैं। ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः। ब्राह्मण वह जो ब्रह्म अर्थात् वेद वा ईश्वर को जाने सो यह कहना आप लोगों का बहुत ठीक परन्तु कहिये तो सही कि स्वदेश में ऐसी कौनसी पवित्र जाति रही है जो अपने रोज़गार में इन दोषों से लिप्त नहीं और जो कहा कि "ब्रह्मजानाति ब्राह्मण" सो ऐसी व्युत्पत्ति क्षत्रिय आदि शब्दों की भी है जैसे "क्षतात् त्रायते सो क्षत्रियः" अर्थात् क्षत्रिय वह जो सबको दुःखों से बचावे जब ऐसा कोई क्षत्रिय भी नहीं दिखाई देता और न कोई अन्य जाति तो फिर केवल ब्राह्मणों पर ही लक्षणा करनी व्यर्थ है अभी तो अपना सब देश ही बिगाड़ में है सबके संग ये भी सुधर रहेंगे फिलहाल उनकी नींद चौंकने दो, और आप उनके भूख की फ़िकर करो क्योंकि भूखा सिवाय पाप और कुछ नहीं कर सक्ता ऐसा अनुभव है और कहा भी है "बुभुक्षितः किन्न करोति पापं" अर्थात् वह कौन पाप है जिस को भूखा नहीं करता। अब कहोगे कि आपने बहुत ठीक सिद्ध किया परन्तु क्या करें ऐसों के पालने और मानने में स्वामीजी की आज्ञा नहीं पाई जाती। वाहजीवाह। यह तो आपने ख़ूब ही कहा। भाई आर्यो कभी स्वामीजी महाराज का ऐसा विचार ध्यान में मत लाओ। मैं लिख चुका हूं प्रथम खंड के द्वितीय मयूख में कि स्वामीजी महाराज का प्रथम हेतु यही था कि ये समझें और इनको पूर्ण लाभ हो तथा इन्हीं के द्वारा सारी सृष्टि सुधरे परन्तु "प्रतिकूले हरौ कां का दशां नाप्नोति वै सुमान" अर्थात् हरि रूठे तो क्या बाक़ी

रहे। सो भावई इनकी ने इनको सुपथ न लगने दिया। नहीं तो नमालूम अवलों इनमें से कौन कैसे गुणवान् व धनवान् न हो जाते अस्तु ,, गतं न शोचामि,, अब से ही सही। बस भाई ब्रह्म वर्ग, मैं बहुत कुछ आपकी ओर से वकालत कर चुका और इस वक़्त आप को डिग्री भी दिलादी लेकिन् बशर्त नेक चलनी आपकी यह रियासत क़ायम रहेगी वर्नह मिसल मल्हारि राव गायक वाड़ के ज़ब्त व क़हरन् बेदख़ल कर दिये जाओगे इस लिये आपका शुभचिन्तक आप सबको प्रथक् २ हाथ जोड़ बारंबार नमस्कार पूर्वक प्रार्थना करता है कि आप लोग अपने २ पुराने आदि पुरुषों का नाम अर्थात् गोत्र (ख़ान्दान) एक बार याद कीजिये और फिर विचारिये कि वे कैसे थे और उनकी सन्त। न हम कैसे हैं और उनकी कृति वा आचरण क्या थे और हमारे क्या हैं तो आपको निश्चय हो जावेगा कि धरती और आस्मान का अंतर है केवल इसी कारण कि वे जिस शुद्ध सनातन वैदिक मार्ग पर चलते थे आप नहीं चलते। फिर कहिये आपका मान गौरव और प्रतिष्ठा वैसी क्योंकर हो सक्ती है जैसी कि आप चाह रहे हो। भला बिना गुड़ आदि मा दृश पदार्थ के कभी किसी ने शर्बत कर पिया है कभी नहीं कभी नहीं तो बस अब आप लोग वृथा बंचित न होकर आगे लिखी ग्रन्थनामा वली को देख अर्वाचीन ग्रन्थों का प्रचार एक साथ उठा कर प्राचीन ग्रन्थों को देख भाल अति तूर्ण प्रवीण हूजिये जिस्से कामना चतुष्टय आपके मुष्टिगत हो जावे ॥ नर जन्म पाकर जिसने सत्या सत्य विचार न किया वह आत्मघातक है संसार में किसी का आत्मा असत्य नहीं है चोर चुराकर चोरी करता है और किसी से अपना

भेद नहीं कहता परन्तु मन में चोरी करना सदैव क़बूलता रहता है। ऐसे सत्य स्वरूप आत्मा को जो असत्यों में सानता है वह उत्तमोत्तम भोजन को हलाहल मिला कर खाता है इस प्रकार इसमें विष मिलाना कभी किसी बुद्धिमान् को उचित नहीं सदैव सबको अपने सत्य स्वरूप आत्मा को सब सत्य कामों से युक्त रखना चाहिये अर्थात् सत्य कहे सत्य सुने सत्य करे सत्य पढ़े और सत्य ही को माने और पूजे। देखो जैसी कि धर्म की ग्लानि अब देखते हो वैसी कोई तेरह सौ वर्ष से अधिक दिनों की बात है जब भी होगयी थी उन्हीं दिनों परमहंस परिब्राजकाचार्य श्रीमान् स्वामी शंकराचार्यजी महाराज ने वैदिक धर्म को फिर कर स्थापित करने के लिये बड़ा परिश्रम उठाया था परंतु परम शोक बात यह हुई कि वे पूर्णायु न हुए अर्थात् केवल ३२ वर्ष की आयु में चल बसे इसी से उनके पीछे जल्द ही फिर वैदिक मार्ग में गड़बड़ा चौथ पड़ गई अर्थात् जिन मिथ्या मतों का उन्होंने खंडन किया था वे सब फिर हरे होगये और बहुत से रामानुजी वल्लभकुली आदि मत और नए उत्पन्न हुए उन सब पूर्वापरों का नाम आगे देख मिलेगा जिन दिनों श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज खंडन मंडनादि में प्रवृत्त थे उन दिनों अब की अपेक्षा बहुत सी बातों का सुबीता था प्रथम तो यह कि इस देश में ईसाई व यवनादिकों का कहीं कुछ दख़ल न था दूसरे सब राजा लोग स्वदेशी थे उनमें से बहुत से आचार्यजी के सहायक थे तीसरे इस देश निवासियों में इस प्रकार झूठ जाल फंद फ़रेब और पक्षपात न था जैसा कि अब देखा जाता है उस समय यदि कोई मतवादी हार पीछे हठ वा दुराग्रहादि से उपदेश नहीं मानता था उसको राजगण मना

छोड़ते थे ऐसा प्रबंध था॥ सारांश वह समय ऐसा था कि जहां उक्त आचार्यजी पहुंचे तहां उन्होंने लोगों को उपदेश किया जिसमें जितना पांडित्य हुआ उतनी उसने आचार्यजी महाराज से बहस की जब न चल सका तब गिड़गिड़ाकर उसी दम चरणों में गिर पड़ा और तुरंत सत्य मार्गावलम्बी हुआ ऐसा लेख शंकर दिग्विजय में सर्वत्र है उसकी एक कथा यहां भी आगे उदाहरणार्थ लिखी है उक्त ग्रन्थ सबका सब संस्कृत में है परंतु कृष्णा की भाषा भी लिख दी है॥

आर्यगण देखिये वह उदाहरण कैसा चित्त को समाधान पहुंचाता है अर्थात् उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज और श्रीमान् स्वामी दयानन्द जी महाराज के कामों में तिलमात्र की कमी वा बेशी नहीं है परन्तु हाय समय में तो धरती आकाश कासा अंतर हो गया उस समय जहां लोगों को अपनी बात मिथ्या समझी और वे तुरन्त शरण हुए फिर जो कहा वह किया और अब का विपरीत हाल तो सब प्रसिद्ध ही है। यह सब ख़राबी केवल सत्य विद्या न होने के कारण हो रही है सो अब उस विद्या की पहिचान के लिये वेदादि सब सत्य शास्त्रों और ग्रन्थों के नाम लिखे जाते हैं॥

मनुष्य लोग वेदार्थ जानने के लिये अर्थ योजना सहित व्याकरण अर्थात् अष्टाध्यायी धातुपाठ उणादिगण गणपाठ महाभाष्य। शिक्षा कल्प निघंटु वा निरुक्त छंद और ज्योतिष। ये छः वेदों के अंग, मीमांसा वैशेषिक न्याय योग सांख्य और वेदांत। ये छः शास्त्र जो वेदों के उपांग। अर्थात् जिनसे वेदार्थ ठीक

जाना जाता है तथा ऐतरेय[1] शतपथ[2] साम[3] और गोपथ[4]। ये चार ब्राह्मण, इन सब ग्रन्थों को क्रम से पढ़ के अथवा जिन्होंने उनसम्पूर्ण ग्रंथों को पढ़के जो सत्य २ वेद व्याख्यान किये हों उनको देख के वेद का अर्थ यथावत् जान लेवें क्योंकि (नावेदवित्) वेदों को नहीं जानने वाला मनुष्य परमेश्वरादि- सब पदार्थ विद्याओं को अच्छे प्रकार से जान सकता और जो२ जहां २ भूगोलों वा पुस्तकों अथवा मनमें सत्य ज्ञान प्रकाशित हुआ है और होगा वह सब वेदों में से ही हुआ है क्योंकि जो २ सत्य विज्ञान है सो २ ईश्वर ने वेदों में धर रक्खा है इसी के द्वारा अन्यस्थानों में भी प्रकाश होता है और विद्या के बिना पुरुष अंधे के समान होता है इससे सम्पूर्ण विद्याओं के मूल वेदों को बिना पढ़े किसी मनुष्य को यथावत् ज्ञान नहीं हो सक्ता इसलिये सब मनुष्यों को वेदादि शास्त्र अर्थ ज्ञान सहित अवश्य पढ़ने चाहिये ऐसी आज्ञा श्रीमान् जगद्गुरु श्री स्वामीजी महाराज की सब मनुष्यों के वास्ते है जिनको अपने श्रेय की पूर्ण इच्छा होवे शीघ्र स्वीकार करें॥

विदित होकि मंत्रभाग की चार संहिता कि जिन का नाम वेद है वे सब स्वतः प्रमाण (६) कहे जाते हैं और उनसे भिन्न ऐतरेय शतपथ आदि जो प्राचीन सत्यग्रन्थ हैं वे सब परतः प्रमाण के योग्य हैं तथा ग्यारह सौ सताईस (११२७) चारों वेदों की शाखा भी वेदों के व्याख्यान होने से परतः प्रमाण तथा (आयुर्वेद) अर्थात्

नोट (६) जिन ग्रन्थों के आशयों पर दूसरे ग्रन्थों का साक्षित्व अर्थात् गवाही नहीं चाहने पड़ती वे स्वतः प्रमाण और जिन पर वेदों का साक्षित्व होना अवश्य है वे परतः प्रमाण कहाते हैं॥

जो वैद्यक शास्त्र चरक सुश्रुत और धन्वन्तरिकृत निघंटु आदि येसब मिलकर ऋग्वेद का उपवेद कहाता है (२धनुर्वेद) अर्थात् जिसमें शस्त्र अस्त्र विद्या के विधानयुक्त जोकि अंगिरा भरद्वाजादि कृत संहिता हैं जिनमें राज विद्या सिद्ध होती है परंतु वे ग्रंथ प्रायः लुप्त से होगए हैं। जो पुरुषार्थ से इसको सिद्ध किया चाहे तो वेदादि विद्या पुस्तकों से साक्षात् कर सकता है॥

(३ गांधर्ववेद) जोकि सामगान और नारदसंहिता आदि गान विद्या के ग्रन्थ हैं (४ अर्थवेद) अर्थात् शिल्पशास्त्र जिसके प्रतिपादन में विश्वकर्मा त्वष्टा देवज्ञ और मयकृत संहिता रचीगई हैं येचारों (उपवेद) कहाते हैं॥

इसी प्रकार पहिला पाणिन्यादि मुनिकृत ग्रन्थ (शिक्षा) और दूसरा मन्वादिकृत मानवकल्पसूत्रादि आश्वलायनादिकृत श्रौतसूत्रादि (कल्प) और तीसरा पाणिनि मुनिकृत अष्टाध्यायी धातुपाठ गणपाठ उणादिपाठ और पतंजलि मुनिकृत महाभाष्य पर्यंत (व्याकरण) तथा चौथा यास्क मुनिकृत निरुक्त और निघंटु (निरुक्त) और पांचवां वसिष्ठमुनि आदिकृत सूर्यसिद्धांत आदि रेखा बीज गणितात्मक (ज्योतिष) और छठा पिंगलाचार्यकृत सूत्रभाष्य आदि (छंद) ये वेदों के छः अंग भी परतः प्रमाण के योग्य हैं और ऐसेही वेदों के छः उपांग अर्थात् जिनका नाम षट्शास्त्र है उनमेंसे एक व्यास मुनि आदिकृत भाष्य सहित जैमिनि मुनिकृत पूर्वमीमांसा जिसमें कर्मकाण्ड का विधान और धर्म धर्मी दो पदार्थों से सब पदार्थों की व्याख्या की है दूसरा वैशेषिक शास्त्र जोकि कणाद मुनिकृत सूत्र और गोतममुनिकृत प्रशस्तपाद भाष्यादि-

व्याख्या सहित है तीसरा न्यायशास्त्र जो कि गोतममुनि प्रणीत सूत्र और वात्स्यायन मुनिकृत भाष्य सहित है चौथा योगशास्त्र जो कि पतंजलि मुनिकृत सूत्र और व्यास मुनिकृत भाष्य सहित है पांचवां सांख्यशास्त्र जोकि कपिल मुनिकृत सूत्र और भागुरिमुनि कृत भाष्य सहित है और छठा वेदान्तशास्त्र जोकि ईश केन कठ प्रश्न मुण्डक माण्डूक्य तैत्तिरीय ऐतरेय छान्दोग्य और वृहदारण्यक ये दस उपनिषद तथा व्यास मुनिकृत सूत्र जोकि बौद्धायन इत्यादि व्याख्या सहित है ये छः वेदों के उपांग कहाते हैं इसका यह अभिप्राय है कि जो शाखा शाखान्तर व्याख्या सहित चार वेद चार उपवेद छः अंग और छः उपांग हैं ये सब मिल के चौदह विद्या के ग्रन्थ हैं॥

इन ग्रन्थों का तो पूर्वोक्त प्रकार से स्वतः परतः प्रमाण करना सुनना और पढ़ना सबको उचित है इनसे भिन्नों का नहीं क्योंकि जितने ग्रन्थ पक्षपाती क्षुद्र बुद्धि कम विद्या वाले अधर्मात्मा असत्य वादियों के कहे वेदार्थ से विरुद्ध और युक्ति प्रमाण रहित हैं उनको स्वीकार करना योग्य नहीं आगे उनमें से मुख्य२ मिथ्या ग्रन्थों के नाम भी लिखते हैं जैसे रुद्रयामल आदि तंत्र ग्रन्थ ब्रह्मवैवर्त श्रीमत्भागवत आदि पुराण। सूर्यगाथा आदि उपपुराण। मनुस्मृति के प्रक्षिप्त श्लोक और उससे पृथक् सब स्मृति ग्रन्थ। व्याकरण विरुद्ध सारस्वत चंद्रिका कौमद्यादि ग्रन्थ। धर्मशास्त्र विरुद्ध निर्णय सिन्धु आदि ग्रन्थ। तथा वैशेषिक न्यायशास्त्र विरुद्ध तर्कसंग्रह मुक्तावल्यादि ग्रन्थ तथा हठ प्रदीपिका आदि ग्रन्थ जोकि योग शास्त्र से विरुद्ध हैं। तथा सांख्य शास्त्र विरुद्ध सांख्यतत्त्व कौमुदी आदि ग्रन्थ वेदान्त

शास्त्र विरुद्ध वेदान्तसार पंचदशी योगवासिष्ठादि ग्रन्थ। तथा ज्योतिषशास्त्र से विरुद्ध मुहूर्तचिन्तामण्यादि मुहूर्तजन्मपत्रफलादेश विधायक पुस्तक। ऐसेही श्रौत सूत्रादि विरुद्ध त्रिकुंडिका स्नान विधायकादि सूत्र। तथा मार्गशीर्ष एकादश्यादि व्रत काश्यादि स्थल पुष्कर गंगादि जल यात्रा, माहात्म्यविधायक सब पुस्तक तथा दर्शन नामस्मरण जड़मूर्तिपूजा करने से मुक्ति विधायक ग्रन्थ। इसी प्रकार पाप निवारण विधायक, और ईश्वर के अवतार वा पुत्र अथवा दूतोत्पादक, वेद विरुद्ध शैव शाक्त गाणपत वैष्णवादि मत के ग्रन्थ, तथा नास्तिक मत के पुस्तक और उनके उपदेश ये सब वेद युक्ति प्रमाण और परीक्षा से विरुद्ध ग्रन्थ हैं। इसलिये सब मनुष्यों को उक्त अशुद्ध ग्रन्थ त्याग कर देने के योग्य हैं॥

कदाचित् इन ग्रन्थों के विषय में कोई ऐसा प्रश्न करे कि इन असत्य ग्रन्थों में भी जो २ सत्य बातें हैं उनका ग्रहण करना चाहिये तो इसका उत्तर यह है कि जैसे अमृत तुल्य अन्न में विष मिला हो तो उसको छोड़ देते हैं क्योंकि उनसे सत्य ग्रहण की आशा करने से सत्यार्थ प्रकाशक वेदादि ग्रन्थों का लोप हो जाता है इसलिये इन सत्य ग्रन्थों के प्रचार के अर्थ उन मिथ्या ग्रन्थों को छोड़ देना अवश्य चाहिये क्योंकि विना सत्य विद्या के ज्ञान कहां। विना ज्ञानके उन्नति कैसी और उन्नति के न होने से मनुष्य सदा दुःखसागर ही में डूबे रहते हैं॥ एष आदेशः

अथ शंकरदिग्विजयोदाहरणम्

तस्मादनन्त शयनं नामभगवदर्च्चा मूर्तिसन्निहित प्रदेशं संप्राप्तः तद्देव दर्शनं कृत्वा निजशिष्यै र्मास पर्य्यन्त मास तत्र भक्ता भागवताश्चैव वैष्णवाः पाञ्चरात्रिणः। वैखानसाः कर्म्महीनाः षड्विधा वैष्णवाः मताः॥ क्रिया ज्ञान विभेदेन एव द्वादशाभवन्। तानाह शङ्कराचार्य्यः किंवो लक्षण मुच्यतां॥ आदौ भक्ता इद मूचुः। स्वामिन् वासुदेवः परम पुरुषः सर्व्वदा जगद् वन परः सर्व्वज्ञः सर्व्वदेव कारणः स एव रामकृष्णाद्यवतार विभेदेन भूभारं निवर्त्तयितुं शिष्टावन मशिष्टसंहारं चकुर्व्वन् पुण्यस्थलेषु निजाविर्भूत मूर्ति प्रतिष्टामा चकार। मूढावयं किल तदीयपादपङ्कजसेवया विगत पापास्तल्लोक वासं प्रापस्याम इतिनिश्चय बुद्ध्या कौण्डिन्यमुनेः प्रसन्नो विष्णुरनन्तनाम्ना किलात्रैव वर्त्तते, तदीय चरण मेव दिन मनुदिनं कृत्वा तीर्थप्रसादादिभिस्तृप्ति मेत्य गोपुर प्राकारादिषु सम्मार्जन ओक्षणादिकं कुर्व्वन्तः सन्तोवसाम। अङ्कन रहिता नेतान स्मार्त्तंवंश समुद्भवान्। उर्द्ध्वपुण्ड्र परान् भक्तान नन्ताङ्घ्रिद्वये नयेत्॥ स्नानमूलमिदं ब्राह्म्य मित्याद्यान्हिक चोदिता॥ मित्यकर्म्मण्यप्रामाण्य मिवप्रतिफलति वः किमप्रामाण्यमिति। यतिवर्य्य मदीयाचारो द्विविधः ज्ञान क्रियाभेदात्। ज्ञानिनो वयं विष्णु शर्म्मादयः परे कर्म्मठाः ब्रह्मगुप्तादयः श्रीमदनन्तभक्ताः अत्रैव वर्त्तन्त इति विष्णु शर्म्म वचनं निशाम्य शङ्कराचार्य्यस्त मपृच्छत् भवत् प्रमुखा ज्ञानिनः किल ज्ञानस्य किं वा लक्षणं तेन फलमपि किमित्युक्ते विष्णु शर्म्माह श्रीमदनन्त भगवत्पाद कमल मेव शरण मिति तूष्णी मवस्थितिरेव

ज्ञानं तदनुज्ञां विना त्वया चल समपि न भवतीति, तमाचार्यो ऽ ब्रवीत् मूढ विष्णु शर्म्मन् ।
" जन्मना जायते शूद्रः कर्म्मणा जायते द्विजः । " इत्या श्रम धर्म्मानुकूलं कर्म सर्व्वेषा मलंघ्यं तस्यैव तपः शब्द वाच्यत्वात् सन्यासि नामपि विहितं कर्म कर्त्तव्य मेव " कर्म्म हीने तु पातित्यमिति दर्शनात् " अहरहः सन्ध्यामुपासीत. उदिते सूर्य्ये प्रातर्जु होति, उद्यन्त मस्तं यान्त मादित्य मभिध्यायन् कुर्व्वन् ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमश्नु ते ऽ सावादित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मैव सद्ब्रह्माप्येति य एवं वेद ॥ इति च. सर्वे वेदा ब्राह्मणोचितं नित्य कर्म्म प्रशंसन्ति श्रौतस्मार्तादि कं यतः कर्म्मार्थ मेव श्रुति प्रवृत्तिः अतः सर्व्वैराश्रमिभिः वेदोक्तं कर्म्म अवश्यं कर्तव्यमेव । जीवन् कर्म्म परित्यागंयः करोतिनरा धमः । समूढो नरकं याति यावदाहूतसंप्लवं ॥ इति मनुवचनदर्शना त् देहार्चन स्नान भिक्षा चार्य्यादिकं कर्म्म यतीनाञ्च विहितमेव । शौ चा चमन स्नान सन्ध्यावन्दन जपाग्नि होत्र स्वाध्याय माध्यान्हिक देवातिथि पूजादिकं कर्मवानप्रस्थ गृहस्थ योस्तुल्य मेव तनस्य स्येयान् किलविशेषः तपोनानशनात्परमिति, ब्रह्मचारिणस्तु स्ना न सन्ध्या स्वाध्याये श्वर पूजागुरुकुल वासादिकं कर्म उचितं अतः स्वकर्म्म भ्रष्टानां भवतां ब्राह्मण्य हानि प्रसक्तिः स्यात् । किञ्च ज्ञा नमार्ग वर्तिनो वयमिति भवद्भि रुक्तं तत्राप्यधिकारो नास्त्ये वयद्य- स्ति तर्हि सद सल्लक्षणं ब्रह्मनाडी विभेदनं चित्परामर्शभावंषट् च- क्रमार्गंच दर्शयध्वं । एव माचार्य्यै रुक्ते विष्णु शर्म्मादयः इद मूचुः यतिनाथ अथकर्म्म ज्ञानं चोभय मेवास्माभिर्व्वि दितं त्रिकाल मनन्त देव पाद दर्शनं विना नकिञ्चिदिति, तद्वचः श्रुत्वा सम्भूता-

अथ श्रीशङ्कराचार्य्य इदमाह, विष्णुशर्म्मन् कतिपयैरद्यैरेवं स्थितिः सत्याह, मत्सदृशः सप्तमः पुरुषः तत्पिता किञ्चित्कर्मशील इति वार्त्ता मया श्रुतं। तन्निशम्य कोपाद्धर्यो भयात्मक मनसः सकल गुरुराह। हे आत्य सकल धर्म्म बहिष्कृत दुष्कृते लात् मे अपि अस्माकं दोषो भवेदिति विष्णु शर्म्मणि मेवादील् सतु कृपा परितमनसः सगणः समस्तापराधं क्षमस्वेति दण्डवत्प्रणम्य सम्पुटित कर द्वयः स्थाणु वत्समातिष्ठत्। विष्णु शर्म्माभिक्षुमेनं पारगत तं दुर्मार्गाद्र क्षमो वयमिति धिया सगणस्य तस्य प्राय श्चित्तं कारणे हस्तामलकादीन्निज शिष्याना ज्ञापया मासते विष्णुशर्म्म प्रभृ तयाना स्नान ब्रह्मदण्ड समर्पण मुण्डन सहस्र घट स्नान प्राजापत्य कृच्छ्र प्राच्योदी च्याङ्ग गोदान भूप्रागत गोगर्भजन नाम करण चौलोप नयन विवाह प्रभृतवक र्म्माणि धर्म्मा रिति समाचरन्त। विष्णु शर्म्मादयो विधिविहित कृ कृत्या नुष्ठानं तन्त्रं श्रीपरमगुरु मिदमूचुः। स्वामिन् भवत् कृपया तान्याराय सिद्धि रासीत्। मोक्ष सिद्धिः केनोपायेन नो भविष्यतीति जल्पन्त विष्णु शर्म्माण मिदम ब्रवीत् कुरुता मेव वैदिकी क्रिया मिति॥

अथ भाषार्थ

जब श्रीमान् स्वामी शंकराचार्यजी महाराज घूमते अनन्तशयन नाम स्थानमें पहुंचे तो वहां बारह प्रकार के वैष्णव लोग जिनमें से छः क्रियाभिमानी और उतने ही ज्ञानाभिमानी थे देखे गये उनसे स्वामीजीने कहा कि तुम अपना धर्म लक्षण कहो बोले कि स्वामीजी महाराज जो सर्वज्ञ जगत् पालक परमेश्वर राम कृष्ण

आदि अवतार लेकर धरती का भार उतारता है वह कौंडिन्य मु-
नि की तपस्यासे होकर उनकी इच्छा नुसार इस पुण्य क्षेत्र में
अनन्त नाम की पाषाण मूर्ति बनकर वास करता है हम लोग
प्रति दिन उसके चरणों में प्रेम रख उसका चरणोदक और प्रसा-
द पाय अति तृप्त हो उसके मन्दिर की झार पोंछ करके पापरहित
होते रहते हैं यही हमारा परम धर्म कर्म है स्वामीजी ने कहा कि
तुम लोग ब्राह्मण हो परन्तु आचार तुम्हारा प्रमाणहीन अर्थात्
वेद विरुद्ध है वे बोले कि नहीं हम विष्णु शर्मादिक ज्ञानी हैं ह-
मको आचार की आवश्यकता नहीं आचारी लोग ब्रह्मगुप्तादि-
क हमसे जुदे यहीं बसते हैं यह सुन स्वामीजी बोले कि तुम ज्ञानी
लोगों में जो बड़ा विद्वान् हो वह कहे कि ज्ञान का क्या लक्षण है
तब विष्णु शर्माजी बोले कि ज्ञान हमारा यह है कि हे अनन्त
भगवन् हम आपके चरणों में शरण हैं आप की बिना आज्ञा कु
छ भी नहीं होता तू हमको तार ऐसा बारंबार कह कर चुप र-
हना यही हमारे परम ज्ञान का लक्षण है तब स्वामीजी बोले
कि अरे मूढ विष्णु शर्मा कर्म से द्विजत्व होता है पश्चात् सबको
वर्णाश्रम धर्म मुख्य है कर्म हीनों को शूद्रत्व वेदों में लिखा है
ब्राह्मण लोग उदय और अस्तकाल के समय प्रति दिन संध्या वं-
दन करके आहुति देवें इस प्रकार ब्राह्मणों को श्रुति और स्मृ-
ति के अनुसार वर्णाश्रम धर्म करना मुख्य है जो लोग कर्म
छोड़ते हैं वे मूढ नराधम कल्पभर नरक में पड़ते हैं ऐसा
मनुजी का वचन है इसलिये कभी किसी वर्ण और आश्रम
वाले को कर्म का त्याग नहीं करना चाहिये दान यज्ञ और

ग्रहस्थों की शौच आचमन स्नान संध्यावंदन जप अग्निहोत्र वेदाध्ययन माध्यान्हिक देवअतिथिपूजा और ब्रह्मचर्य को स्नान संध्या वेदाध्ययन ईश्वर पूजा गुरुकुल में वास इसी प्रकार सन्यासियों कोभी देवार्चन स्नान भिक्षादिक कर्म करना अवश्य है इसमे तुम लोग कर्म त्याग करने के कारण ब्राह्मणत्वसे पतित होगये ज्ञानभी तुमको कुछ नहीं है वृथा हम ज्ञानी हैं ऐसा तुमको अभिमान है यदि तुम ज्ञानी हो तो हमको सत्असत्का लक्षण ब्रह्म नाड़ी भेद चित्परामर्षी षट् चक्र मार्गका विस्तार प्रमाण सहित सुनाओ तब विष्णुशर्मा जी बोले कि यतिनाथ हम अपना ज्ञान और कर्म प्रथमही सुना चुके कि त्रिकाल अनन्त देवका दर्शन करने के सिवाय संसार में कुछ नहीं जानता। तब हंस कर स्वामीजी बोले कि कितनी बरसों से तुम्हारा यह हाल है बोले कि स्वामीजी मेरी सात पीढ़ी से यही रीति चली आती है हां हमारा आठ वां कोई पुरषा सुना है कि कुछ आपने कहे से कर्म करता था इतना सुनते-ही स्वामीजी क्रोध में भर आये और आश्चर्य में तो थे ही बोले कि अरे संस्कार हीन चांडाल शीघ्र मेरे सन्मुख से हट जा तेरे संसर्ग से हमभी दोषी होंगे यह सुन जितने वे विष्णुशर्म्मादिक वैष्णव थे सब अति दुःखित होकु ड़ी के सदृश स्वामीजी के चरणों में गिर पड़े और कहने लगे कि हे स्वामिन् हम लोगों का अपराध क्षमा कीजिये फिर उठ हाथ जोड़ अति दीन मुख मलीन नेत्रों से जल बहाते सूखे ठुंठ से खड़े हो रहे बहुतेरा हटाये जाते थे पर नहीं हटते थे बार बार क्षमा कीजिये की धुनि भर रहे थे तब स्वामीजी को करुणा उपज आई अपने शिष्य हस्तामलकादिकों से

बोले कि अच्छा तुम इन सबको यहांसे लेजाकर अच्छे प्रकार प्रा-
यश्चित्तदो उसी समय वे उनको ले गये और प्रथम उनको सचैल स्ना
न कराकर उनसे ब्रह्म दंड ले फिर उनकी मूंछ मूंड़ मुड़वाकर एक २
को हजार २ घोड़ों से न्हिलाय उनसे सौ सौ प्राजा पत्य कृ कृच्छ्र चांद्राय-
णादि व्रत और प्राच्याङ्ग उदीच्याङ्ग गोदान भूप्रायन गोगर्भजननजा-
तकर्म नाम करण चौल उपनयन विवाह आदि संस्कार यथाविधि
कराकर परम गुरू के सन्मुख एक दिन लाये आतेही वे सब विष्णु
शर्मादिक वैष्णव आचार्यजी महाराजके चरणों में गिर पड़े और
हाथ जोड़ कर बोले कि महाराज आपकी कृपा से हमको ब्राह्मणक-
र्म का अधिकार तो हुआ अब कृपा करके ऐसा उपदेश कीजिये जिस
से हमको मुक्ति प्राप्त हो तब परम कृपालु श्रीमान् स्वामीशंकरा
चार्यजी महाराज उनका प्रेमभाव देख प्रसन्न हुए और उनको प्र-
त्यह त्रिकाल वेदोक्त नित्य नैमित्तिक वर्णाश्रम के कर्म करते
रहने का उपदेश किया ॥ इति शंकर दिग्विजये वैष्णव
मत निबर्हणम्

इस प्रकार श्रीमान् शंकरा चार्यजी महाराज ने नीचे लिखे ५६ म-
तों का खण्डन करके वैदिक मत पर चलने का उपदेश किया है ॥
(१) भागवत मत (२) षड् विध वैष्णव मत (३) पंचरात्रागम मत
(४) वैखानस मत (५) कर्महीन वैष्णव मत (६) हैरण्य गर्भ मत
(७) अग्निवादि मत (८) सौर मत (९) महागणपति मत (१०)
हरिद्रा गण पति मत (११) नवनीत गणपति मत (१२)
उच्छिष्ट गणपति मत (१३) स्वर्ण संतान गणपति मत (१४) शक्ति

मत(१५) महालक्ष्मी मत (१६) वाग्देवता मत (१७) वामाचार मत (१८) कापालिक मत (१९) कापालिकैकदेशि मत (२०) चार्वाक मत (२१) सौगत मत (२२) जैन मत (२३) बौद्ध मत (२४) मल्लारि मत (२५) विश्वकसेन मत (२६) मन्मथ मत (२७) कुवेर मत (२८) इंद्र मत (२९) यम मत (३०) वरुण मत (३१) शून्य मत (३२) लोक मत (३३) गुण मत (३४) साङ्ख्य मत (३५) योग मत (३६) पीलुवाद मत (३७) कर्म्म मत (३८) चंद्र मत (३९) राहु मत (४०) क्षपणक मत (४१) पितृ मत (४२) शेष मत (४३) सिद्ध मत (४४) गंधर्व मत (४५) भूत वैताल मत (४६) गरुड़ मत

आर्यगण यद्यपि यह शांकर विजय पोपों नेही बनाया है तथापि खोजने वाले बहुत सा सत्य निकाल सक्ते हैं

अब उन आधुनिक मतों के नाम सुनिये जिनका खंडन श्रीमान् व्याकरण विद्या निधान परमाचार्य स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज ने किया और कर रहे हैं और बराबर करते रहेंगे॥

(१) श्री वैष्णव वा रामानुजी (२) वल्लभाचारी वा गोकुलिया गुसाईं वा गोकुलस्थी (३) सनकादिकी वा माध्व वा मध्वाचारी वा निंवार्की (४) रामानन्दी वा रामावत् (५) राधावल्लभी वा गौड़ गुसाईं (६) नित्यानन्दी वा चैतन्यी वा बंगाली वैष्णव (७) सधनापन्थी (८) कबीरपन्थी (९) नानिकपन्थी (१०) दादूपन्थी (११) खाकी (१२) वैरागी (१३) नागा (१४) मूलकदासी

(१५) रैदासी (१६) चरणदासी (१७) सैनाई (१८) मीरांबाई (१९) सखी भाव (२०) माधवी (२१) हरिश्चन्द्री (२२) योगी (२३) जंगम (२४) ऊर्ध्वबाहु (२५) आकाशमुखी (२६) नाखी (२७) [illegible] (२८) [illegible] (२९) सूखड़ (३०) कड़ालिंगी (३१) शाक्ति [illegible] (३२) [illegible] शाक्ताचारी वा दक्षिणी (३३) वामी वा वामाचारी वा वाममार्गी वा कौल आदि (३४) कानचेली (३५) करारी (३६) अघोरी (३७) गाणपत्य (३८) सौर (३९) वा बालाली (४०) आ- गानाश्री (४१) साधु (४२) सत्तनामी (४३) शिवनारायणी (४४) शून्यवादी (४५) जैनी (४६) दिगम्बर (४७) श्वेताम्बर (४८) ढूंढिये (४९) बौद्ध (५०) दोनों ब्रह्मसमाजी

आर्यगण। ये ऊपर लिखे सब मत भरतखण्ड वासियों में प्रचरित हैं। कहो कैसे सत्यानाश न हो उस देश का, जहां इतने मिथ्या मत प्रचरित हों। कहावत है "एक घर दो मना। वह घर कैसे बना, जब एक ही घर के बनाव में आफ़त हो देश के बनाव की क्या आशा। फिर इतने ही यहां मत हैं ऐसा भी निश्चय न करलो किन्तु इनमें से बहुत से शाखा पल्लव भी रखते हैं। अंत में जो दो प्रकार के ब्रह्म समाज लिखे हैं उन बेचारों की तो अभी छटी भी नहीं पुजी। ये दोनों मत बंगालियों ने चलाये हैं-इनमें से एक तो वेद को बिल्कुल ही नहीं मानता, दूसरा सन्दिग्ध है सम्बत् १९२८ में स्वामी जी महाराज ने जब कि कलकत्ता में थे ब्रह्म समाज के अधिष्ठाता केशवचंद्र सेनजी आदि का भी सन्देह भली भांति दूर कर दिया था। जिन पुरुषों की तृप्ति इतने मतों से नहीं होती वे बहु धरोगत

यावनी और ईसाई मतारव्य कुंडों में भी जाडूबते थे धन्य श्रीमान जिन्हों ने ये सब अनर्थ रोके। परमात्मा उनको दीर्घायु करे॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्रजकाचार्य्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके सामाजिकचरित्रविवर्णनं नाम पंचमो मयूखः ॥

अथ षष्ठो मयूखः

आर्यगण पंचम मयूख द्वारा आर्य समाजों का बहुत सा वृत्तान्त वर्णन हो चुका है उन्हीं का अब कुछ प्रबन्ध सुनिये ॥

प्रत्येक समाज में मुख्य पांच पंच अर्थात् अध्यक्ष होते हैं (७) १ उनमें से पहिला सभापति दूसरा नायबसभापति तीसरा मंत्री चौथा पुस्तकाध्यक्ष पांचवा कोषाध्यक्ष कहाते हैं और ये सब प्रत्यह-

---

१ (७) ये पांचो पंच समाज का सारा बोझ उठाने वाले होते हैं इसलिये इन पदों पर बहुत योग्य पुरुषों का नियत होना अवश्य है अन्यथा बना बनाया समाज उड़ जाता है ऐसा अनुभव है यदि भूल से कहीं ऐसे स्वार्थ तत्पर लोग किसी राज्य समाज में नियत होंगा होवें तो उनको अनुभव आने पर शीघ्र वहां से ऐसा हटादे जैसा कि श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने बम्बई समाज से हरिश्चन्द्र चिन्तामणि और अपने वैदिक यंत्रालय से सिंहजी को विज्ञापन देकर हटा दिया था ईश्वर ये अब वहां दोनों ठोर कैसा धर्मराज्य है अधिकारियों को भी उचित है कि स्वार्थ तत्परता से जो असत्कीर्ति होती है उससे सदा बचें- ठीक अपने नियमों पर चलें सदा धरती की ओर निहारें न यह कि पदवी पाकर अधिक आस्मान् को मुंह उठ जाय। इस ढंग से चाहे कुछ दिन राज काज ढिकल भी जाय परंतु समाज काज कदापि न सधेगा। समाजों में भरती होने की रीति यह है कि जब कोई मनुष्य उसमें दाखिल हो तो उसे उचित है कि अपने पेशे रुतबे खान्दान और लियाक़त वगैरः का ख्याल करने छोड़ दे और अपने को उन सब लोगों के समान समझें जैसे कि और लोग जलसे में शामिल हों क्योंकि छोड़ देने को कहे हुए ख्यालों के बने रहने से आपस की वह रीति प्रीत और कर्त्तव्यता जाती रहती है जिसका सदैव कायम रखना निहायत ज़रूर है। हर अधिकारी मनुष्य को अपने समाज का वैसा प्यारा बन जाना चाहिये जैसा कि सुशिक्षित सेवक कि जिसको बैठने उठने बिलम्ब नहीं लगता न यह कि जग… …कर बैठ गया

अपना२ काम अपनी व्यवस्था पुस्तक के अनुसार करते हैं और अति र-
विवार को समाज नियमित स्थान में नियमित समय पर होता है जित-
ने आर्य और सभासद् लोग दर्ज रजिस्टर होते हैं वे सब वहां एकत्र हो
कर परमेश्वर की स्तुति और प्रार्थना के पीछे देशोन्नति कारक

सो बैठही गया अब कोई आओ कोई जाओ उसे कुछ परवा नहीं। हरएक समाजी हर प्रा-
ख्श के खुश करने की कोशिश करे - केवल उन्हीं लोगों से समाज में बैठ बात करना उचित
नहीं कि जो तुम्हें पसंद रखते हों वा जिनसे तुम्हारा दिल मुहब्बत करता हो ऐसे लोग तुमको
फिर भी मिल सकते हैं परंतु पैठ पैठ ही के दिन लगती है। जो लोग समाज में तुमसे दूर बैठे हों वा
कुछ खेद में हों अथवा जिनसे और लोग बातें न करते हों उनको विशेष कर अपनी बातों में
लगाओ इसके साथ हर मनुष्य की नवी अलका सा खूब लिहाज़ रक्खो अर्थात् उससे कभी को-
ई ऐसी बात न छेड़ो जिससे उसे वा दूसरों को रंज पहुंचे किसी की दिल्लगी वा गंवारों की तरह ए-
क साथ ज़ोर से हंस देना भी उचित नहीं। जिसकी प्रथम मुलाक़ात हो उसके साथ तो बहुत
ही इख़लाक़ के साथ पेश आओ फिर देखो कैसा काम बनता और सुख होता है इस प्रकार
बहुत से विषय समाज वालों को सोचने बिचारने और करने को हैं उन सब पर जिसका पूर्ण
ध्यान होता है वही सामाजिक कामों को यथावस्थित चला सक्ता है अन्यथा समाज नहीं
बहुत उपाल है (अविवेक मति र्नृपतिर्मन्त्री गुणवत्सु वक्रितग्रीवः॥ यत्र खलाश्च प्रबला
तत्र कथं सज्जनावसरः)१) जहां का राजा वा सभापति कोन मनुष्य कैसा है ऐसा विवेक नहीं
रखता और मंत्री गुणवानों की ओर से मुंह फेर फिसादी वा खिलाड़ियों की तरफ़ मुखाति-
ब रहता है और जितने कर्मचारी वहां के हैं वे भी सब दुराचारी ही होने के कारण उस रा-
ज वा समाज में भले और बुद्धिमान् कहाते हैं वहां आने जाने में सत्पुरुष झिझकते हैं इसी
लिये कहा जाता है कि भाई आर्य्यगण ऐसे बनो जिस्में तुम्हारे पास आने को स-
ज्जन जाते भी चाहे॥

व्याख्यान देते और सुनते हैं और जिनकी इच्छा होती है वेभी वहां जा
ते हैं अर्थात् किसी को उस दिन वहां रोक टोक नहीं होती सारांश
वह दिन परम आनन्द का होता है सब लोग बड़ी रीति से परस्पर मिल
ते और सात दिन के भीतर की सब नूतन खबरें और समाचार पत्रों को
कहते सुनते और सुनाते हैं इन समाजों में जितने लिखे हुए पंच और
सभासद होते हैं वे सब अपने समाज का जिस प्रकार वार्षिक खर्च
होना अवश्य जानते हैं उतना रुपया वर्ष के प्रारंभ में एकत्र कर देते
हैं और फिर जो कोई विशेष खर्च आ पड़ता है तो उसके लिये सब लो
ग चाहे जिस दिन एकत्र होकर उतना रुपया जमा कर लेते हैं जित
नकी कि आवश्यकता उस समय होती है। इस प्रकार से हुई आमद
नी नामवार समाज कोष में लिख कर भरी जाती है फिर उसका खर्च
अंतरंग सभा की मंजूरी से होता है। अंतरंग सभा की व्यवस्था इस प्र
कार है कि जिस समाज में जितने सभासद होते हैं उन में से सब की प्रस
न्नतानुसार विशेष धन देने वाले सभ्य और विद्वान् लोग सैकड़ा पीछे
तीन के हिसाब से चुन लिये जाते हैं इसमें उपरोक्त सभापति उपस
भापति और मंत्री ये तीन पुरुष मिलाकर जो एक कमेटी बनाई जा
ती है उसको अंतरंग सभा कहते हैं। यह सभा प्रति मास एक वा दो
बार नियमानुसार बैठती है और आवश्यकता पड़े पर बीच में भी
तुरन्त एकत्र हो जाती है। इसी के विचार और स्वीकार से मासिक वा
र्षिक और नैमित्तिक खर्च और सब काम काज तथा नौकरों की मौकू
फी बहाली आदि हुआ करती है जब दो तिहाई सभासद (मेम्बर) ज
मा हो जाते हैं तब इसका काम छिड़ता है और बहु पक्षानुसार काम
किया जाता है अन्यथा कदापि नहीं॥

जहां उक्त सभा अपना काम यथोचित नहीं कर सकती वहां इसी की सम्मति के अनुसार उसी सभा के सभासदों में से पांच या ७ सभ्य विद्वानों की एक जुदी सभा बनाली जाती है उसको मीमांसक सभा और उसके पंचों को मीमांसक के सभासद कहते हैं बहुत से सूक्ष्म और गुप्त विचार तथैव अंतरंग सभा में ठीक नहीं हुए कामों की मीमांसा (न्याय) इस सभा में होकर तीन पुरुषों की सम्मति से बहुभाग काम लौटता पलटता और प्रचारित होता है इन दोनों सभाओं में कोई अन्य पुरुष नहीं आने पाता, समाज का एक दफ्तर भी होता है उसमें आवश्यकता के अनुसार लेखक और परिचारक होते हैं इस दफ्तर में समाज का सब हिसाब और कागज़ रहता है- बाहर के समाजों और अन्य २ स्थानों से यहां पत्रादिक आते और उनके उत्तर प्रत्युत्तर लिखे जाते हैं जो काम श्रीमान स्वामीजी महाराज से पूछ कर करना होता है सो भी लिखा पढ़ी उनके समीप भेजी जाती है अर्थात् ये सब समाज प्रशंसित महाराज के आधीन रहते हैं और बहुत कुछ श्रीमान् के देशोपकारक कामों में ये लोग तन मन धन से सहायता भी करते रहते हैं ॥

जब श्रीमान् एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं तब इन सब के नाम तार वा पत्र भेज देते हैं और मासिक वेदभाष्य के द्वारा तथा अखबारों में भी खबर छप जाती है जहां पहुंचते हैं वहां के समाजी वा राजा बाबू अथवा रईस लोग गाड़ी हाथी फूल और उत्सवों के साथ उनकी अगवानी करके पहिले से तैयार कराए हुए दिव्य स्थान पर पहुंचाते हैं और वहां पहुंचते ही सारे शहर में विज्ञापन (इश्तिहार) लगवा दिये हैं कि फ़लां दिन इतने समय से इतने समय तक फ़लां स्था

न मे इतने दिन तक श्रीमान स्वामीजी महाराज व्याख्यान देवेंगे वहां सु-
नने वालों को उचित समय पर एकत्र हो जाना चाहिये। बहुधा एक
वा डेढ़ मास कहीं इससे अधिक वा न्यून काल तक उस स्थान में
काम के अनुसार निवास कर सबको आत्मोपकारक तथा दे-
शोन्नति कारक वेदानुकूल व्याख्यान सुनाते और एकता उत्पाद
क आर्य समाज स्थापित करने का भी उपदेश करते हैं॥

जहां कहीं सच्चे सत पुरुष होते हैं वहां तुरन्त वा कुछ दिन पीछे स-
माज स्थापित हो जाते हैं अब तक जितने समाज बैठ चुके हैं यदि
वे सब के सब उत्तम दशा में होते तो देश को बहुत सा लाभ हो रहता प-
रन्तु परम शोक की बात है कि हमारे देश भाई जैसी कुछ आरंभ
शूरता दिखाते हैं उसका अनांश क्या सहस्त्रांश भी पीछे को शेष नहीं
रखते। कोई२ समाजी तो बहुत ही हीन दशा में पड़ गये हैं। प्रथम
जिन समाजों में अतीव होता था घमसान- तहां बराबर देखी जाती
है अब सुनसान। जिन्ने बहुतों का चित्त फाड़ जुदा किया- उन्ने क्या दु-
नियां का भला किया। नामवरी को सभी चाहते परन्तु वह कैसे
होनी है सो नहीं जानते। आर्य समाजी कहावें- परन्तु घृणित काम
करने में न डरावें। दिवाली दसहरा को छोड़ो बतावें- फिर क्यों स्वयं
दीवाने हो उन दिनों हज़ारों ही के दाव लगावें। किसी जीव को ना
सताना कदापि ऐसा उपदेश करें- पर स्वयं शिकारी बन-बन में फिरें।
विवाहादि कामों में मितव्ययी होने के व्याख्यान छपवावें- परंतु स्व
यं वैसे प्रसंगों पर उसे भूल हज़ारों रुपया रांड़ भांड़ और आतिशबाज़ी
में गमावें। यदि पूछे, कि आपने इस खुशी का कितना रुपया समाज
कोष में स्थापित किया तो टका नहीं- भला आप को जो ज्ञात

कर्म नामकरणादि नामक संस्कार इस समय करना बहुत आवश्यक थे सोभी किये तो साफ़ जवाब कि वह भी नहीं। ऐक्यताका डंका बजाकर अनैक्यता के अनेक भांति बीजारोपण करें और करावें- तथापि क्या ऐसे ऐसे लोग आर्य्यों के ताजही कहावें। संस्कृतकी उन्नति में खर्च एक गुना तो यावनी और गोरंडी के लिये दस गुना। और जो कहीं पाय जावें बाहिर वालों की सहायता तो तुरंत कर दें उसको सौ गुना। हो गई है मूर्ति पूजा में अनरुचि- फिर क्यों नहीं होती है संध्या बंदनादि कामों में अभिरुचि। सामाजिक कामों में परम अज्ञ लेखकों का जो करते हैं विश्वास- उनसे कभी नहीं हो सक्ती देशोन्नति की आस। यदि वैसे कामों में आपको है सदा अनवकाश- फिर चंग चौसर और शतरंज का कैसे होता है अहर्निश अवकाश। और भी उनके ऐसेही अकथनीय अनेक कर्म- कि जिनके लिखने में आती है लेखनी को बहुत शर्म। सारांश उद्देश्य कुछ। और कथ कुछ कहो कौन ऐसों की सुने और क्योंकर ... मान ... हते हैं सो ... ने। यह बुराई केवल स्वार्थ तत्परता(८) करती है उसे छोड़ो और भले बनो॥

(८) यह बड़ा भारी दोष है विशेष कर इस देश की बड़ी ... में अधिक देखा जाता है फूट और विरोध की ठीक जड़ है इसका अनुभाव सत्य धर्म के विरुद्ध है जो लोग इन्द्रियों का दमन और परमात्मा की पहिचान तथा उसकी पूरी भक्ति रखने से उन्हीं में यह नहीं होती थी कि हमारे सब देश पर इसका ... हैजो नर सबकुछ ... अपने ... तुच्छ जानते हैं उन्हीं से यह हार मानती है इसके बहुत करके पांच स्वरूप हैं १ द्रव्य २ सुख ३ दुःख ४ बिना निर्मल चित्त के सज्जन कहलाना ५ अपनी तारीफ़ सुनना सो विरले हो ऐसे हैं जिनको ये नहीं भाते अर्थात इन पांचों में से कोई न कोई एक बात उसके चित्त में ज़रूरही होती है जहां उ-

अढ्योस्मि धनवास्मि कोन्योस्मिसदृशो मम

अर्थात् मैं बहुत बड़ा आदमी तथा धनवान् और चलाव वाला हूं वह कौन ऐसा है जो मेरी बराबरी करेगा वा कुछ कहेगा. मेरा जी चाहेगा वही मैं करूंगा ऐसा विचार कभी किसी आर्य समाजी को चित्त में न लाना चाहिये खासकर तब जब कि कुछ बनाना चाहता है ॥

देखो विद्वानों का क्या कौल है (विद्या विवादाय धनं मदाय शक्तिः परेषां परिपीड़नाय। खलस्य साधोर्विपरीत मेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय १॥) अर्थ यह है कि संसार में सर्वोत्तम पदार्थ केवल विद्या है वह सत्पुरुष में होने से उसके ज्ञान को बढ़ाती है जिससे संसार के बहुत से लोगों को सुख होता है। और यदि वह दुर्जन में जापड़ती है तो उससे विरोध और उन्मादही के कामों को कराती है जिससे बहुत से लोगों का बिगाड़ होता है।

स्के बस में होकर किसी ने खेंचा तानी किसी पक्ष की की और सब बने बनाये काम बिगड़े॥ जिस्को द्रव्य का लालच है वह ऐसी राय देता और पसन्द करता है जिसमें वह मिले या घर में बचे जिसको सुख की चाह है वह आलसी उस राय को [illegible] करता है जिस में अपने ऊपर किसी काम का बोझ न आपड़े वा उस काम के न बनने से कहीं कलई न खुल जाय तीसरा रूप दुःख का ऐसा है कि कितने ही आदमी थोड़े दुःख को इतना बढ़ाकर दिखाते हैं कि जिस्से उस्के यार दोस्त आदि जो वह चाहता है उसी चाल पर चलैं चौथा रूप इस रीति का है कि संसार में सिवाय मेरे और कोई बुद्धिवान् वा प्रतिष्ठित वा विद्वान् न कहावे और जो इस प्रकार के हों उनको धब्बा लग जाय पांचवां रूप ऐसा है कि आप में दरअसल कोई भी गुण स्तुति योग्य नहीं

उसीप्रकार दूसरा पदार्थ धन है वह सत्पुरुष के पास होता है तो उसके वितरण से अनेक पुरुषों और जीवों को लाभ पहुंचता है और भी उससे बहुत से अनुपम उपकारक कार्य सिद्ध होते हैं तात्पर्य यह कि सज्जन धनी अपने धन को परमेश्वर की अमानत समझ कर उसी के कामों में लगाता है। परंतु यदि वही धन किसी दुष्टजन के पास होता है तो वह भाई बिरादरी और अड़ोसी पड़ोसी तथा नगर ग्राम और देशनिवासियों का विनाश ही करता है सारांश दुर्जन धनी बढ़२ कर कहता है कि मेरा एक से हज़ार वा लाख तक खर्च क्यों न पड़ जाय परंतु मैं उसको धूल ही में मिला छोड़ूंगा और सदा वैसा ही करता रहता है॥ तथा तीसरा पदार्थ शक्ति अर्थात् जिस्मानी ताक़त वा चलाव वा हुकूमत है यदि वह किसी सभ्य में हुई तो वह सबको दुःखों से छुड़ाता है और जो किसी खल में जा रही तो वह सबको अनेक प्रकार की पीड़ा में फांसता रहता है

सिद्धान्त यह है कि विद्या धन और शक्ति ये वास्तव्य में तीन पदार्थ हैं परंतु संग पाकर प्रत्येक से दो२ गुण प्रगट होते हैं एक से पदार्थ वाले के सहित संसार का यथावत् उपकार सिद्ध होता है। दूसरे से पदार्थ वाले के सहित संसार का अपकार अर्थात् विनाश होता है। उनमें से द्वितीय और तृतीय पदार्थों के दृष्टान्तों का बाहुल्य यहां लिखना कुछ आवश्यक नहीं क्योंकि सदैव सर्वत्र देखा ही जाता है कि धनवाले कैसे हमेशाह सत्यासत्य मुक़द्दमात लड़ाते रहते हैं और ताक़तवाले अर्थात् बदमाश वा जत्थावाले अथवा सब प्रकार के नीतिहीन राज्याधिकारी अथवा चुंगी आदि के मेम्बर लोग किस प्रकार तोड़२ कुर्सी हो

तथापि दूसरों के गुणों का फल अपने में अलंकार अपनी मिथ्या स्तुति औरों के मुख वा स्वमुख से कहकर प्रकाशित करते हैं॥

में ह्रो मिलायगा दे० इस कांधर ताप प्रजाको दुखित कर रहे हैं रहा दृष्टान्त विद्याका सो वह भी इन दिनों सूर्यवत प्रकाशित हो रहा है ॥

देखो एक तरफ़ श्रीमान् सकल गुण निधान स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज और उनके अनन्तर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रमणि * व कविराज हरिश्चन्द्रजी और पंड्या मोहन लालजी आदि विद्वानों और पूना बंबई लाहौर मेरठ आदि के उत्तम आर्य समाजियों और हिन्दीप्रदीप भारतमित्र तथा अवध अख़बार आदि के श्रेष्ठ सम्पादकों को कि कैसा जगत में निस्पृहता के साथ आनन्द बरसा रहे हैं ॥

और उसके विरुद्ध दूसरी तरफ़ देखो श्रीयुत स्वामी विशुद्धानन्दजी तदनंतर राजा शिवप्रसाद जी व राजपुराणिक चतुर्भुजजी और पंडित श्रीगोपालजी आदि पोपों और सब पोप समाजियें और मित्रबिलास कवि वचनसुधा और जामजमशेद आदि अख़बारोंके नष्ट सम्पादकों को किस प्रकार देश का नाश मार पेट भर रहे हैं श्रीमान् और आर्य्य समाजियों की मिथ्या निंदा करना तो मानों इन सब लोगों की ख़ास उपजीविका ही है ॥

इनसब में से पंडित श्रीगोपालजी तो बड़े ही विचित्र पुरुष हैं ये ज़िला मेरठ में कोई भूडबराल नाम ग्राम है वहां रहते हैं इनका गांव भी सब लोग वैसा ही समझें जैसा कि ज़िला मैन पु-

* परन्तु शोकका विषय यह है कि इन महाशयों ने पीछे से लोभ के वश होकर अपनी पद्धति और प्रतीति ख़राब करदी कि जिससे वे सर्वत्र अति निंद्य होगए यह सर्व प्रकार मुझको बदर्जे लाचारी तृतीय खंड के चतुर्थाध्याय में प्रकाशित करना अत्यावश्यक हुआ - परमेश्वर अब भी उनको सत्पथानुवर्त्ती करे ॥

री में भोगांव (९) महात्माजी ने सवा हाथ लंबी चौड़ी ५१८ पृष्ठ की एक पुस्तक बनाकर उसका नाम वेदार्थप्रकाश रक्खा है यह वास्तव्य में वेदार्थ प्रकाशक तो नहीं दीख पड़ती परंतु वेदार्थनाशक कहें तो यथार्थ होगी क्योंकि जो वेदों को नहीं जानते वे उसके अर्थ को क्योंकर प्रकाश कर सकते हैं जगत् में झूंठ सच्चे पंडित और विद्वान् कहाते थे सो ऐसी रचना रची जो होल से खाल भी गई यदि इनकी इस कृति पर कोई विद्वान् लेखनी गहे तो उसका ग्रन्थ इनके ग्रन्थ से अपरामित बढ़े आगे (१०) स्थालीपुलाकन्यायवत् कुछ दोष दर्शित कर दिये हैं (११) उन्हें देख इनकी विद्या का परिचय सबको भली भांति हो जायगा प्रथम-आपने पद्यमय ग्रन्थ रचने का उद्योग किया (१२) कुछ दूर चलकर गिर पड़े तब गद्य पर आ रहे सो भी ठीक नहीं कहो कितना भारी यह दोष यदि श्लोकमय ग्रन्थ बनाने की शक्ति न थी तो पहिले ही से क्यों न सोच लिया और जो आरंभ कर चुके थे तो उसी प्रकार सब ग्रन्थ

(९) यह गांव उस पक्की बड़ी सड़क पर आबाद है जो कलकत्ता से पेशोर तक गई है इसका दूसरा नाम चूतियों का शहर है यहां के रहने वालों की बहुत सी कहानी प्रसिद्ध हैं जिनको सुन वह गांव यथानामतथागुण मालूम होने लग जाता है॥

(१०) इस न्याय का अर्थ यह है कि जैसे हांड़ीभर चांवलों में से एक सीत के टटोलने से हांड़ीभर की परीक्षा हो जाती है॥

(११) आगे मुख्य पंच दोष छांट कर वर्णन किये हैं उन्हीं के अन्तर्गत बहुत सी बातें आगई हैं और जो बातें कही हैं उनका उदाहरण उसी के नीचे नोटों में लिख दिया है॥

(१२) इनके कुल ग्रन्थ में १२ अध्याय हैं उनमें से आरम्भ के छोटे २ दो अध्याय ज्यों त्यों श्लोकों में चला कर बाक़ी दस संस्कृत भाषा में चलाए हैं और वे बहुत बड़े २ हैं यदि ये भी पद्य रूप होते तो कम से कम दो हज़ार श्लोक बनाने पड़ते परन्तु पण्डित जी महाराज की तो गरमी केवल सवा सौ श्लोकों की रचना से ही पटा गई फिर आगे कैसे चलते॥

समाप्त करना उचित था जब दोनों प्रकार के (१३) बुद्धि लक्षणों से गिरे तो फिर किस काम के रहे क्योंकि इन चूकों से उनकी स्थिति तीसरा कक्षा (दर्जे) में हुई सो वह कक्षा केवल निर्बुद्धियों ही के लिये है अतः ऐसों के ग्रन्थ कदापि माननीय नहीं होते मूर्खों को चाहे भले ही ठगें। कदाचित् कहें कि हमने ऐसी रचना से अपनी दोनों प्रकार की विद्वत्तादि बनाई है तो इसका कुछ प्रसंग भूमिका में लिख देना उचित था सो कुछ नहीं लिखा तो बस॥ द्वितीय- किसी विद्वान् को कभी कोई मिथ्या (१४) बात भूल

(१३) श्लोक। अनारम्भो मनुष्याणां प्रथमं बुद्धि लक्षणम् ॥
आरम्भितान्त गमनं द्वितीयं बुद्धि लक्षणम्॥१॥

(१४) जैसे महाराज काशी नरेश को कुली वा बहाने वाज़ कहना और कानपुर के शास्त्रार्थ में स्वामीजी की हार बताना और उसी मिथ्या बात की गवाही में वहां के साहब कलक्टर आदि का नाम निःशंक लिखना इनका कैसा निकृष्ट कर्म- सत्य वार्ता तो वहां की यह है कि जब श्रीमान ने पंडित लक्ष्मण शास्त्री और हलधर ओझा को अवाच्य किया- तब हज़ारों प्रतिष्ठित हिन्दू मुसल्मान और अंगरेज़ों के बीच संस्कृत के विद्वान् असिस्टेंट कलक्टर ने जो कि उस शास्त्रार्थ में मध्यस्थ थे अपनी कुरसी से उठ- खड़े हो- टोपी उतार स्वामीजी महाराज को सलाम कर उच्चस्वर से सबको श्रीमान् की जीत सुनाई और नीचे लिखे अनुसार लेख अंगरेज़ी में लिख हस्ताक्षर कर दिये हैं सो यह सब शास्त्रार्थ पत्र यथावत् मेरे पास मौजूद है कहो- क्यों ऐसों के पूजने वाले नरक को न जावें

नक़ल अंगरेज़ी चिट्ठी साहब असिस्टेन्ट कलेक्टर व डि० मजिस्ट्रेट कानपुर।

कर भी अपने ग्रन्थ में न लिखनी चाहिये इनने जानबूझ कर अनेक मिथ्या प्रसंग भर दिये हैं जिनमें कितने ही कुछ अतिष्ठि तों को माना है कहो इसका नाम विद्वत्ता है वा अविद्वत्ताका यह छोटा दोष और क्या ऐसों को कभी कारागार हुआ पंडितजी ने नहीं

True, copy
Cawnpore

Gentleman
At the time in question I decided in favour of Daia Nand Sarassuati Fakir and I believed his arguments in accordance with the veds. I think he won the day. If you wish it I will give you my reasons for my decision in a few days.

yours obediently
Sd W. THAIRC

अनुवाद वा तर्जुमा

प्रतिष्ठित जन कानपुर

मैंने इस शास्त्रार्थ के समय स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी की जीतका निश्चय किया मेरे यकीन से उनका सब कहना वेदानुकूल है इस लिये मैं कहता हूं कि अवश्य उनकी जीत हुई यदि किसी को मेरे किये निर्णय का प्रमाण अपेक्षित हो तो मैं थोड़े दिनों में अपनी सब वे दलीलें लिख दूंगा जिनसे स्वामी जी की जीत मैंने प्रसिद्ध की है ॥इति॥ ता॰ १७ अगस्त सन १८६९ ई॰

द॰ आपका सेवक डबल्यू. थे अर्म असिस्टेन्ट कलक्टर कानपुर

सुना (१५) मन्त्र कहा है। नामः प्रतिष्ठापापस्य ॥
तृतीय- किसी विद्वान् के लेख में अभिमान और पक्षपात तथा

(१५) संवत् १९२५ की बात है कि श्रीमान् मुकाम अनूपशहर ज़िला बुलंदशहर में विराजमान थे वहां के एक घगरी नाम के गुसाईं पर- एक आर्य गुर्जर वैद्य ने मुनशी प्यारेलाल साहब तहसीलदार कोम खत्री साकिन् बरेली के इजलास में नालिश की कि यह गुसाईं आज गंगा तट पर फलां फ़लां गवाहों के सामने श्री स्वामी जी को गृहस्थ किरस्तान और अंगरेज़ों का तनख़्वाहदार उपदेशक कहता है वह अपने कहे का सुबूत दे या मुताबिक़ क़ानून सज़ा पावे- चुनांचिह गुसाईं गिरफ़्तार हुआ और उससे पूछा गया कि बता स्वामी जी के स्त्री पुत्रादि कहां हैं- और किस पादरी ने उनको ईसाई बनाया और किस सर्कारी ख़ज़ाने से उनको प्रतिमास तनख़्वाह मिलती है- रेल तार का ख़र्च हम से ले और पता लिखाकर तू अभी सबको जहां तहां से पकड़ा दे। अब तो गुसाईं जी हैं हैं करने लगे। चट हुक्म छः महीने की सजा का हुआ— धन्य श्रीमान् के दयालु स्वभाव को कि जिन्हों ने यह ख़बर पाते ही उसी दम वैद्य राज को उलटा दौड़ा कर उसे छुड़वाया —— वैद्यराज ने तो अपनी जान तुरन्त आकर श्रीमान् को बड़ी फूल के साथ ख़ुश ख़बरी सुनाई थी परन्तु यहां आते ही बिचारे आपत्ति में पड़ गये— पीछे उसको छुटा सुन जब श्रीमान् शांत हुए तब सबको उपदेश किया कि भाई जब तक मनुष्य में अविद्या होती है तब तब वह स्वार्थ तत्परता में ही डूबा रहता है और उससे ऐसा ऐसाही व्यवहार होता है —जैसा कि तुम देखते हो इस गुसाईं का —बल्कि बहुत से लोग इस संसार में इससे कहीं बढ़ कर हैं और मेरा उद्योग विशेषकर ऐसोंही के सुधार के लिये है ॥

आत्मश्लाघा और मिथ्या प्रमाण कदापि लेशमात्र को न होना चा हिये जैसे हे अमर कोश पर आप उसे बताते हैं स्मृति सो इन का ग्रन्थ इन सब दोषों से यथेच्छ परि पूरित है (२६) कहो कैसा और

(२६) अब देखिये इनकी आत्मस्तुति और अभिमान कि कैसा अपने को प्रसिद्ध करते है ॥ श्रीमत् पदवाक्य पारावारीण — श्रीगौड़वंशतिलक — श्रीगोपाल शरण प्राप्त — महातेजस्विविप्रोयं बुधाहृते — हमारे पहुंचते ही मेरठ नि द सी सब विद्वान कृत कृत्य हुए — उन सब ने हमको सभापति बनाया — हमारी आज्ञा को वे सब ऐसी समझते थे जैसे राजा की — हमारा नाम सुन प्रथम पराजित होने के कारण दयानन्द थर २ कांपते और वे होश हो जाते थे हमको सब लोग महादेव की नांई जानो और धीरज धरो — जो २ दयानन्द कहते गए सो २ सब हमने मंजूर कीं पक्के कागज़ पर शर्तें लिख रजिष्टरी कर देने तक को कहा परन्तु वे अपनी किसी एक भी बात पर न जमे — निदान यह कह कर मेरठ से भागे कि कहीं श्रीगोपालजी हमको सर्कार में अर्जी देकर पकड़ा न देवें — और भी सब देश देशांतर में श्रीमान् का हारना और सब ठौर से भागना ही लिखा है — पक्षपात की यह रंगत कि — आर्य्यावर्त्त भर के ब्राह्मणों में सिवाय गौड़ों के और कोई ब्राह्मण न पवित्र हैं न पूजनीय — गौड़ों को जिस प्रकार उत्तमता महात्मा जी ने वर्णन की है वह सब प्रकरण देखने ही के योग्य हैं — आप लिखते हैं कि जैसा गुड़ सब पदार्थों में उत्तम वैसे ही हम, बल्कि इसी लिये गुड़ शब्द का हमारी जाति में सम्बन्ध रक्खा गया है — दूसरे गुड़ शब्द का गोल गोल का मध्य मध्य का आवर्त अर्थ हुआ वह ब्रह्म से संबन्धित हो ब्रह्मावर्त नाम का पवित्र देश बना है तहां के मुख्य निवासी हम गौड़ों को जानो और मानो ॥ वाहजी महाराज वाह आपने व्याख्या तो खूब ही की परंतु यह विचार न किया कि प्रथमार्थ में चींटे और द्वितीयार्थ में देश भर के विद्वान् आपको चिपट आवेंगे फिर

कितना गहरा यह कलंक ॥

चतुर्थ- श्रेष्ठ लेख वह होता है कि जिसमें प्रतिष्ठितों के साथ उनकी प्रतिष्ठानुसार शब्दों का ऊह हो जिससे उसकी समालोचना के समय किसी के चित्त में ग्लानि न उपजे और न किसी को उसके पढ़ने व सुनने से किसी प्रकार का पश्चात्ताप वा क्षोभ हो सो इसका भी कुछ विचार नहीं किया गया है (१७) कहो कैसा यह अप्रतिष्ठित कर्म और

•

आपका पता भी न चलेगा और विद्वानों को अर्थ करने में आप के समान खींचा तानी भी न करनी पड़ेगी वे लोग आपकी उसी खिंचाखींची स्मृति के अनुसार गुड़ का अर्थ गोल और गोल से स्वार्थ में कु प्रत्यय करके आपको कुराडु का सहोदर बना छोड़ेंगे और आपको गिल्ली हरयानियां और गोला पूरबों में कराहेंगे फिर आपका मीठा मधमार्थ भी ठीक होजावेगा और ब्रह्मा वर्त्त देश यथा शास्त्र कान्यकुब्जों ही के अधिकार में रहेगा और आदि तथा शुद्ध गौड़ वे रहेंगे जिनका जड़ गौड़ वाला नाम मत्स्य में है और "सारस्वताः कान्यकुब्ज गौड़ मैथिल उत्कलाः" इस वाक्य के पाठ क्रम से भी उनका कहा शुद्ध ठहरेगा इसलिये बहुत अच्छा हो जो आप सेतु से अधिक न बढ़ें क्योंकि प्रसिद्ध है कि बढ़ता है वह गिरता है ॥

(१७) दयानन्द पराभव :— ऐसा हजारों बार लिखना तथा अगम मान्य श्रीमान् को छली धूर्त्त नास्तिकादि कह कर — स्वयं वरिष्ठ होना तथा ऐसा लिखना कि " शठतरा अपि गौड़ा अधीत वेदेभ्यो दाक्षिणात्येभ्यः श्रेष्ठतमा एव " अर्थात् वज्र मूर्ख भी गौड़ लोग समस्त वेद पाठी अच्छे २ विद्वानों से बढ़ कर ही श्रेष्ठ होते हैं — " दाक्षिणात्यानां वेदाध्ययनं शूद्रवन्निषिद्धम् " अर्थात् जैसा शूद्रों को वेदों का पढ़ना अनुचित वैसा ही दक्षिणी ब्राह्मणों को भी न पढ़ना चाहिये। सार इनके हृदय का यह है कि पंच गौड़ों के नाईं पंच द्राविड़ भी वेदों को डुबो देवें तो हमारी बन पड़े — इसी हेतु आपने लिखा है कि कभी वेदों की वाणी कल्याणकारिणी नहीं ठहर सकी। सो दयानन्द ठहराते हैं — अतः दयानन्दः पराभव: ॥

लांछन कभी ऐसे लोग विद्वानों से प्रतिष्ठा नहीं पाते॥

पंचम— सब बात रही एक तरफ़ अर्थात् और कुछ न हो तो जिस का नाम विद्वान् का लेख उसका हर एक अभिप्राय संगत तथा युक्तियुक्त और वेदानुकूल तो हो और उसके सब पद पदार्थ तथा छन्दादिक व्याकरणादि शास्त्रों की यथावत् शुद्धि रखते हो (१८) अन्यथा व्यर्थ

(१८) असंगत और परस्पर विरुद्ध ऐसे लेखों को कहते हैं जैसे कहीं लिखा कि दयानन्द मारे डर के कभी किसी विद्वान् के साम्हने नहीं हुए और फिर कहीं जाकर लिखा कि बम्बई काशी लाहौर आदि में फलाने पंडितों से हारे— मनुष्यों से सूर्य चन्द्रादि ग्रह उत्पन्न हुए दाक्षिणात्यों की भाषा को अशुद्ध कहना फिर उसकी अशुद्धता के परिचय में अपनी उस भाषा के अपशब्दों को दिखाना जिसे प्रथम बहुत शुद्ध कह चुके थे— "ब्रह्म धर्मस्य वै योनिः०" इस मनुवाक्य का विपरीतार्थ यह जताना कि ब्राह्मण मात्र की उत्पत्ति के बीज हम गौड़ लोग हैं "नोपतिष्ठति०" इस मनुवाक्य से दो संध्या की जगह चार संध्या करने को बताना— अंगिरा[1] ऋषि- देवी[2] और पार्वती[3] का संबंध अंगरेज़[1] ईमामसीह[2] और गिरजाघर[3] में यथाक्रम घुसेड़ कर उनको वेदानुकूल कहना तथा स्वस्त्रियों के मुख योनि की उपमा देना- युक्तिरहित और वेदविरुद्ध समझा यह कही जाती है। कि "वैशेष्यात् प्रकृति श्रैष्ठ्यान्नियमस्य च धारणात्॥ संस्कारस्य विशेषत्वात् वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः॥१॥ यद्यप्येते त्वनिष्टेषु वर्तन्ते सर्व कर्मसु॥ सर्वथा ब्राह्मणा पूज्या ब्राह्मणं दैवतं महत्॥२॥" ये दोनों श्लोक यद्यपि मनुस्मृति में ही पाये जाते हैं परन्तु विचारवान को स्पष्ट विदित हो जाता है कि प्रथम श्लोक से द्वितीय श्लोक का अभिप्राय बहुत विरुद्ध है मनुजी ऐसे महात्मा के लेख में ऐसा विरोध नहीं आसक्ता सो इसका किंचिदपि विचार न कर के प्रधान को गौण मान प्रक्षिप्त और सर्वथा त्याज्य वचनों को प्रधानता देकर लिखा कि ऐसे ही ब्राह्मण होना चाहिये नहीं तो धर्म किस प्रकार प्रवर्त होय॥ अब उनके गद्य और पद्यों की थोड़ी अशुद्धि की ओर देख लीजिये॥ ६वें श्लोक के चतुर्थ पदांश में खंड पदोपन्यास रूप यति विच्छेद दोष है- १७वे श्लोक में कालिकत्रि का पद अशुद्ध और २०वें का भावार्थ पृष्ठ २६ व ३०वें श्लोक लक्षण विरुद्ध और

विकत्थन और वृथा परिश्रम कहाता है इन दिनों तो ग्रन्थमान्य वह लेख होता है जिसकी देशभाषा तक सर्वथा और सर्वांश शुद्ध हो सो यह

४० वें श्लोक में छंदोभंगदोष है इसी प्रकार और भी बहुत से पद्य हैं ॥

३०२ पृष्ठ में "स्वस्मिन् शूद्रत्व निरासायोपनयन मवश्यमेव द्विजत्व सिद्धा संध्योपासन पुरस्सरं वेदाधिकार सिद्धौ विधेयमिति सिद्धान्तः," इस पङ्क्ति की अनन्वितता और अशुद्धता विद्वज्जनों को स्वतः स्पष्ट हो जायगी ग्रन्थकार का भाषार्थ भी देखिये "अपने शूद्रता के दूर करने को उपनयन अवश्य करना चाहिये इस प्रकार द्विजत्व सिद्ध करके संध्योपासन पूर्वक वेदाधिकार है सिद्धान्त हुआ," अब किंचित् यहां भी कटाक्ष निक्षेपणीय है कि इस प्रकार यह किस पद का अर्थ है और प्रकार के अनुक्त होने से "इद," इस पद से किसका परामर्श है एक और विचित्र चमत्कार देखिये "सन्ध्योपासन पुरस्सरं," इस पद को "अयाप्राप्तः स्थ," वेदाधिकार पद का विशेषण लिखा है और "वेदाधिकार सिद्धौ," इसका "वेदाधिकार है," यह अर्थ निरूपण किया गया है। क्यों न हो व्युत्पन्नों का तो यही लक्षण होना चाहिये व्युत्पन्नता तो इसी प्रकार दिगन्तगामिनी होती है साष्टाङ्ग है आप ऐसे व्युत्पन्न शिरोमणियों को। और भी देखिये पृष्ठ ३८० में आपने लिखा कि "सन्यासाश्रमस्तु मुक्तिरूपः फलं परमपुरुषार्थत्वादिति सिद्धम्," इस वाक्य का अर्थ कहिये क्या है। पृष्ठ ४०५ में आपका निस्नातं पद तो बहुत ही शुद्ध है समाप्ति के श्लोक में "वेदार्थ शब्देति मुख्य प्रकाशः," ऐसा लिख, देखिये आप कैसे वैय्याकरणभूषण बने हैं। भला कहिये तो सही कि आपने यहां कोनसा समास माना और इस लेख से किस रीति वेदार्थ प्रकाश यह नाम निकला। आर्यगण महात्माजी वेदार्थ प्रकाश करने को चले तो यह प्रकाशित किया कि परमेश्वर निराकार होने के कारण श्वासरूप वेद उससे उत्पन्न ही नहीं हो सके। और नियोग तथा मातुलसुता परिणयन में दोषारोपण कर जिन वेदों का प्रकाश करना चाहते थे उनका स्पष्ट खण्डन किया इसी प्रकार बाल विवाह की पुष्टि करना भी इन लोगों का अनर्गल धर्म और देश विनाश का परम हेतु भूत इनका साग ग्रन्थ है ॥ ४ ॥

शुद्धि तो बहुधा ऐसे पंडितों से होनी परम दुर्घट तिसमें इनकी भाषा तो सब से निराली और अतीव विलक्षण है॥ बस यही लीला पं० श्रद्धाराम फुल्लौरी और राजपुराणिक पं० चतुर्भुज जी तथा रामसुब्रह्मण्य शास्त्री जी और पं० उमादत्तजी आदि सब भूत ग्रंथकारों की जानो जब बड़े २ पण्डित नाम धारियों ही की पोथी निरी थोथी फिर और लाला लोगों आदि की ऊटपटांगों का तो कहना ही क्या है इनका साहस तो इस कहावत का सा है कि "बड़े २ बहे जायं कोरिया कहे मोय पार उतार" इन सब लोगों ने अपनी रचना का नाम मन माना उस प्रकार रक्खा है जैसे कोई अपने जन्मान्ध पुत्र का नाम धरे कमलनयन हो इस विषय में प्रशंसनीय और निर्दोष हैं तो पं० उमादत्तजी महाराज (१९) जिन्होंने आत्मरचित ग्रंथ का नाम वास्तव्य में यथार्थ अर्थात् बहुत ही ठीक सादृश्यता के साथ रख कर छपवाया है॥ वह नाम सन्मतेन्दु है इसमें पीछे जो इन्दु शब्द आया है उसका वाच्यार्थ चन्द्रमा है सो सब लोग जानते ही हैं कि वह कलंकी और दोषाकर अर्थात् रात्रि अर्थात् अन्धकार का करने वाला होता है यदि पंडितजी महाराज सकार की जगह म कार लिखते तो उनके ग्रन्थ का नाम विशेष शुद्ध कहा जाता इस अशुद्धि को सब लोग उनको और विशेष कर मेरी प्रार्थना नुसार शुद्ध कर लेवें॥

प्रथम ग्रासे मक्षिका पातः। इस संस्कृत और "बिसमिल्लाही गलत" इस फ़ारसी वाक्य का पूर्ण परिचय इनके सिवाय और कौन करा-

(१९) ये पंडितजी वास्तव्य में तो बरेली के रहने वाले हैं जहां सर्कारी पागलखाना है जो नहीं जानते वे उनको फ़र्रुखाबाद निवासी कहते हैं॥

वे। महात्माजी ने यह ग्रन्थ १४ वर्ष में बना पाया तिसकी यह कैफ़ियत कि प्रथम ही श्लोक में जो गुरु की बंदना लिखी है उसमें गुरु शब्द को नपुंसक लिखा है (२०) तिसपर आप व्याकरण दानी का दम भरते और श्रीमान् पूर्ण विद्वान् स्वामीजी महाराज को (जिन्होंने संसार भर के पंडितों की ७२ पीढ़ियों की भूल मिटाकर (२१) सत्पथ दिखाया है) व्याकरण शास्त्र का अनभिज्ञ अपने ग्रन्थ में लिख मूर्खों के आंखों में धूल झोंक ठगने और काशी तक के विद्वानों के शिरोमणि बनते हैं वाहजी वाह नमस्कार है आपको। चेतो भाई चेतो हुआ सो हुआ अब भी चेतो और रहा सहा भ्रम निम्न लिखित वृत्तान्त (२२)

---

(२०) हां यदि पंडितजी महाराज कहें कि जैसे के लिये वैसा लिंग प्रयोग लिख जताना क्या दोष है तो हम भी तस्यताम कहेंगे॥

(२१) विचारकरना चाहिये कि पांच हज़ार वर्ष के भीतर आप से कहीं बढ़ कर इस विद्वानों की चालाकी कि "जिसको उन्होंने व्यास वशिष्ठादि के नामों से बनाकर चलादी थी" जिसने पकड़ कर सबको दर्पणवत् दिखादी उसके सन्मुख आप आधुनिकों का काव्य क्या चीज़ है॥

(२२) सम्वत् १९३७ के जेष्ठ मास में एक माह से अधिक श्रीमान् स्वामीजी महाराज नगर फ़र्रुख़ाबाद में विराजमान थे उन दिनों ये महात्माजी हम स्वामीजी से शास्त्रार्थ करेंगे ऐसी गर्मागर्म खबरें अत्यह उड़ाते रहे परंतु सैकड़ों थुंनकियां लगाने पर भी श्रीमान् के सन्मुख घड़ी भर को भी खड़े न हो सके यह बात सर्वत्र रस समाज के २७वें मासिक पत्र द्वारा विस्तार पूर्वक प्रकाशित हो चुकी है तथापि पंडितजी बहुत कुछ पाण्डित्य का दम भरते और श्रीमान् को अपनी पुस्तक में सैकड़ों जगह धूर्त और वेषधारी आदि अनेक कटु बचनों से वेष्टित करते और अपना वेदभाष्य बनाने का विज्ञापन देते हैं और लिखते हैं कि मेरे ग्रंथ को वेद ही जानो जो कोई इस मन्मतेन्दु का खण्डन करेगा मानो वेदों ही का खंडन कर्त्ता होगा परंतु परमेश्वर का नाम गर्वापहारी है

गड़बेटो—आर्यगण महात्माजी अनेक दुर्वचन श्रीमान् को लिखकर सफ़ाई दिखाते हैं “ तनुमात्सर्य भावतः ” कहिये संसार की कैसी विचि

उसने इनको तात्काल पारसाल ऐसी पटकदी कि महात्माजी का जी ही जानता होगा॥ वह वृत्तान्त यह है कि यहां ज़िला स्कूल में इटावे के निवासी पंडित भैरवदत्तजी के प्रख्यात एक सच्छिष्य पंडित ललिता प्रसाद जी नाम के एक विद्वान् हैं उनके साथ शास्त्रार्थ छिड़कर उमादत्त पराभूति प्रकाशित हुई॥ यहां आगे उसमें का थोड़ासा उदाहरण लिख दिया है सबलोग उसको देख निर्णय करें कि ये कैसे क्या विद्वान् हैं॥

अथोदाहरणम्—वस्तुतस्तु पत्रान्ते वृत्तमपि श्रीमद्दृरिडनः सूक्तिं यथार्थ्ययतीत्यस्य अथया इच्छयादीरिडन स्मृक्तिं गौर्गौरित्यादिकामयति आगच्छति भवति सति विपरीति लक्षणायागच्छति सति पत्रान्तेर्थि वृत्तमपि श्रीमत् काङ्क्षा श्रीमदित्ययौ यथार्थीदरिडनो एत्त इच्छयादीयता मस्मा इत्याकार कां सूक्ति मयति माम्वदत्रापि गच्छति सति किं श्रीमानिति ध्वनी तोना वबुद्ध एव भवता नैनांचित्रम्॥ इस पंडित ललिता प्रसाद् जी के लेख का आशय ठीक २ यह है कि जिस प्रकार कोई भिखारी राजा की यह आज्ञा पाकर भी कि इससे कुछ दो सुशोभित नहीं होता। उसी प्रकार आपका श्लोक भी लक्षणा विरुद्ध होने के कारण अशोभित है॥ सो यह अर्थ पंडित उमादत्त जी नहीं समझे उन्होंने पं० ललिताप्रसाद जी को यह लिखा कि। अस्मिन्नगरे स्वप्नेपि मम राज्ञा सह समागमा भावाद्धोयतामित्युक्तेस्तु दूर देवापास्त त्वात्। अर्थात् मांगना तो दूर रहा कभी सपने में भी मेरा इस नगर में किसी राजा से समागम नहीं हुआ। अब विद्वान् लोग विचार कर लेवें कि पं० उमादत्तजी महाराज कैसे विद्वान् हैं और इनसे पूछें कि पं० ललिताप्रसाद् जी ने यह कहां लिखा था कि तुम राजा से मांगते फिरते हो। जब पं० ललिताप्रसाद्जी सवाल दीगर जबाब दीगर की कहावत देखी तब उन्ने पं० उमादत्तजी को दूसरा पत्र लिख उसमें यह श्लोक

च लीला है अर्थात् ये लोग कैसा उछल २ कर पांडित्य दिखा रहे हैं परंतु खूब जान लो कि बहुत सा बुड़ बुड़ शब्द और छलक अपूर्ण ही घट में देखी जाती है न कभी किसी पूर्ण में भाई पंडित नाम धारी लोगो तुम अपने मुंह जितना अपना बड़प्पन

लिखा " अर्थबोध प्रमाद भ्रकि स्रज: पूरपूरिते। लेखोपाये न किं नोव भ्रूक्षुप्युन्मीलिते मया॥१॥" अब पं० उमादत्तजी महाराज ने अपनी पहिली भूल को छोड़ पं० ललिताप्रसादजी के इस श्लोक पर तर्क किया कि चक्षुषी इति प्रथमान्ते प्रकृत भावाभाव क्रेज, सप्तम्यन्तस्त्व नन्वितः॥ इसे देख पं० ल० प्र० ने लिखा कि वाहजी वाह आपने तो खूब ही वैयाकरणता छांटी ॥ अर्थ न समझ कर सप्तम्यन्त अनन्वित है यह लेख तो स्पष्ट आपकी व्यथा आतला विदित करता है॥ फिर इसका अन्वय लिख भेजा वह उमादत्त पराभूति ग्रन्थ में स्पष्ट लिखा है ॥

अब इन महाशय की कुछ और भी वैयाकरणता उमादत्त पराभूति ग्रन्थ से संग्रह की जाती है ॥

जैसे अपराह्ण शब्द जो कि उत्तर दिन वाची है उसे महात्माजी अपरान्ह और प्रतिद्वन्द्वि शब्द को प्रतिद्वान्दि लिखते हैं और बहु ऋषि वचन विरोधात् यहां संहिता भी नहीं कर जानते ॥ अब कुछ साहित्य का विषय देखिये। " दिसपति सर्व मसौ प्रकृते रह महमिका मनुस्तत्य पृथग्जनः॥ बुधजनस्तु विवेकवशेन तां वशयतुं यतते विगतस्मयः॥१॥ यह श्लोक पं० उमादत्तजी का है इस पर ललिताप्रसादजी लिखते हैं कि इस श्लोक के प्रथम पाद में गुरु के स्थान में लघु वर्णो पन्यास से छन्दोभङ्ग है और जो पादान्त का लघु भी गुरु होता है यह समाधान, सो भी असङ्गत है क्यों कि काव्य प्रकाश साहित्य दर्पणादि में स्पष्ट लिखा है कि यह वचन द्वितीय चतुर्थ पाद विषयक है और " अमावसायके मया बिदूहिता सदर्थ के॥ अमासंमनना सुपाद्यता न्ययाति सन्मुदे ॥२॥ इस दूसरे वृत्त में हत वृत्तता दोष है। बस यह दिग्दर्शन मात्र कर दिखाया विशेष देखना चाहें सो असल ग्रन्थ में देख लेवें ॥ कहिये पंडित राज यह पराभूति क्यों हुई और आप कैसे हार मान अवाक् बैठे और आप

प्रकाशित कर धना बाई बनते हो उतनेही परीक्षकों के समीप कच्चा न ठहरते हो महत्व उसी का ठीक जिसकी स्तुति बिना स्तुत्य पुरुष की इच्छा और खर्च के औरों के मुंह लेखनी द्वारा सुनाई दे। सो ऐसा कोई एक भी दृष्टान्त आप लोगों में से किसी का देखा नहीं जाता थोड़े स्थल और मनुष्यों के सिवाय आप लोगों को कोई यह भी नहीं जानता कि कौन किस खेत की मूली हो। श्रीमान् सकल विद्या निधान स्वामीजी महाराज सारे भूमंडल पर सहस्त्रांशु के समान प्रकाश कर रहे हैं उसी प्रकार दसो दिशा उनकी सत्कीर्त्ति से आच्छादित और उज्वलित हो रही हैं लक्षावधि लोग उनपर अहर्निश धन्यवाद रूपी पुष्पों की वृष्टि करते और उनका उपकार मानते हैं परन्तु उनको इन बातों का किंचित्मात्र गौरव वा प्रतिष्ठा वा अभिमान नहीं न आप ऐसे अनेक लोगों की निन्दा कृति सुनकर उनको कभी कुछ क्षोभ वा ताप उपजता है। मुख्य तत्व इसका यही है कि वे मुक्त हैं और आप बद्ध इतना भारी अंतर उन में और आप में है परन्तु शोक कि उसको आप [illegible] हीं जानते तभी आपलोग सब कुछ को न कुछ और न कुछ को बहुत कुछ समझते और लिखते हो श्रीमान् के निकट त्रिलोकी का राजा (२३) और उसका सारा वैभव तृण प्राय है।

के यजुर्वेद भाष्य के छपने में क्या देर है कुछ दरखास्ते भी आगई हैं वा नहीं॥

(२३) प्रसिद्ध है कि फर्रुखाबाद के विख्यात साहूकार लाला पन्नीलाल आदगी बड़े ही जुज़रस थे तथापि श्रीमान् की आज्ञानुसार सैकड़ों रुपया मासिक खर्च उन्होंने स्वीकार कर लिया था थोड़े से अनुचित पर श्रीमान् ने उनको क्षणमात्र में फटकार दिया - श्रीगोपाल जी ने लिख मारा है कि वे इज्जती के डर से दयानन्द किसी राजधानी में नहीं गये परंतु प्रसिद्ध है कि जयपुराधीश महाराज रामसिंह जी को भी श्रीमान् ने इसी प्रकार सन्मुख

आप लोग इतनी हाय२ और अन्याय तथा खुशा(द् से भी अपना पेट नहीं भर पाते और श्रीयुत् परम निस्पृहता के साथ हज़ारों रुपयों का जगदुपकारक वार्षिक ख़र्च आनन्द पूर्वक चला रहे हैं। आप उनका सर्वथा विनाश और वे आपका सर्वथा प्रकाश चाहते हैं सो यह सब आप लोगों का कर्म आपकी केवल अविद्या और स्वार्थ तत्परता के कारण है और उनका सर्व कर्म उनकी सद्विद्या और परमार्थ दृष्टि से प्रवृत्त हो रहा है। इसी कारण आप सर्व प्रकार से दुखी और श्रीमान्

से हटा दिया और संबत १९१२ में श्रीमान् जब महाराजा तुकोजी राव हुल्कर वाली इंदौर के यहां मेहिमान हुए तब प्रशंसित महाराज ने उनको अपने ख़ास बाग़ की कोठी में ठहराया था दोनों काल श्रीमान् को साथ ले हवा खाने को जाते थे प्रति दिन सर्कारी पाठशाला में व्याख्यान होता था महाराज की आज्ञानुसार सारा दर्बार और प्रजागण बराबर हाज़िर रह कर व्याख्यान सुन धन्यवाद देते थे एक दिन सर्कारी कोठी में पंडितों की सभा भी हुई थी उसमें श्रीमान् ने समस्त राज मान्य बड़े२ विद्वज्जनों को क्षणमात्र में मूक कर दिया था राजा साहब बहुतेरा चाहते रहे कि श्रीमान् सदैव इसी ओर विराजमान रहें परन्तु १५ रोज़ से अधिक श्रीमान् नहीं ठहरे यात्रा के समय जो महाराजा साहब ने बहुत से महार्ह वस्त्र और थाल भर मुद्रा श्रीमान् को भेट की थी उसको उन दिनों अनुपयोग जान श्रीमान् ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि उस तक वेद भाष्य का आरंभ भी नहीं हुआ था कि जिसमें वह उपाय न काम आता॥ ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं॥

अतुल सुखयुक्त रहते हैं सिद्धांत यह कि जिनको सदैव त्रिविध संताप घेरे रहे उनके उपदेशों पर चलने वालों को कहो किस बिध कल्याण हो अतएव श्रीमान् सबको वास्तविक सुख हेतु का बोध अनेक बिध कर रहे हैं कि भाई आर्यो अपना सत्य सनातन वैदिक धर्म गहो जिससे तुम्हारी पराधीनता छुटे और कामना चतुष्टय की सिद्धि हो और "पराधीन सपने सुख नाहीं" यह कहावत देश भर में भली भांति प्रथित है परंतु उस पर किसी का कुछ ध्यान है न बिचार आर्यगण यद्यपि यह ऊपर लिखी कहावत मोटी और भद्दी है परन्तु आशय इसका बहुत ही गम्भीर जानो जिस दिन वह हमारे देश निवासियों के चित्त में ठीक २ धमेगा उसी दिन से देश का सुधार होने लग जावेगा॥ श्रीजगदीश्वर श्रीमान् परम सुज्ञान सकल सद्गुणोंकी खान इन स्वामीजी महाराज को परमायु करे जिन्हों ने देश सुधार का बीज सर्वत्र अनेक भांति बोकर उसके अंकुर को हरा करा रखने के लिये ठौर २ समाजों को जमाया है और उनमें से बहुतेरे अपना काम वैसाही कर रहे हैं जैसा कि चाहिये।

आशा है कि सर्वशक्तिमान् उनके भी हृदय को आशु निर्मल करेगा जिनको शोक वास्तविक सत्पुरुषों को है― परन्तु बिना उपाय कुछ नहीं होता अतएव प्रशंसित श्रीमान् ने अंतःकरण की शुद्धि के लिये परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना जिस प्रकार करने कोकही है वह सब रीति हमने अपने ज्ञान सागर ग्रन्थ में यथावत् लिखी है जिनको अपना और अपने देश का हित अभीष्ट हो वे उसमें अच्छे प्रकार मन लगा कर निर्मल होवें

और सुगमता के साथ सकल सुख भोग संसार से तरें परन्तु बिना अंतःकरण की शुद्धि के कभी किसी मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता न ऐसा पुरुष औरों का कल्याण कर सकता है इसी कारण जगत् में थोड़ों को छोड़ क्या पंडित क्या मूर्ख क्या राजा क्या रंक क्या अमीर क्या फ़क़ीर अर्थात् सब के सब (२४) ख़राबी में पड़े सड़ गल रहे हैं- इन में किसी एक को भी मुख्य कर्तव्य

(२४) देखो जगत् में कोई एक भी सुखी नहीं देखा जाता न किसी का कोई व्यवहार शुद्ध होता है। सब एक दूसरे से कपट छल रखते हैं। नहीं करना सोई करते हैं। देशान्तरीय थोड़े ही प्राचीन इतिहासों में लिखा देखा जाता है कि कहीं भरत खंड में मिथ्या वादी नहीं देखा गया — देनलेन उनका ऐसा शुद्ध है कि जो लेनदार- देनदार से कहे कि तुम जब तक मेरा रुपया अदान करदो कभी इतनी हद्द से बाहर न निकलो तो वह वैसाही करता है। लाखों रुपयों का माल बिना रक्षक दिन रात महीनों तक जिधर देखो उधर पड़ा रहता है परंतु कोई उस पर दृष्टि पात तक नहीं करता। इत्यादि अनेक भांति जहां कीस्तुति तहां को देखो अब कैसी फ़ज़ीयत सब के अग्रगंता पंडित संत महन्त आचारी पुजारी और गुसाईं- सोई अधिक झूठे लोभी कपटी और दुराचारी। देखो कल की बात है कि पूर्व में तारकेश्वर के महन्त एक परस्त्री के प्रसंग में तीन वर्ष को और गुजरात में जाम नगर के बड़े लक्षाधीश लाखों मनुष्यों के कुल पूज्य गोकुलिया गुसाईं ब्रजेशजी एक चोरी के अपराध में दो वर्ष को कारागार सेवी हुए। इसी प्रकार जगन्नाथपुरी के वे राजा साहब जिनकी उपस्थिति के बिना जगन्नाथजी चोला ही नहीं बदलते थे जन्म भर को काले पानी गये। और मुंउरम बड़ौदा के गायकवाड़ बद चलनी के कारण गद्दी से उतार मदरास में

क्या है सो नहीं सूझता—करना धरना तो दूर कोई इतना भी तो नहीं सोचता कि मनुष्य संसार भर के जीवों में श्रेष्ठ कहा जाता है सो

नगर बन्द कियेगये। इनसब के लिये वे शुमार खर्च और प्रयत्न ज़आ परन्तु सब व्यर्थ ही गया इनका दुःख आर्यों से पूछे॥

पंडित २ बजे परंतु पंडित और विद्वान् शब्दों का ठीक अर्थ सत और असत् का विवेक करना कराना है तदनुरूप ये लोग चाल न चल कर जैसा धुनी मानी लोगों का मन देखें वैसा ही चट शास्त्रें वा प्रमाण बना देवें कहो यह वास्ते पंडिताई के धब्बा नहीं॥ इसी प्रकार ये लोग सबके गुरू बनें परन्तु गुरू शब्द का ठीक अर्थ सबका दिन रात हित ही करना जो है सो कभी किसी पर प्रकाशित न करें। देखो वेदों में गायत्री मंत्र का कैसा बढ़ कर माहात्म्य है इसी कारण देखो उसके उपदेश के समय ब्राह्मणों में अब तक कैसा उत्सव किया जाता है परंतु इन दिनों के गुरू बन्ने वालों ने संसार को ठगने के लिये उस परम दिव्य अनुपम वेद सार मंत्र को व्यर्थ करके अपने न्यारे २ बहुत से मंत्र गढ़ लिये हैं उनका माहात्म्य सुना कर [illegible] से भी कहते हैं कि तुम अब तक गुरु मुख नहीं ज़ए तुम्हारी काया अपवित्र और नर जन्म वृथा है इनकी सुन्ने वाले लोग भी उनके जाल में फस कर तुरत ज़आ सो ले के चेला हो बैठते हैं। चेला क्या ज़ए मानो उसी दिन घर वार सहित जन्म भर को उनके हाथ बिक गये। जब दिन रात पंडितजी वा गुसाईं जी वा आचारीजी वा किसी संत वा महंत जी की धौंस सिर पड़ने लगी तब देखो कितने चेलाजी कैसे मनही मन दुखी होते हैं फिर इसकी न कहीं दाद है न फ़रियाद कुछ हो गुरू जी तो अपना काम बना चुके—होय तहां लौं दे—न होय तब अपनी ऐसी तैसी में जा॥ कहो गुरू जी का मंत्र चेला को फला वा गुरू को। अतएव गुरू शब्द का ठीक अर्थ जो हितोपदेष्टा था सो अब

क्यों – विना इस सोच विचार के कभी कोई मनुष्य – मनुष्य नहीं कहा जाता। जैसे सड़ा गला बीज वा मेवा वा लकड़ी आदि पदार्थ अपनी

संसार में ठग डाकू और बदमाश वाचक हो गया। जैसे किसी ने किसी को दम झांसा दे दिखाकर किसी प्रकार से अपना काम गांठ लिया तो लोग उससे कहते हैं कि वाह भाई तुम तो बड़े ही गुरू हो आख़िरकार तुमने उसको अपना चेला बना ही छोड़ा- इत्यादि अनेक इसके दृष्टान्त आ चुके हैं॥

एक और नया गुरुचरित्र सुनिये वह ख़ास तौर पर है कि कश्मीर के पास सुकेत मंडी नाम के एक बड़स्तुत्य राजा विजयसिंह जी संस्कृत पढ़े शिवभक्ति में प्रसिद्ध हैं वे किसी कारण अपने यहां के किसी कुल पूज्य कुछ पढ़े हुए ब्राह्मण से रुष्ट हो काशी निवासी पंडित बालशास्त्री जी के शिष्य हुए अब शास्त्री जी उनको ख़ूबही लूटने लगे तब कुल पूज्य जी का दुःख पात गुणित बढ़ गया – गांव के बाहर थोड़ी दूर पर एक शिवालय है राजा साहब वहां अपने इष्टदेव के दर्शन को प्रायः जाते थे उसी के निकट पूज्य जीने धूनी रमाई कुछ दिन पीछे प्रसिद्ध किया कि शिवजी मुझसे एकान्त में बातें करते हैं इस बात की कितने ही मनुष्य जोकि साधक थे कुछ २ साक्षी भी भरने लगे परंतु उसने सुना कि राजा साहब सत्य नहीं मानते बोला कि "हाथ के कंकन को आरसी क्या" जो मैं कहूं वह राजा साहब करें और आंखों से देख लें – वहां क्या कमी थी दो एक हज़ार रुपया पुरश्चरणादि के नाम से ले लिवाकर एक दिन बोला कि बस काम फ़तह है – वह दो राजा साहब से कि कल शिवजी की महा पूजा लेकर साथियों को पांच सौ क़दम दूरी पर छोड़ हाथ बांध मंदिर में हाज़िर होवें इस प्रकार हाज़िर हुए राजा साहब ने मंदिर में आदेखा कि शिवजी का अचल लिङ्ग दो तीन बार डगमग २ हुआ और ऊपर से दूध की धारा और कुछ बारीक से फूल शिवजी पर गिरने लगे फिर

आकृति में होकर भी उनका गुण उनमें न होने के कारण संग्रह योग्य नहीं ठहरते- उसी प्रकार बिना मनुष्यता के उपरोक्त पंडित

एक आकाश वाणी यह सुनी कि ,, राजन् धन्योसि धन्योसि नान्योस्ति सदृशस्तव ॥ अति पुण्य बलात् वेयं सिद्धिः ॥ अब क्या पूछना है जो कुल पूज्य थे सो जगत्पूज्य होगये । और हज़ारें के वारे न्यारे होने लगे निननये ऐसेही चमत्कार राजा साहब को दिखला कर शिवजी महाराज राजा जी पर यह ताकीद करने लगे कि ,, राजन् त्यज बालशास्त्रिणः संसर्गम् ,, यह सुन राजा साहब को सुख के स्थान में विषाद खड़ा हो गया क्योंकि उनको तो इस बाक्य पर भरोसा था कि ,, शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ,, दिन रात चैन नहीं कभी शिवजी बोलें कभी बोलें ही नहीं जब नाराज़ हो जायं तब बहुत सी खुशामद सिद्धजी करें तब यह आवाज़ आवें कि ,, राजन्त्वमधमोसि न श्रणोषि हितं वचः - वेद्म्यहं तव मानसम् - शुद्धो भवत्यजका पत्यम् - अनेनैव विग्रहेण मल्लोकं प्राप्स्यसि - नोचेन्नाशमेष्यसि - शिवजी कहते हैं कि बालशास्त्री को छोड़ दे जो ऐसा करता हूं तो अपकीर्ति और नहीं करता हूं तो आपत्ति इस धर्म संकष्ट में फसे हुए राजा साहब पर एक दिन सिद्ध जी का यह सब भेद खुलही गया कि फ़लां २ मनुष्यों का यह सब फ़रेब है उन्हों ने मैदान के उस अंधेरे दालान के अंदर से एक सुरंग खोद कर मंदिर के नीचे उसे लाकर एक कल शिवजी के नीचे जमाई है और उसी ठौर से एक ज़ीना भीतर ही भीतर गुम्मज़ में पहुंचा दिया है दोनों ठौर दो आदमी बैठ कर यह सब फ़रेब करते हैं अंत को संग लेजाकर वह सब मार्ग दिखा दिया चट सब पकड़ गये और भेद को छोड़ सबको कारागार हुआ ॥

कुछ हां हमको तो बड़ा खेद इन राजा साहब ऐसे सत्पुरुषों का है कि जो मनही

आदि लोग सब निकम्मे कहे जाते हैं- जो लोग अन्त तक इसी दशा में रहकर मर जाते- वे आत्मघातक कहाते और स्वकर्मानुसार नीच अर्थात् पश्वादि योनि पाते हैं[१] और जो अपने में किसी प्रकार की मनुष्यता उत्पन्न करके मरते वे फिर भी यथा कर्म मनुष्य योनि प्राप्त कर लेते हैं[२] और जो लोग जहां तक हो सके वहां तक परिश्रम करके अपनी मनुष्यता प्रगट कर के मरते वे अमर हो जाते हैं[३] इसी को "अन्ते मतिः सा गतिः वा अन्त मता सो गता" ऐसा कहते हैं। तीसरे प्रकार के मनुष्यों में से जो लोग जन्मादारभ्य मरण पर्यन्त यथाविधि-यथा शास्त्र; परम शुद्ध वैदिक मार्ग पर साबित क़दम रहते वे योगी ज्ञानी मुक्त सिद्ध वा परम हंस कहाते हैं[४] सो भाई आर्य गण इस चतुर्थ कोटि में साक्षात् श्रीमान् स्वामीजी महाराज

मन परमेश्वर प्रापक मार्ग की खोज में मछली के समान तड़फ़ते हैं परन्तु सत्य गुरु की प्राप्ति न होने के कारण बेचारे आप्त काम नहीं होने पाते हैं जगदीश्वर तूने जिस प्रकार सत्योपदेष्टा श्रीमान् स्वामीजी महाराज को महा राना साहब उदयपुर व महाराजा साहब इन्दौर तथा राजा साहब मसूदा आदि से मिला कर उनका कल्याण कराया उसी प्रकार इन पर भी अपनी कृपा दृष्टि करके शीघ्र इनको स्वामीजी वा उनके ग्रन्थों से मिलाप करा जिसे ऊपर लिखे सब स्वार्थी शास्त्री पंडित आदि वधिकों के पास रूट पर इन का गला छूटे और ये लोग जो चित्त से चाहते हैं वह इनको आनन्द पूर्वक प्राप्त हो जाय और इनके हाथ में अनन्त मनुष्यों का हित हो ॥

की परम सुलक्ष भव्य और दिव्य मूर्ति है। इनके परम श्लाघ्य गुणों को जानना और मानना कोई सामान्य बात नहीं है। इस देश में सब २४ किरोड़ मनुष्य अभी थोड़े दिन हुए तब गिने गये हैं उनमें से कम से कम २३ किरोड़ मनुष्यों को तो प्रथम ही दर्जे में जानों। बाक़ी रहे १ किरोड़ उनमें से थोड़ों को छोड़ और सबको दूसरे दर्जे में मानों। और जिस क़दर छोड़ चुके हो उनको तीसरे दर्जे में ले आओ और उन्हीं को श्रीमान् के कुछ गुणों को जानकार समझो॥

सिद्धान्त यह है कि महान् भाग्योदय होय तब सकल जगत् पावन श्रीमान् के सदुपदेशों पर किसी को श्रद्धा वा विश्वास होय। फ़ारसी कहावत है कि "क़दरे न्यामत बाद ज़वाल" निश्चय जानिये कि ठीक ऐसाही हाल होगा अर्थात् एक दिन ऐसा आवेगा कि उस समय के लोग श्रीमान् के लिये इतना शोक करेंगे कि जिसका वारापार न होगा उसी प्रकार प्रस्तुत काल के निकम्मे लोगों की निन्दा करते २ भी वे लोग न अघावेंगे। इसी लिये वारं वार कहा जाता है कि भाई आर्यगण नेक चेतो और श्रीमान् के अनन्त अनुपम अतुल अमल अचल और अनर्ह गुणों में हो सके वहां तक अनुराग करो- आप सुधरो और अपनी सन्तति तथा देश को भी विपत्ति से उवारो। बस यही उपदेश सबको श्रीमान् का है सोई प्रार्थना मेरी और कर्तव्य सब आर्य समाजों का है॥

आर्यगण अब स्थालान्तर में श्रीमान् सकल विद्या निधान स्वामी जी महाराज के विषय में कौन लोग यहां से यूरुप तक

कैसा क्या विचार करते हैं उसका थोड़ा सा उदाहरण आपको दिखला कर अपने इस ग्रन्थ की परिपूर्ति करता हूं येसब लेख बड़े२ प्रसिद्ध, विद्वान और आप्त पुरुषों के हैं

अथ प्रमाणाष्टकम्

हरिश्चन्द्रचन्द्रिका मास मार्गशीर्ष

स्थान नाथद्वार राज्य उदयपुर।

(१) श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का स्वागत देश मेवाड़ ये स्वामीजी हम हिन्दुओं के पूरे हितेच्छु हैं क्योंकि हमारे मुख्य प्रमाण भूत वेदों को सर्वार्थ चिन्तामणि मान कर जैसाकि चाहिये वैसे सर्व काल उसकी मान्यता की वृद्धि के लिये उद्योग करते ही रहते हैं और हिन्दु पशुओं को स्थान२ में यथा शक्ति यथा ज्ञान सदुपदेश भी करते फिरते हैं यह उनकी परम प्रशंसनीय कृत्य है अतः ऐसे सत्पुरुष श्रेष्ठ वान्धव का स्वागत करना हम लोगों को अवश्य प्राप्त है क्योंकि उनका पधारना इस मेवाड़ देश में सांप्रत हुआ है यद्यपि कतिपय बिषयों में अल्प२ कारणों से हमारा और उनका एक मत्य नहीं है तथापि बहुत से विषय ऐसे हैं कि जिनमें एक मत्य भी तो हैं और सर्व विषय में एक मत्य हो जाना सांप्रत इस जगत् में बन्ध्यापुत्र के सदृश असम्भवित ही भासता है क्योंकि पिता पुत्र स्त्री पुरुष भाई बन्धु इष्टमित्र इन में भी जब सर्वांश में एक मत्य कहीं भी हो ऐसा नहीं कह सकते तब अन्यत्र कहां उपलब्ध हो सक्ता है। संक्षेप से इनके और हमारे मत के ऐक्य और अनैक्य का विशेष जैसे

कि आज तक समझा हुआ है इसके अनुसार लिखते हैं इस पर से और लोग भी विचार करलेवें कि ऐक्य विशेष अंश है वा अनैक्य विशेष अंश है ऐक्य अंश— ईश्वर को मानते हैं १ वेद को परम प्रमाणिक मानते हैं २ और स्मार्त कर्मों का अनुष्ठान करना आवश्यक मानते हैं ३ पठन पाठन क्रम सूत्रादि मूल ग्रन्थों का युक्त है ऐसा मानते हैं ४ यावत् विधि निषेध की उपपत्ति युक्ति से सिद्धि समझते हैं ५ पदार्थ विद्या आदि जो देशांतरीय लोगों ने विषय कल्पना किये हैं उनकी भी सिद्धता वेद मूलक ही मानते हैं ६ स्मृत्यादिकों का प्रमाण भी वेद मूलक ही स्वीकार करते हैं ७ वर्णजाति विवेक मानते हैं ८ नियोग विधि को छोड़ विधवा विवाह को अशास्त्रीय समझते हैं ९ अनैक्य अंश— वेद में विहित नहीं इसी लिये मूर्ति पूजा आदि व्यवहार ठीक नहीं ऐसा मानते हैं १ जीवते हुए ही पितृ पिता महादिकों का श्राद्ध करना मानते हैं २ इत्यादि ये जो ऊपर ऐक्य और अनैक्य विषय के सिद्धान्त दिखलाए एतन्मूलक ही अनेक स्थल में ऐक्य मत्य और थोड़े स्थल में अनैक्य सिद्ध होता है इसको निष्पक्षपाति लोग विचार कर देखें कि थोड़े विषयों के लिये हम लोगों से स्वामीजी से विरोध है यह कहां से सिद्ध होगा और जो लोग विरोध है ऐसा समझते हैं उन्हें इतना भी ज्ञान कहां कि स्वामीजी के और अन्य विद्वानों के शास्त्रार्थ को समझ भी सकें मूर्ख लोगों को इतनाही उत्साह रहता है कि शास्त्रार्थ हो अपने भी देखें और शास्त्रार्थ होने के पीछे पूछते भी हैं कि कौन हारा और कौन जीता

क्योंकि संस्कृत का अक्षर भी तो नहीं जानते लीजिये इस प-
र से इन मूढ़ उत्साहियों को कितना ज्ञान होगा यह स्पष्ट है
कि नहीं अस्तु इन मूढ़ों को तो क्या कहें परंतु जो अपने को वि-
द्वान् लगाते हैं वे भी अपना और खेल देखने वालों का खेल चा-
र विद्वानों को और स्वामीजी को दिखलाते हैं, ये लोग क्या कर-
ते हैं कि रात दिन सिर फ़ोड़ २ कर कहीं वेद में से ढूंढ ढांढ मू-
र्ति पूजा का प्रमाण अपनी समझ के अनुसार निकाल कर स्वा
मीजी को बतलाते हैं और कहते हैं कि देखो वेद में मूर्ति पूजा
लिखी है । स्वामीजी भी ऐसे लोगों के पूरे गुरू हैं कि उन प्रमा-
णों को देखते ही देव का अर्थ विद्वान् मूर्ति का अर्थ स्वरूप प्र-
तिमा का अर्थ तोल पूजा का अर्थ प्रशंसा वा सत्कार इत्यादि
बतला कर उनका रात दिन का सिर फ़ोड़ना एक क्षण में व्यर्थ
कर देते हैं उस पर वे महाप्राय दाव पेच में अज्ञात मल्लों के से-
सी चिकोटों से वा दांत से काटने के सदृश स्वामीजी से उलझ
पड़ते हैं तब स्वामीजी तो स्वामीजी ही हैं वे भी कब छोड़ें ब-
ना कर ही छोड़ते हैं । सारांश शास्त्रार्थ तो शास्त्रार्थ की ही री-
ति से हो सकता है परंतु इसका मूर्खों को स्वाद ही क्या आवे मेरी
दृष्टि से तो जो इस जगत् में दीखते हैं सो सब वाद विवाद क-
रा कर विरोध को बढ़ाने वाले ही दीखते हैं कोई ऐसे नहीं दीख-
ते कि सबों से ऐक्य मत्य करें और करावें यद्यपि मैंने भी स्वामी
जी पर कटाक्ष रख कर कवि बचन सुधा में बहुत सा विषय लि-
ख मारा है और उससे फ़ल्म यही समझ रक्खा है कि बड़े से
लड़ने में बुद्धि बढ़ती है अथवा जो स्वामीजी को बड़े २

उद्योग करने में इष्ट फल हैं वेभी सब फल मेरे लिये सही अब प्रार्थना करता हूं कि स्वामीजी अपनी क्षमा शीलता के अनुरूप मेरे लेख को बिचार मुझको बुला कर दर्शन देवें

पाठकगण मैं संस्कृत विद्या और संस्कृत भाषण और समग्र वेदावलोकन और वक्तृता और निस्पृहता आदि में स्वामीजी के समान् नहीं हूं अर्थात् स्वामीजी मुझ से सर्वथा बड़े हैं अतएव मुझे माननीय हैं ‹‹ किमतः परंतेषां स्वागत मेव कार्यं›› यही सिद्धान्त है। ‹‹ तुष्यन्तु सुजना बुध्वा विशेषान् मदुदीरितान्॥ अबोधेन हंसतो मांतोषमेष्यति दुर्जनाः॥१॥ वाचक लोगों से भी प्रार्थना है कि इस लेख में जितना कुछ लिखा है जहां तक मेरे समझ की दौड़ है सत्यही है यह लेख मेरे हृदय का ठीक २ चित्रही है ऐसा समझिये परन्तु इस चित्र के देखने के लिये उसी गुह्य दर्पक का की अपेक्षा है जिस हृदय से दूसरे का हृदय जाना जाता है अलं किं बहुनेतिशम्

मुकाम बांकीपुर पटना इलाक़ासूबे बिहार

(२) सनिद पत्रिका

पाखण्ड तिमिर नाशक चन्द्रिका नाम की पुस्तक के देखने से मालूम हुआ कि आर्य्यावर्त में दयानन्द सरस्वती स्वामी ऐसे हैं कि जिनसे अनेक देशीय लोग इस देश का गौरव करते हैं इति

मुन्शी दुर्गा प्रसाद स्थान दानापुर

(३) आगे तो हो गये हैं बहुत से मुनी व ऋषी॥
पर अब विदित हैं स्वामी दयानन्द सरस्वती॥

हैं चारों वेद बसते जिनकी ज़बान पर। और छः हो अंग वेद के हैं जिन के ध्यान पर॥ उज्ज्वल है ज्ञान जिनका शास्त्र औ पुरान पर। मारे हैं तर्क जिन ने बाइबल कुरान पर॥ हिंदुए वो शास्त्री भी किये उनसे शास्त्रबाज़ी। पादरी भी आजिज़ हैं मौलवी और क़ाज़ी॥ कर डाली खंड खंड सब धूर्तों की धूर्त बाज़ी। पाखंडियों की खोलदी सारी जाल साज़ी॥ फ़ाज़िल हैं उनसे राज़ी अच्छे बयान पर। आक़िल हैं धन्य कहते उनके ज्ञान पर॥ जाहिल हैं मरते अपने मिथ्या गुमान पर। ऐसा दिया है छापा वेदों को जान कर॥ अब कोई कीर्ति मान न उनके समान है। अगले महात्मों का नामी निशान है। हर्षो बिषाद दोनों समान कर रक्खा है। बूझो तो यारो दिल में कैसा मज़ा चक्खा है॥ पाजी से बत्तर हैंगे अब के हरामज़ादे। जो ऐसे एकता आलिम को दुर्बचन सुनादे॥ आगे कहे या पीछे ख़ुद कह दे या कहादे। है काम यह असल का मुझ को कोई बतादे॥ धन्य धन्य धन्य स्वामी नामी व गामी सुपथ के। सुयश के होगे कर्ता हर्ता हो तुम असत् के॥ सन्मार्ग के हो राही न्याई हो सत् असत् के। दाही हो तुम अचों के थाही सुमत कुमत के॥

जैसे कि व्यास गौतम भृगु बृहस्पति।
तैसे विदित हैं जग में दयानन्द सरस्वति।

(४) मुनशी इंद्रमणिजी स्थान मुरादाबाद

गई पोप लोगों की क्या बुद्धिमारी । कहें अपने शिष्टों को दुष्क कर्म चारी ॥ कहें अज हुए अपनी पुत्री पै मोहित । हुई सर्वथा बुद्धि जिनकी तिरोहित ॥ कथा विष्णु वृंदा की जो मूर्ख गावें । कहो ऐसे पापी नरक क्यों न जावें ॥ लिखी शिव कि निन्दा पुराणों में जैसी । हमें मुख से कह भी नहीं योग्य वैसी ॥ कहें इन्द्र गौतम की जो कुछ कहानी । न क्यों बुद्धिमानों का हो उस से ग्लानी ॥ कहें कृष्ण को चौर और जार कर्मी । रहे वेदरत जो सदा पूर्ण धर्मी ॥ बृहस्पति को दोष मिथ्या लगाया । यह क्या पोपजी के हृदय में समाया ॥ किया व्याह गंधर्व ऋषि वर पराशार । लगावें उन्हें दोष व्यभचार पामर ॥ हुए वेद विपरीत जो कर्म जारी । सुनो सज्जनो सत असत् लो विचारी ॥ प्रगट मूर्ति पूजन हुआ धर्म जब से । हुआ ध्यान जगदीश का नष्ट तब से ॥ बढ़े हा बहुत धर्म हर्ता कुकर्मी । डरें ना नरक से टके के हैं जो मर्मी ॥ जगत् में कठिन जाल ऐसा बिछाया । जो फंदे में आया निकलने न पाया ॥ हुए भूत प्रेतों के विश्वास कैसे । डरें रज्जु को जान कर सर्प जैसे ॥ लगे स्याने दीवानों को घर बुलाने । लगे सीस निज हर किसी को झुकाने ॥ हुए आर्य हा शोख सहो के आची । हुआ धर्म का भानु छाई कुराची ॥ लगे पूजने पीर गूगा अनारी । हुई धर्म की नष्ट मर्याद सारी ॥ असत् धर्म बहु भांति बृद्धि निहारी । हुआ सज्जनों के हृदय दुःख भारी ॥ लखी धर्म की जब सभी भांति हानी । किया धर्म रक्षा को उत्साह ज्ञानी ॥ सुसद्धर्म भानु यथावत प्रकाशे । दयानन्द स्वामी सकल दुःख नाशे ॥

यथा योग्य की सत् असत् की परीक्षा। हुई जिनकी पातालपर्य्यन्तदीक्षा॥ किया काशी आदि में शास्त्रार्थ भारी। हुए शांत पृथ पोप दुष्कर्म चारी॥ दया और आनन्द है मूल जिनके। करो धर्म जिज्ञासुपाद ग्रहण तिनके॥

(५) मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी स्थान लुधियाना मुल्क पंजाब

किताब कुल्लियात अलखधारी मक़ाला दोयम सफ़ा ७१ में लिखते हैं कि मुभसा दहेरिया स्वामी दयानन्द की तीज़ीम करता है अंगरेज़ और मुसलमान भी - जाहिलों को क्या कहा जावे जो ख़ान्दान का गुरू करते हैं - उनकी इज़्ज़त कुत्तों के बराबर है॥

(६) मुक़ाम कानपुर

महाशय नमस्ते आप सुना होगा कि इधर कुछ दिनों से यहां के समाज में गड़बड़ हो गई कारण यह हुआ कि पंडित गिरधरानन्द जी जैसे कुछ विद्वान् और वक्ता हैं सो सब आप को प्रकाशित है उनका सन्मान समाज में विशेष देख मंत्रीजी से न देखा गया और वे मन मैले काम कर उठे होते २ पंडित जी समाज छोड़ बैठे बस यह समाज भी फ़र्रुख़ाबाद कासा हो गया - अब कुछ दिन से श्री स्वामीजी महाराज की प्रेरणा से यहां के आर्य लोग गो रक्षणी सभा में बड़ा उत्साह कर रहे हैं १३ हज़ार के ऊपर रुपया जमा हो चुका परन्तु सब की

इच्छा यह है कि जब तक लाख रुपया एकत्र न होले इस सभाका काम छेड़ा न जावे सो इतना रुपया जमा होजाना श्रीजी महाराज की कृपा से कुछ बड़ी बात नहीं परंतु मुझे निश्चय है कि जो समाज वाले समचित्त रहें तो यह सिद्धि जल्द हो जावेगी — यदि आपको गो रक्षा के चंदे का कुछ हाल इधर उधर का जाना गया हो तो कृपा कर लिखना बहुत दिन हुए तब सुना था कि आगरे में हज़ार सात तक रुपया स्वामीजी महाराज के सामने दाखिल हो चुका था अब तो विशेष हो गया होगा — अलीगढ़ आदि नगरों में भी प्रबन्ध हो रहा था आप के समाज में भी प्रबन्ध हुआ होगा इति, आपका आज्ञा कारी गिरधारी तारीख ४ अगस्त सन् १८८१ ॥

(७) राजधानी मसूदा ज़िला अजमेर

मान्यवर नमस्ते आपने सुना होगा कि राजा साहब बहादुर सिंह जी श्रीमान् स्वामीजी महाराज के चरणों में अति प्रीति रखते हैं उनकी आज्ञानुसार बड़ा भारी होमकुण्ड बनाया है होम के लिये बड़े २ रजत पात्र श्रीजी ने अपने सामने बनवा दिये हैं राजा साहब दोनों काल प्रति दिन सेवा में उपस्थित रहते हैं और भी बहुत से उपकारक उपदेशों पर चलते हैं जैसे आपस में मेल खूब बढ़ाना मुहन्त के बैर छोड़ देना कसरत करना शस्त्र विद्या में निपुण होना पाठशाला बिठलाना. वृक्ष लगाना धरती को उपजाऊ करना बाग़ात को निर्मल रखना प्रजा को पुत्रवत् पालना सत्य विद्या में श्रद्धा करना पक्षपात से बैर -

न्याय से प्रीति करना आप्राज्ञों और सन्मार्ग पर चलने वालों की यथेच्छ सहायता करना आदि आदि – यथा कहूं राजा साहब तो गुणागर हैं ही हैं परन्तु उनके मंत्री दुबे छगनलाल जी भी बहुत ही प्रशंसा योग्य पुरुष हैं ईश्वर इसी प्रकार की बुद्धि इस देश के सब राज गणों और उनके मंत्री आदि काम चारियों को देवे इति॥ आपका वही सेवक ॥

जब श्री जी महाराज यहां से चलने को हुए तब राजा साहब ने ५००) वेद भाष्य की सहायता के अर्थ भेट किये और खुद आप को तथा अपने अधिकारियों को वेद भाष्य का ग्राहक बनाया सैकड़ों जिल्दें पंच महा यज्ञ आदि की भी राजधानी वालों ने खरीदीं॥ ३५ जैनी लोगों ने अपना जैन मत छोड़ वैदिक मत अति आनन्द पूर्वक श्रीमान् के सन्मुख स्वीकार किया ऐसी खबर बहुत से भारत मित्र आदि समाचार पत्रों के सम्पादकों ने लिख श्रीमान को बहुविध धन्य वाद दिया है - कहने को यह राज्य बहुत छोटा है परंतु काम राजा साहब के देखिये आर्य गण कितने सुख भद हैं ईश्वर परमायु करे इसी प्रकार जब श्रीमान् स्वामी जी महाराज राजधानी मसूदा से चलकर कुछ दिन पीछे स्थान चीतोड़ राज्य उदयपुर आकर बिराजमान हुए तब श्री मन्महाराजाधिराज महीमहेन्द्र या वदार्य कुल दिवा कर श्रीमदेकलिंगावतार विविध विरदावलि वंदित श्री १०८ श्री मन्महाराणा सज्जन सिंह जी उदयपुर देश मेवाड़ के अधीश ने अपनी कीर्ति के अनुसार श्रीमान् का बड़ा ही आदर और सत्कार किया ~~अनेक दिन से आप श्रीमान की सेवा में उपस्थित होकर~~

~~उनके स्वास्थ्य को अति विनय से पूछने और उपदेशों के सुनने से यद्यपि उन दिनों श्रीमान् महाराज साहब बहादुर को बड़े लाट साहब बहादुर की उपस्थिति होने के कारण बहुत कम अवकाश था तथापि किसी दिन उक्त नियम में अंतर नहीं हुआ~~ अंत में पंच शत मुद्रा भेट कीं और नीचे लिखे पुरुषों सहित वेद भाष्य के आरम्भ से ग्राहक गण शिरोमणि हुए इति॥

पुरोहित पद्मनाथजी, राजा रणा श्री ५ फ़तेसिंहजी, बाबू भवानीसिंहजी नेटिवडा०, श्रीयुत् अर्जुन सिंहजी आसीन, पण्डित मोहनलालजी पंड्या, पंडित ब्रजनाथजी गोतम

---

(८) मुक़ाम लंदन नगर

आर्यगण। अख़बार अथींम में जोकि लंदन नगर में छपता है देखिये श्रीमान् पूर्ण प्रतापी स्वामीजी महाराज की कितनी प्रशंसा लिखी है॥ उसका आशय यहां सब लोगों पर प्रकाशित होने के लिये लिखा जाता है॥ विदित होकि प्रथम उस अख़बार में बहुत कुछ तोरीफ़ संस्कृत विद्या की लिखी फिर लिखा कि इस अख़बार के देखने वालों को याद होगा कि एक बर्ष की अवधि हुई होगी तब इस लंदन नगर में श्यामजी कृष्ण वर्मा के पधारने की ख़बर छापी गई थी वे संस्कृत में बड़ी भारी योग्यता रखते हैं उनकी विद्या अथाह दर्जे पर है इस लिये लंदन के विद्वानों ने उनको उचित जान पण्डित नामकी पदवी समर्पित

की है— इस तरुण पुरुष ने एक ऐसे परमसुप्रसिद्ध और पूर्ण विद्वान् से विद्या प्राप्त की है जो केवल प्राचीन संस्कृत विद्या ही नहीं जानते किन्तु उन्होंने सारे आर्य्यावर्त्त के मतवादियों में हिलचल डाल दी है और इस प्रकार मूर्ति पूजनादिक विषयों का खंडन करते हैं कि उनके सन्मुख कोई वहां का विद्वान् और पुजारी आदि ठहर नहीं सकता वे परमेश्वर को अद्वितीय निर्विकार और निराकार जानते हैं उनका मत ठीक वेदानुकूल है इस आर्य्यावर्त्त की सुधार और उन्नति करने वाले सत् पुरुष का नाम स्वामी दयानन्द सरस्वती है इनके वक्तृत्व का माधुर्य और लेख के गांभीर्यका मैं खुद पूरा २ साक्षी हूं क्योंकि जब मैं बंबई में था उस समय मैंने प्रशंसित स्वामीजी को आर्य्य समाज के आमजल्सों में धर्म विषयक व्याख्यान देते देखा और सुना है और उनका एक संस्कृत का पत्र (जो उन्होंने अपने विद्यार्थी श्यामजी कृष्ण वर्मा को कि जो इन दिनों अक्सफोर्ड कालिज के मेम्बर हैं लिखा था) मैंने देखा है और अब मैं उस पत्रका तर्जुमा अर्थात् अनुवाद उक्त पंडितजी की आज्ञा लेकर छापता हूं वास्तव्य में यह पत्र श्लोक वद्ध था ॥

उक्त पत्र का अनुवाद

नमस्ते— विदित होकि यद्यापि तुम बावजूद साबित क़दमी तरीक़ह वेद और अपनी विद्या के स्तुति योग्य हो परन्तु परम पश्चात्ताप की बात है कि तुमने अपने पत्र द्वारा बहुकाल से मुझ को आनंदित नहीं किया अब मैं आशा करता हूं कि तुम अपने कुशल और नीचे लिखे विषयों के जवाब से मुझ को बहुशीघ्र

प्रमुदित करोगे — इङ्गलिस्तान के रहने वाले लोग किस प्रकार के हैं + और उनकी प्रकृति और ढंग व चलन कैसे हैं - वहां की पृथ्वी और वायु जल कैसा है और सामान खाने पीने आदि आराम का वहां किस प्रकार मिलता है - जब से तुम यहां से गये हो तब से तुम्हारी शारीरिक आरोग्यता की क्या दशा है और इङ्गलिस्तान में तुम्हारी खास इच्छा पूरी भी होती है वा क्या - वहां के लोग किस प्रकार प्रेम रखते हैं और क्या २ पुस्तकें तुमसे पढ़ते हैं - तुम्हारी मासिक प्राप्ति और व्यय क्या है और तुम्हारे अधीत ग्रंथों के पूर्वा पर अवलोकन करने व विचारने और दूसरों के पढ़ाने का समय क्या २ नियत है — इसका क्या कारण है कि धर्मोपदेश करने में आर्यावर्त के अनुरूप अभी तक तुम्हारी प्रसिद्धि इङ्गलिस्तान में नहीं फैली — कदाचित् मेरी दूरस्थिति होने के कारण मुझ को तुम्हारी प्रसिद्धि के समाचार न मिलते हों अथवा इस काम के करने का तुम को अवकाश न मिलता हो - यदि इस का कारण द्वितीय है तो अब मेरी प्रबल इच्छा यह है कि जिस वक्त तुम पढ़ाने से निश्चिन्त हुआ करो उस समय वैदिक मत की उन्नति में जिस प्रकार हो वहां खूब यत्न करो पश्चात् यहां चले आओ क्योंकि ऐसे सर्वोत्तम और सर्वोपकारी काम में अपनी प्रसिद्धि करना रुपया पैदा करने से विशेषतर उत्तम है - हमारे मित्र प्रोफ़ेसर मोनियर विलियम्स और मोक्षमूलर साहबों की वेद और शास्त्रों के विषय में तथा वहां के और २ विद्वानों की मेरे वेद भाष्य पर कैसी क्या संमति

अर्थात् गय हैं – क्या यह सत्य है कि थ्यूसूफ़िकिल सुसेटी ने कोई वेद मत की शाखा लंदन में स्थापित करदी है – कभी तुमने भरत खण्ड की राज राजेश्वरी से भी सन्मान परिचय प्राप्त किया है और कभी पारलीमेंट में भी गये हो – परम प्रीति पूर्वक इन सब प्रश्नों का उत्तर अति शीघ्र भेजदो – और वे भी बातें लिखो जिनको तुम अपने निकट लिखने के योग्य समझो – प्रस्तुत मेरा इतना ही लेख बहुत है क्योंकि बुद्धि वानों को संकेत मात्र अपेक्षित होता है न विस्तार इति – तिथि ज्येष्ठ शुक्ला ७ मंगलवार सम्वत् १९२७ विक्रमी

इसके पीछे अख़बार वाले ने अपनी यह राय लिखी है कि यह ऊपर की चिट्ठी निहायत साफ़ पाक संस्कृत में लिखी हुई थी – यों तो बहुत से आर्य्यावर्त के विद्वानों से मुझे काम पड़ता है और कश्मीर व त्रावणकोर वगैरः के बड़े २ नामी पंडितों से मेरी लिखा पढ़ी जारी है परन्तु यह चिट्ठी सर्वोपरि एक निमूना है और इसलिये छापी गई है कि यूरोप निवासियों को आर्यों की योग्यता और कृति तथा राजभक्ति प्रकाशित हो जाय॥

इति प्रमाणाष्टकम्

कहिये आर्य्य गण कैसा प्रज्वलित निर्मल और निर्विवाद यह प्रमाणाष्टक है जिनको परमात्मा ने थोड़ी सी बुद्धि अर्पण की होगी वे इस ग्रन्थ को देख सदैव को निर्विकार हो जावेंगे रहे बुद्धि हीन सो उनके लिये तो पुराने मनुष्य प्रथमही निर्धार कर गए हैं जैसे "मन्येदुर्जन चित्त वश्य करणे धातापि

भग्नोद्यमः॥ अर्थात् मूरख हृदै न चेत जो गुरु मिलें विरं-
चि सम॥ जब ऐसों के सुधार के लिये ब्रह्मा सरीखे हार मान बै-
ठे तो आगे और कौन उनसे अधिक सामर्थ्य लेकर इनके लि-
ये आवेगा बुद्धिमानों को उचित है कि ऐसों को उनकी प्रा-
रब्ध के हवाले करके आपको जो कर्त्तव्य है वह करें और
कदापि अपना अमौल्य समय वृथा न गमावें जहां तक
हो सके वहां तक विद्योपार्जन करके अपना और अपने
देश का भला करें देखो यही काम श्रीमान् स्वामीजी म-
हाराज ने किया है स्वामीजी क्या जितने ऋषि मुनि और
राम कृष्णादिक प्रशंसनीय सत्पुरुष हुए हैं वे सब इसी
एक मार्ग के ग्रहण से हुए हैं और जो होंगे वे भी इसी मा-
र्ग से होंगे इसी को शुद्ध सनातन वैदिक मार्ग कहते हैं।
कभी कोई भूल कर भी आज से पीछे ऐसे वैसे लोगों की बातों
का विश्वास न करें और याद रक्खें कि इन सब लोगों ने जि-
तना धर्म के नाम का जाल फैलाया है वह सब तुम्हारे ही
फाँसने को फैलाया है इनके उस जाल के काटने और तुम्हें
उससे मुक्त करने को श्रीमान् उत्पन्न हुए हैं यह देख ऐसे लो-
ग अति दुःखित हैं तभी ये निःसंशय ने होकर शुद्ध मार्गा व-
लम्बियों को कलंकित करते हैं। जो समझना चाहो तो इन
को इसी एक बात से समझ लो जैसे ऊपर निर्णय हो चुका
है कि इनका और स्वामीजी के कथन का अंतर केवल यह
है कि स्वामीजी मूर्ति पूजा जिसको कि जड़ पुराण है वेद वि-
रुद्ध और ये लोग उसको वेद विहित बताते हैं सो यह अंतर

वात्सल्य में ऐसा नहीं कि जिस पर इतना विरोध रहे परन्तु मुसल्मानों का वैदिक मत से भरती आकाश कासा अन्तर है सो देखा जाता है कि उनकी मियांमदार आदि अनेक नाम की क़बरें अच्छे२ वाजिपेयी और बड़े२ पंडित लोग तक जा जा कर पूजते हैं। जो कहेंगे कि क़बरें और मियां मदार की भी पूजा तुम्हारे वेद और पुराणों में लिखी है तो कहेंगे कि कहीं नहीं लिखी फिर क्या कारण है कि जिनका तुम्हारा कुछ भी मेल नहीं है उनकी क़बरें बड़ी ख़ुशी से पूजो और किञ्चित अंतर वालों को इतना बुरा कहो — बस साबित हो जायगा कि सरासर खिसयानपन और अन्याय की बातें हैं कुछ लोक में मोई भोला होता है परन्तु आर्य्य धर्म भी कठिन है उनका वचन है ‟ तथापि खलु खिद्यते चेतः ” अर्थात् अपनी क्या हानि जो पराये अंगूर कोई गधा चरजाय — पर क्या कीजिये गैर मुनासिब देख रहा ही नहीं जाता यदि उनसे कुछ कहने को जाओ तो उपकार के पलटे अपकार खड़ा होता है सीधी गाली सुनना पड़ती हैं वहां यह विचार कर लिया जाता है कि इनके पास यही धन है सो देते हैं दूसरे आर्य्यों की शिक्षा स्मरण हो आती है ‟ निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ॥ अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥१॥ अर्थात् कोई भला कहो वा बुरा हानि हो वा लाभ मरें वा जियें हम अपनी लकीर के बाहर पैर नहीं धर सकते — कहो जिनका ऐसा सर्वत्र सुयश और ऐसी उत्तमोत्तम

शिक्षा और अखंड मताप उनकी प्रशंसा यदि कोई मुझसा तुच्छ करना चाहो तो कहां लो करे— इस ग्रन्थकार ने बहुधा छोटे मुंह बड़ा ग्रास की कहावत कर दिखाई है तथापि उसको विद्वज्जनों की कृपादृष्टि रहने ही की आशा है क्योंकि वे लोग अच्छे प्रकार जानते हैं कि सच्ची का तात्कालिक स्वाद कड़वा ही होता है। जिस परमात्मा की कृपा से यह ग्रंथ यहां तक निर्विघ्न आ पहुंचा उसकी सेवा में अनन्त धन्यवाद करके आशा करता हूं कि वह इस भरत खंड पर अपनी पूर्ण दृष्टि से निहारे। धन्य हैं वे लोग जिन की अभिरुचि और सहायता से यह ग्रंथ आविर्भूत हुआ आगे को वे लोग भी धन्यवाद के योग्य होंगे जो इस का लालन पालन करेंगे ॥ विज्ञेषु किम्बहुने निशाम्

अथ विनयाष्टकम् ॥

श्रीस्पर्शाना चक्षुरस्त्रा गता गतीनां तमस्त मच्छन्न रुचां मती नाम
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यती नाम् ॥१॥

अर्थात् शास्त्रों के ज्ञान में मवृत्ति रहित तमो गुण रूप अन्धकार से आच्छादित बुद्धियों को विज्ञान देने के हेतु श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥१॥

परापर वेदन वाक्पतीनां सद्वेद वादान्तय शास्त नी नाम। श्री
मद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यती नाम् ॥२॥

अर्थात् परा कहे से वेदत्रयी और अपरा ब्रह्म विद्या अर्थात्

उपनिषद्भाग के जानने में बद्धस्पर्द्धि और समीचीन वेद विषयक वाद से प्राप्त किया है यश समूह जिन्होंने ऐसे श्रीमानदयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥२॥

वैशेषिका शेषित हृद्रतीना सपाद शोषाशय सादृतीनाम् ॥
श्रीमद्दया नन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम्॥३॥

अर्थात् वैशेषिक अर्थात कणाद मतावलम्बियों के समग्र आशय के जानने में प्रीति युक्त और सम्पूर्ण शेष अर्थात पतञ्जलि भाष्यकार के हार्द ज्ञान में सादर श्रीमान दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ३

साङ्ख्यज्ञ सङ्ख्या विदुषां नतीनां भुवां भवे ऽ भव्यभिदां सतीनाम्
श्रीमद्दया नन्द सरस्वतीनां जयन्तुवाचो नितरां यती नाम् ॥४॥

अर्थात सांख्य अर्थात् कपिल मुनि प्रणीत प्रकृति पुरुष विवेचक शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों के नमस्कार की पृथ्वी रूप अर्थात साङ्ख्य शास्त्रियों के नमस्कार करने को योग्य और दुराचार के नाशक श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥४॥

पाखण्डि पाखण्ड तमो धुनीनां सुधर्म्म रक्षा विलसद्युतीनाम्
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥५॥

अर्थात पाखण्डियों के पाखण्ड रूप अन्धकार के दूर करने वाले और वेद विहित सुधर्म की रक्षा करके शोभायमान है दीप्ति जिनकी ऐसे श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥५॥

मूर्त्यर्च का नामुरु संहतीना मबोध विध्वंसन भारती नाम् ॥
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥६॥

अर्थात् मूर्ति पूजक लोगोंके बहुत समूहों के अज्ञान के नाश करने में सरस्वती रूप श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥६॥

यथार्थ्य मुद्बोधयतां कृतीनां श्रुति स्मृतीनां महतां सृतीनाम्
श्रीमद्दया नन्द सर स्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥७॥

अर्थात् विद्वानों के बीच में महा पुरुषों के मार्ग भूत श्रुति स्मृतियों का याथार्थ्य प्रकट करने वाले श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज के वचन अतिशयकर के जयको प्राप्त हों ॥७॥

याचध्व मार्या अथ शाश्वतीनां स्थितिं समानां विषया रतीनाम ॥
श्रीमद्दया नन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यती नाम ॥८॥

अर्थात् हे आर्यो विषय से प्रीति रहित श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज की बहुत बर्ष तक इस संसार में स्थिति रहने की श्रीजगदीश्वर से आप सब लोग अंतः करण से प्रार्थना करो जिससे उनके वचन सार्वकाल जयको प्राप्त हों ॥८॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजका चार्य्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयाङ्के उपदेशाख्यः षष्ठो मयूखः॥ समाप्तोयम् द्वितीयाङ्कः मङ्गलानि भवन्तु

वसुरामांक चन्द्रेब्दे तपस्यस्य सिते दले ॥
दशम्यां चन्द्र वारे च ग्रन्थोयं पूर्णतांगतः ॥१॥

भवत्रिभव भवाया बाधितो द्बोधनाया गणित गुणि गणोयस्वाशय स्वाशयोयम् ॥
कलिपथ परि पन्थी भिक्षता मात्र शंसी सदय हृदय पद्मो धारणीयस्सदैव ॥२॥

विज्ञापन

इसके छापनेका किसी अन्यपुरुषको अधिकार नहीं जोकोई किताब मेरे हस्ताक्षर वा मुहर से रहित देखीजावे वह चोरी की समझ जोकोई मेरे पास पकड़ भेजेगा उसको ५) रु॰ पारितोषक दिया जावेगा और जो कोई इसकी वा नीचे लिखीहुई किताबों की इकट्ठी. बीस से अधिक जिल्दें खरीदेगा उसको चालीस जिल्दों तक साढ़े बारह रुपये सैकड़ा कमीशन दिया जावेगा और विशेष के खरीदार को फ़ी बीस जिल्द ढाई रुपया कमीशन विशेष मिलता जावेगा हद्द कमीशन बीस रुपये सैकड़ा होगी परन्तु ऊपर लिखे अनुसार कमीशन नक़द के खरीदार को मिलेगा न किसी एक दिन के भी उधार वाले को और नमूना चाहने वालों को प्रत्येक किताब की क़ीमत के टिकट डाक महसूल सहित भेज देने होंगे और इस विषयक किसीका वैरंग पत्र न लिया जावेगा ॥

१ राजा शिवप्रसाद कृत तिमिरनाशक तृतीय खंड का खंडन क़ीमत =) महसूल डाक)॥

२ श्रीयुत दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खंड क़ीमत ।) महसूल)॥

३ तथा तृतीय खंड क़ीमत फ़ी जिल्द १।) महसूल =)

४ श्रीजी महाराज की बड़ी तस्वीर फ़ोटूग्राफ़ की खिंची हुई ॥) व दूसरी खड़ी के ।) महसूल ~)

इन किताबों की दरख़्वास्त मुक़ाम फ़र्रुख़ाबाद में ब नाम ग्रन्थकार ... ना चाहिये ॥

विनायक मुकुन्दाख्यौ लक्ष्मी यौ यस्य द्वौ सुतौ ॥
मुद्रांकितं स कुरुते जानकी हरिजः कविः ॥ १ ॥